सूर्यवंश

कार्तिकेयपुर साम्राज्यं।

शिवम पाल सूर्यवंशी

BlueRose ONE.com
Stories Matter
NewDelhi • London

BLUEROSE PUBLISHERS
India | U.K.

Copyright © Shivam Pal Suryavanshi 2025

All rights reserved by author. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the prior permission of the author. Although every precaution has been taken to verify the accuracy of the information contained herein, the publisher assumes no responsibility for any errors or omissions. No liability is assumed for damages that may result from the use of information contained within.

BlueRose Publishers takes no responsibility for any damages, losses, or liabilities that may arise from the use or misuse of the information, products, or services provided in this publication.

BlueRose ONE.com
Stories Matter
NewDelhi • London

For permlganons requests or inquiries regarding this publication,
please contact:

BLUEROSE PUBLISHERS
www.BlueRoseONE.com
info@bluerosepublishers.com
+91 8882 898 898
+4407342408967

ISBN: 978-93-7018-726-9

Cover Design: Aman Sharma
Typesetting: Pooja Sharma

First Edition: May 2025

सूर्यवंशः कार्तिकेयपुर साम्राज्यं।

इक्ष्वाकुकुलजातानं वीराणां सत्यविदानाम्।

क्व सूर्यप्रभवो वंशः क्व चाल्पविषयामतिः ।।

में उस इक्ष्वाकु वंश में जन्मा हूं जिसमें अनेक वीर और सत्यवादी जन्म लिए है, इस सूर्यवंश की महिमा कहना वैसा ही है जैसे छोटी सी नाव लेके समुद्र में गोते लगाना। पूर्वजों के आशीर्वाद और प्रेरणा से मुझे यह ग्रन्थ लिखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। हमारे कुलदेव महादेव पुत्र व देव सेनापति भगवान कार्तिकेय को प्रणाम करता हु। मुझे गर्व है कि मैं ऐसे कुल में जन्मा हु जिसमें राजा मांधाता, दिलीप, रघु, भगवान श्री राम, कुश महाराज, सुमित्र, शालीवाहनदेव, ललितसुर देव, पद्मदेव व अभयपाल देव जैसे प्रतापी सम्राट हुए है। मुझे गर्व है कि मैं पूर्वजों की कीर्ति जो इंद्र के समान है उसको आप सभी तक पहुंचाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इस पुस्तक को लिखने का कारण वर्षों से दबे हुए स्वर्णिम इतिहास को पुनः उजागर करने का छोटा सा प्रयास है। कार्तिकेयपुर सूर्यवंशीयो के इतिहास का ज्यादा लेखन न होने के कारण इसकी सहस्त्र सूर्य जैसी कीर्ति अंधकार में जा रही थी, उस अंधकार को हटाना हमारा कर्त्तव्य व दायित्व है। मैं कार्तिकेयपुर –कत्यूरी राजवंश पर वर्षो से शोध कर रहा हु काफी मंथन के बाद मैने इसका स्वर्णिम इतिहास रूपी अमृत निकाला है जिसे, मैं आप के समक्ष प्रस्तुत कर रहा हु। आज कल क्षत्रिय

इतिहास को विकृत व नष्ट करने का घोर षड्यंत्र चल रहा है, क्षत्रियों के आदर्श व अस्तित्व को मिटाने की पुरजोर कोशिश चल रही है। ऐसी स्थिति मैं हमारा दायित्व बनता है कि पूर्वजों की गरिमा और इतिहास की रक्षा व संरक्षण किया जाए। क्षत्रियों के इतिहास के साथ हों रही छेड़ छाड़ व उनका बन्दर बाट सनातन को गर्त में ले जा रहा है, क्षत्रिय सनातन धर्म का वो ढाल है जिसकी टूटते ही संपूर्ण सनातन संस्कृति नष्ट हो जाएगी, क्षत्रियों ने अपना लहू और पीढियां खपा कर इतिहास बनाया है प्रजातंत्र में ये हमारी एक मात्र पूजी है जो मरे हुए समाज को पुनर्जीवित कर सकती है। हम देवों के वंशज है हमारे कुल में भगवान भी जन्म लेते है ऐसे महान कुल की परंपरा को आगे बढ़ाना हमारा कर्त्तव्य है। कार्तिकेयपुर – कत्यूरी सूर्यवंशी इतिहास का सही लेखन न होने के कारण इस महान राजवंश का इतिहास बाहर नहीं आ सका हालांकि हमारे पूर्वजों द्वारा बनाए गए मंदिर व महल अब भी आसमान में सूर्यवंश का परचम बुलंद किए हुए है। हमारे पूर्वजों ने जड़े बहुत गहरी और मजबूत खोदी है जो चीख चीख कर सूर्यवंशीयो के गौरव शाली इतिहास को दुनिया से परिचय करवाती हैं । इस ग्रन्थ को लिखने में अस्कोट के वर्तमान राजा सूर्यवंश कुलभूषण श्री भानुराज पाल जी, महसों के युवराज श्री आर्यमान पाल जी, हरिहरपुर स्टेट के कुंवर श्री अखिलेश बहादुर पाल व मेरे मित्रगण का अमूल्य योगदान रहा है मैं उनका धन्यवाद करता हु । मेरे दादाजी स्वर्गीय श्री हरीशचंद्र बहादुर पाल व कुंवरी श्री लक्ष्मी देवी दादी जी व माता पिता को प्रणाम व नमन करता हु। मैं अपने उन सभी पूर्वजों का जिन्होंने मेरे साथ प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप से मार्गदर्शन, प्रेरणा व आशीर्वाद दिए जिससे ये सफल हो पाया है उनका धन्यवाद करता हु। इस पुस्तक में मैने कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो से संबंधित सभी तथ्यों पर प्रकाश डालने की कोशिश करी है यदि भूलवश कोई भूल हो गई हो तो उसके लिए मैं क्षमा प्राथी हु। आशा करता हु आपको यह पुस्तक पसंद आएगी।

शिवम् पाल सूर्यवंशी।

इस पुस्तक को लिखने में निम्नलिखित ग्रंथों से सहायता ली गई है,जिसका नाम कृतज्ञता, धन्यवाद सहित यहां दिया जा रहा है।

1 . अटकिंसन साहब की हिमालयन गजेटियर।

2. कनिंघम साहब कि आर्कियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इंडिया।

3. राजतरंगिणी, सर ऑरियल स्टैन द्वारा लिखित।

4. किंगडम ऑफ नेपाल, फ्रांसिस हेमिल्टन द्वारा लिखित।

5. कुमाऊं का इतिहास, श्री बद्रीदत्त पांडे द्वारा लिखित।

6. उत्तराखंड का नवीन इतिहास, यशवन्त सिंह कटोच द्वारा लिखित।

7. Gazetteer of the Province of Oudh, उत्तरप्रदेश सरकार द्वारा लिखित।

8. Basti – A Gazetteer by Nevill, H. R.

अनुक्रमणिका

कार्तिकेयपुर सूर्यवंशी राजवंश। 1
उत्तर-कत्यूरी काल में कुमाऊँ के स्थानीय सूर्यवंशी राज्य। 26
खैरीगढ़स्टेट–डोटी। 44
अस्कोट एक समृद्ध राज्य। 56
महसों राज्य की शाखाएं।1 85
बस्ती और अयोध्या के सूर्यवंशी क्षत्रिय और राममंदिर का युद्ध।। 109
महुली का युद्ध 115
महाकवि रंगपालजी की लोक रचनाएं। 127
श्री जगदंबिका पाल 138
शिलालेख 144
पांडुकेश्वर शिलालेख 157
कार्तिकेयपुर सूर्यवंशीयो दवारा बनवाए गए मंदिर। 203
सूर्यवंशी कत्यूरी राजवंश के गोत्र प्रवर, वंशावली आदि। 259

काल 362 ईश्वी – 1500 ईश्वी

संस्थापक – शालिवाहनदेव

प्रथम राजधानी – कार्तिकेयपुर, जोशीमठ

द्वितीय राजधानी – बैजनाथ

भाषा – संस्कृत

कार्तिकेयपुर सूर्यवंशी राजवंश।

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।

मंगलानां च कर्त्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ।।

वागर्थाविव संपृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये। जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ।।

लोकाभिरामं रणरंगधीरं राजीवनेत्रं रघुवंशनाथम्।

कारुण्यरूपं करुणाकरं तं श्रीरामचन्द्रं शरणं प्रपद्ये।।

कार्तिकेपुर। सूर्यवंशीयो के आदिपुरुष सम्राट शालीवाहनदेव कि प्रतिमा। सूर्यवंशी सम्राट शालीवाहन देव (पौंड) राजा की उपाधि धारण करते थे। इस प्रतिमा का निर्माण ७वी से ८वी शताब्दी के मध्य कराया गया था। वरिष्ठ इतिहासकार डा0 एम पी जोशी, जिन्होंने क्षेत्र के इतिहास एवं पुरातत्व पर महत्वपूर्ण गवेषणाऐं की हैं, ने उल्लेख किया है कि जब सूर्यवंशी कत्यूरी सम्राट विपत्तियों से घिर जाते तो वो अपने पूर्वज आदिपुरुष शालीवाहनदेव को याद करते थे। शालीवाहनदेव राजा की लगभग एक कुंतल वजन की इस प्रतिमा की लम्बाई लगभग 140 सेमी है। प्रतिमा की मुद्रा से प्रतीत होता है कि जैसे मूल रूप में पौण राजा अपने हाथों में दीपक पकड़े हुए होंगे परन्तु अब दीपक हाथ में नहीं है। वह राजसी मुकुट, गले में कंठा, हाथों में बाजुबंध एवं कंगन तथा पैरों में कड़े पहने हैं। धोती धारण किये पोण की यह दिपदिप करती प्रतिमा अत्यंत भव्य है।

भारतवर्ष जिसे आर्यावर्त भी कहा जाता है में एक ऐसा महान और पवित्र वंश जिसमें अनेक वीर योद्धा और महान सम्राट जन्म लिए है इन्हीं क्षत्रिय वंशों में भगवान और देवों ने भी बार बार जन्म लेकर इस वंश की महानता को और बढ़ाया है। उसी क्रम मैं सूर्यवंश

हुआ जिसकी ख्याति और महानता की जितनी प्रसंशा की जाए कम ही पड़ेगी। सूर्यवंश की शुरुआत वैवस्वत मनु से होती है जिन्हें विवश्वासवान सूर्य भी कहा जाता है।

वैवस्वत मनु के नौ पुत्र हुए - इक्ष्वाकु, नभग ,धृष्ट, शर्याति, नरिष्यन्त, प्रांशु, अरिष्ट, करूष और पृषध्र। वैवस्वत मनु की एक पुत्री भी हुई, पुत्री का नाम इला था। महाराजा इक्ष्वाकु की माता का नाम श्रद्धा था। महात्मा एवं तपस्वी महाराज होने के कारण इक्ष्वाकु के पश्चात उनके राजवंश के सम्राटों को सूर्यवंशी तथा उनकी भगिनी इला के वंश वाले राजाओं को चंद्र वंशी कहा गया है। इनमें सबसे महान और आदि पुरूष राजा इक्ष्वाकु को माना जाता है जो कोसल राज्य के महाराजा थे। उनके राज्य की राजधानी अयोध्या थी। उनके सौ पुत्र बताए जाते हैं जिनमें ज्येष्ठ विकुक्षि थे। इक्ष्वाकु के एक दूसरे पुत्र निमि ने मिथिला राजकुल स्थापित किया। सम्राट इक्ष्वाकु से उत्पन्न हुए उनके वंशजों की राजवंशावली के राजाओं को सूर्य वंशी कहा गया अत: सूर्यवंश के प्रणेता इक्ष्वाकु थे। इस प्रसिद्ध राजवंश में अनेक विभूतियों ने जन्म लिया और प्राचीन भारतीय इतिहास की परिकल्पना का संवर्धन किया है। सूर्य वंश में जन्मे अनेक प्रतापी सम्राट जैसे महाराजा भगीरथ, श्री राम, महाराजा हरिश्चन्द्र, राजा सागर, सम्राट अम्बरीष, महाराज दिलीप और चक्रवर्ति सम्राट रघु का नाम आज भी विश्रुत है। कुछ अन्य प्राचीन राजा जैसे ककुत्स्थ, पृथु और मान्धाता आदि महान राजा हुए जिन्होंने अपने बल और पराक्रम से धरती का अधिकांश भूभाग अपने वश में कर रखा था।

सूर्यवंश विशेष रूप से अयोध्या के राजा राम से जुड़ा है जो भगवान विष्णु के अवतार थे। वंश के नियम के अनुसार श्री राम असली उत्तराधिकारी थे, लेकिन उनके पिता राजा दशरथ ने अपनी तीसरी रानी कैकेयी से वादा किया था, जिन्होंने राम को चौदह साल के लिए वन में निर्वासित करने के लिए कहा था और उनके अपने बेटे भरत को राम के स्थान पर शासन का मुकुट पहनाया गया था, हालांकि, रानी कैकेयी के पुत्र भरत ने कभी भी सिंहासन स्वीकार नहीं किया, लेकिन श्री राम के वनवास से वापस आने तक उनके सेवक के रूप में राज्य किया। अयोध्या के सूर्यवंशीयो में महत्वपूर्ण राजा बृहदबल थे, जिन्हें कुरुक्षेत्र युद्ध में अभिमन्यु ने मार दिया था। आगे भगवान श्री राम की पुत्र से ये वंश आगे बढ़ा जो उनके दो पुत्र लव और कुश की शाखाओं में विभक्त हो गया। जिनके वंशज आज भी भारत के अनेक राज्यों और क्षेत्रों में बड़े ही शान और मर्यादित ढंग से क्षत्रिय धर्म का पालन करते हैं। उसी सूर्यवंश में भगवान श्री राम के पुत्र कुश से कार्तिकेपुर

राजवंश चला जो कोसल देश की सीमा विस्तार के लिए एक बड़ी सेना के साथ पहाड़ों और हरीभरी वादियों की तरफ वर्तमान में उत्तराखण्ड की ओर अपनी विजय पताका फहराई जो धीरे धीरे अफगानिस्तान के काबुल से बढ़कर नेपाल तक सूर्यवंश के ध्वज तले आगया था। हालांकि कुछ नकली क्षत्रिय सहयोगी समूहों और मार्क्सवादियों द्वारा इस्तेमाल की जाने वाली एक सामान्य रणनीति ऐतिहासिक कथाओं को विकृत करके क्षत्रिय / राजपूतों की वंशावली को बदनाम करना रहा है। उनके लगातार दावों में से एक श्रीमद विष्णु महापुराण के एक अंश के इर्द-गिर्द घूमता है, जिसमें कहा गया है कि अयोध्या के अंतिम शासक महाराजा सुमित्रा को महापद्म नंद ने उखाड़ फेंका और मार डाला - जो जन्म से शूद्र थे और क्षत्रियों के कट्टर दुश्मन थे।

हालांकि, जब हम इस अंश का संपूर्णता में विश्लेषण करते हैं, तो इसका तात्पर्य सूर्यवंशी क्षत्रियों के विलुप्त होने से नहीं है। इसके बजाय, यह वर्णन करता है कि कैसे महापद्म नंद ने कोसल महाजनपद को नष्ट कर दिया, जिससे अयोध्या में क्षत्रिय शासन का पतन हुआ। यह ऐतिहासिक रूप से सटीक है - अयोध्या सदियों तक क्षत्रिय शासित शहर नहीं रहा। इसे महाराजा विक्रमादित्य ने फिर से खोजा, बाद में, गढ़वाल क्षत्रिय राजवंश के शासनकाल के दौरान, अयोध्या में एक बार फिर क्षत्रिय कुलीन थे, जैसा कि विष्णु हरि शिलालेख से पता चलता है। गोकुल के साथ एक समानता खींची जा सकती है, जिसे श्री वल्लभाचार्य महाप्रभु ने 1520 ई. में फिर से खोजा था। क्या इसका मतलब यह है कि श्री कृष्ण और उनकी लीलाएँ कभी अस्तित्व में नहीं थीं? बिलकुल नहीं! जिस तरह से स्थलों को फिर से खोजा जा सकता है, उसी तरह वंश फिर से उभर सकते हैं और अपनी विरासत को पुनः प्राप्त कर सकते हैं। यही बात सूर्यवंशी क्षत्रियों के लिए भी सच है। नंद वंश, विशेष रूप से महापद्म नंद के अधीन, क्षत्रियों के प्रति अपनी शत्रुता के लिए कुख्यात था। चाणक्य ने स्वयं नंदों को उनके उत्पीड़न के लिए तिरस्कृत किया और इसलिए उन्होंने धनानंद को नष्ट करने के लिए मोरिय वंश के एक क्षत्रिय सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य को खड़ा किया। कई क्षत्रिय वंशों को या तो बिहार और पूर्वांचल से पलायन के लिए मजबूर होना पड़ा या नंद शासन के अधीन होना पड़ा। सूर्यवंशी क्षत्रियों का अस्तित्व और विस्तार कई राजपूत वंशों में देखा जा सकता है जो सूर्यवंश से अपनी वंशावली का पता लगाते हैं। ऐतिहासिक उथल-पुथल के बावजूद, इनमें से कई कुलों ने अपनी योद्धा परंपराओं को संरक्षित किया और विभिन्न क्षेत्रों में अपना शासन फिर से स्थापित किया।

हालांकि कार्तिकेपुर राजवंश जो राजा सुमित्र के तीन पुत्रों में बड़े पुत्र शालीवाहनदेव पहले ही कोसल देश की सीमा बढ़ाने के लिए उत्तराखण्ड की तरफ आगए थे। सूर्यवंशी भगवान श्री राम के पुत्र कुश के वंश में राजा सुमित्र जिनके बड़े पुत्र राजा शालीवाहनदेव लगभग पच्चीस सौ वर्ष पुर्व अपने राज्य की सीमा बढ़ाने के लिए अयोध्या से उत्तराखण्ड के कबीरपुर नामक स्थान पर महादेव के पुत्र कार्तिकेय के नाम पर कार्तिकेयपुर बसाया व अपने इष्टदेव भगवान कार्तिकेय के नाम पर मंदिर का निर्माण करवाया। वहां उन्होंने नाले (बावड़ियां) तालाब व बाजार का निर्माण करवाया। ये कार्तिकेपुर कई पुश्तों तक इन सूर्यवंशी राजाओं का शासन रहा, दूर दूर के राजदूत इन सूर्यवंशी राजाओं के राजधानी में रहते थे। कार्तिकेयपुर में चितौड़गढ़ के राजदूतों का आवागमन था व यहां रहते थे।

कुछ ताम्रपत्रों व शिलालेखों से यह ज्ञात है कि लगभग २५०० वर्ष हुए सूर्यवंशी कत्यूरी राजाओं का राज्य यहाँ पर था व अयोध्या के सूर्यवंशी राजाओं का राज्य-विस्तार किसी समय यहाँ भी था और कुमाऊँ उत्तर-कौशल प्रान्त में शामिल था। बाद को कत्यूरी राजाओं के समय में यह राज्य अलग हो गया । कत्यूरी राजाओं का राज्य नैपाल से काबुल तक रहा है, और यह भी तथ्य है कि सम्राट वासुदेव के पुत्र सम्राट् कनकदेव काबुल में मारे गए थे। यह बात प्रायः निर्विवाद है कि पूर्वकाल में सूर्यवंशी कत्यूरियों का राज्य बड़ा प्रभावशाली हो गया है और उन्होंने खस-आदिवासियों को जीतकर कत्यूरी-साम्राज्य स्थापित किया। कत्यूरी सूर्यवंशी राजाओं की राजधानी जब पहले जोशीमठ में, बाद को कात्तिकेयपुर में थी, तो उनका राज्य-विस्तार सिक्किम से लेकर काबुल तक था। इधर दिल्ली, रोहिलखंड आदि प्रान्त भी कत्यूरी-राज्य-शासन की सीमा के अंदर थे । पुरातत्त्ववेत्ता श्रीकनिंघम ने भी इसका जिक्र किया है, उनको जीतकर कत्यूरी राजाओं ने अयोध्या से आकर अपना राज्य यहाँ स्थापित किया। उनका राज्य अनुमान से यहाँ 2500 वर्ष तक रहा। उनके शासन काल का कोई लिखित इतिहास उपलब्ध नहीं, पर कई ताम्रपत्र ईसा से कई शताब्दी पूर्व के हैं जो इस तथ्य को प्रमाणित करते हैं। सूर्यवंशी कत्यूरी राजाओं के आने के पूर्व यहाँ पहले कोई कुरु राजवंश के राजा राज्य करते थे, जो प्राचीन इन्द्रप्रस्थ (आधुनिक दिल्ली) के साम्राज्य की छत्रच्छाया में रहते थे। यह वही व राटनगरी है, जहाँ पांडव गुप्त वनवास में एक साल तक रहे थे। वैसे एक वराटनगरी जौनसार बावर में भी बताई जाती है। यद्यपि इस ओर की बहुत-सी बातें पांडवों से संबंधित है। इसके आगे भी पश्चिम में लालढांग चौकी के पास पांडुवाला में भी पुराने खंडहरों के

भग्नावशेष चिह्न है। लगभग ३६२ ईसा पूर्व शालिवाहनदेव जो राजा सुमित्र के बड़े पुत्र थे कुमाऊँ में आये। ये इन सूर्यवंशीयो के मूल-पुरुष थे। पहले उनकी राजधानी जोशीमठ के आसपास मानी जाती है। राजा शालिवाहन अयोध्या के सूर्यवंशी क्षत्रिय (राजपूत) थे। अस्कोट, डोटी, पॉली पछाऊ व अन्य सभी कत्यूरी शाखाओं के वंशज इसी खानदान के है वो सभी अपने को अयोध्या से आये और कत्यूर में बसे होने व सूर्यवंशी क्षत्रिय होने पर गर्व करते है। मृत्युंजय कहते है कि वे गोदावरी के किनारे प्रतिष्ठान से आये थे। कत्यूरी राजा कात्तिकेयपुर से गढ़वाल का भी शासन करते थे, इससे अँगरेजी लेखकों की यह दलील कि पहले उनकी राजधानी जोशीमठ में थी, ठीक नहीं जचती । ये राजा शालिवाहन इतिहास-प्रसिद्ध चक्रवर्ती सम्राट् न थे लेकिन इनके वंशज चक्रवर्ती सम्राट जरूर हुए है। सारे भारतवर्ष के सम्राट अपनी राजधानी कत्यूर या जोशीमठ में रक्खें, यह बात समझ में नहीं आसकती। हाँ, यह जगह उनके गरमियों में रहने की हो, यह बात तो संभव है, पर उस समय जब कि मार्ग की सुगमता नहीं थी, ऐसा करना आसान न था। इससे यह बात साफ जाहिर होती है कि अयोध्या के सूर्यवंश के राजा शालिवाहन यहाँ आये और उन्होंने यहाँ पर एक अच्छा प्रभावशाली साम्राज्य स्थापित किया। फिरिता में एक अन्य स्थल में यह बात लिखी है- "सन् ४४०-४७० में जब दिल्लीपति रामदेव राठौर ने दिग्विजय का डंका बजाया, तो कुमाऊँ के सूर्यवंशी राजा ने जिसका वंश वहाँ वर्षों से राज्य करता था उसका विरोध किया। दिन-भर लड़ाई हुई, जिसमें दोनों ओर के बहुत-से सैनिक घायल हुए। अन्त में कुमाऊँ के सूर्यवंशी राजा हार गए और अपने हाथी व खजाने को लेकर पहाड़ों को चले आए। फेरिश्ते ने यह लिखा कि यह राजा सूर्यवंशी क्षत्रिय वंश का था। यह वर्णन सूर्यवंशी कत्यूरी राजाओं की बाबत थी। दिल्लीपति राजा का विरोध करने की सामर्थ्य साधारण राजा में नहीं हो सकती थी। सूर्यवंशी कत्यूरियों ने उनका विरोध किया था और उनकी राज्य-सीमा तराई भावर से परे होगी, क्योंकि हाथी की लड़ाई पहाड़ में तो हो नहीं सकती। यह लड़ाई देश में हुई होगी।

जोशीमठ में वासुदेव नाम का प्राचीन मंदिर है। यह सूर्यवंशी कत्यूरी सम्राटवासुदेव का बनवाया है। इससे प्राचीन मंदिर कुमाऊँ में कोई नहीं, ऐसा कहा जाता है। कत्यूरी-सम्राद् का नाम इस मंदिर में इस प्रकार खुदा है- "श्रीवासुदेव गिरिराज चक्रचूडामणि ।" यह सम्राट जोशीमठ में रहते थे। भगवानुविष्णु का नाम वासुदेव है। अतः आपने भगवान् से अपना नाम मिलता देख, उस मंदिर के साथ संकर्षण, प्रदुम्न, अनिरुद्ध प्रभृत्ति देवताओं

के मंदिर भी बनवाये। यह बात प्रायः निर्विवाद है कि कत्यूरी सूर्यवंशी राजाओं का राज्य सिक्किम से काबुल तक तथा दक्षिण में बिजनौर, दिल्ली, रोहिलखंड आदि प्रान्तों में था। फ़िरिश्ता, कनिंघम, शेरिंग, अठकिन्सन, सबका मत यही है। जोशीमठ से कत्यूर आने की कहानियाँ इस प्रकार हैं- (१) राजा वासुदेव के कोई गोत्रधारी शिकार खेलने को गये थे। घर में विष्णु भगवान् नृसिंह के रूप में आये। रानी ने खूब भोजनादि से सत्कार किया। फिर वे राजा के पलंग पर लेट गये। राजा लौटकर आये और रनवास में अपने पलंग पर किसी अन्य पुरुष को पड़ा देखकर अप्रसन्न हुए। उस पर तलबार मारी, तो हाथ से दूध निकला। तब रानी से पूछा कि वे कौन है ? रानी ने कहा कि बे कोई देवता हैं, जो बड़े परहेज़ से भोजन कर पलँग पर सो गये थे। तब राजा ने तृसिंहदेव को हाथ जोड़कर प्रणाम किया और अपने क़सूर के लिये दंड या शाप देने को कहा। तब उस देवता ने कहा- "मैं नृसिंह हूँ। तेरे दरबार से प्रसन्न था, तब तेरे यहाँ आया। अब तेरे अपराध का दंड तुझे इस प्रकार मिलेगा कि तू जोशीमठ से कत्यूर को चला जा और वहाँ तेरी राजधानी होगी। बाद रख, यह घाब मेरी। मंदिर की मूर्ति में भी दिखाई देगा। जब यह मूर्ति टूट। जायगी, तब तेरा वंश भी नष्ट हो जायगा।" ऐसा कहकर नृसिंह अन्तर्द्धन हो गये। (२) दूसरी कहानी इस प्रकार है कि स्वामी शंकराचार्य कत्यूरी रानी के पास उस समय आये, जबकि राजा वासुदेव विष्णु प्रयाग में स्नान करने गये थे। इन कहानियों से यइ साफ़ है कि यदि कत्यूरी राजा गढ़वाल से कुमाऊँ को आये, तो कोई धार्मिक कलह उपस्थित हुआ होगा, जिससे राजा वासुदेव व उनके कुटुम्बी जोशीमठ से कात्तिकेयपुर आने को बाध्य हुए।

ये कार्तिकेपुर सूर्यवंशी राजा बड़े शूरवीर व धर्मात्मा थे बिना धर्म कार्य किए भोजन ग्रहण नहीं करते थे। दक्षिण एशियाई इतिहासकारों द्वारा दक्षिण एशियाई इतिहास में हिमालयी राज्यों को बहुत कम या बिलकुल भी ध्यान नहीं दिया जाता है। यह बल्कि दुखद और दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति है, लेकिन आंशिक रूप से प्राथमिक स्रोतों की कमी के कारण (भले ही यह 1500 के बाद बदल गया हो और हमारे पास रोहिल्ला और कुमाऊँ साम्राज्य के बीच संघर्षों के कई शिलालेख और भूमि अनुदान हैं, जिनमें प्राथमिक स्रोतों के अनुसार कुमाऊँ साम्राज्य ने 5 में से 4 संघर्षों में जीत हासिल की)। कार्तिकेपुर सूर्यवंशी राजाओं को नगर, नाले मंदिरों का निर्माण करने व वास्तुकला का बहुत शौक था। उत्तराखण्ड के अधिकांश मंदिर इन्हीं सूर्यवंशी राजाओं द्वारा निर्मित है जो सनातन व क्षत्रिय परंपराओं की धरोहर हैं। जहां कही भी इन सूर्यवंशी राजाओं ने धर्म कार्य व यज्ञ किया वहां यज्ञ

स्तंभ या वृहतस्तंभ गाड़ देते थे। इन स्तंभों को ब्रिखम भी कहते है व ये स्तंभ अब भी दिखाई देते है इनका ज्यादातर वृतांत कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो के शिलालेखों मैं देखा जा सकता है। ये लेख जागेश्वर, बैजनाथ, गड़सिर के बदरीनाथ तथा पांडुकेश्वर में मिले है। इन सब से कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो की वैभवता, प्रभुता व यश का पता चलता है। हालांकि पाण्डुकेश्वर ताम्रपत्रों में कार्तिकेयपुर राजवंश के पदाधिकारियों की विस्तृत सूची, कत्यूरी प्रशासनिक व्यवस्था के व्यापक स्वरूप की द्योतक है। एटकिंसन, कत्यूरी प्रशासन और पाल प्रशासन में अनेक समानताओं का उल्लेख करते हैं, लेकिन हमारे पास ऐसे निश्चित साक्ष्य मौजूद नही हैं, जिनके आधार पर कत्यूरी प्रशासन का प्रेरणा-स्रोत, पाल-प्रशासन को माना जा सके। कार्तिकेयपुर राजवंश के प्रशासन को एक भारी-भरकम प्रशासन कहा जा सकता है। यह पौरव-वर्मनलना में कहीं अधिक विस्तृत था। इसका कारण कत्यूरियों के समय में समाज का अपेक्षाकृत अधिक जटिल और स्तरीकृत होना बतलाते हैं। इसके अलावा कत्यूरियों का पौरव-वर्मनों की तुलना में कहीं अधिक विशाल साम्राज्य भी इसका एक कारण रहा होगा। गुप्तोत्तर काल में समस्त उत्तर भारत में सामन्तवाद तेजी से बड़ा था, पाण्डुकेश्वर पत्रों में भी ऐसे अनेक पदाधिकारी वर्णित हुये हैं, अतः माना जा सकता है कि सूर्यवंशी प्रशासन में बढ़ते हुऐ सामन्तवाद ने भी पदाधिकारियों की संख्या पर्याप्त बढ़ा दी होगी। विभिन्न पदों के अस्तित्व ये यह भी पता चलता है कि कत्यूरी सूर्यवंशी शासकों ने राजनैतिक तथा सार्वजनिक जीवन के प्रायः सभी क्षेत्रों में अपना प्रभाव स्थापित कर रखा था। कार्तिकेपुर सूर्यवंशी राजवंश का उल्लेख गुप्तोत्तर काल में गुप्त साम्राज्य के शिलालेख में भी उल्लेख किया गया है। समुद्रगुप्त (335 से 375 ई.) के मंत्री हरिषेणकृत प्रयाग स्तम्भ पर उत्कीर्ण प्रशस्ति के अनुसार कर्तिकेयपुर का राज्य अन्य सीमावर्ती राज्यों से समृद्ध राज्य था। गुप्त शिलालेखों में कर्तृपुरा कार्तिकेपुर का उल्लेख।।

तेज राम शर्मा[2] इस मामले पर गुप्त शिलालेखों से निम्नलिखित जानकारी प्रदान करते हैं: (5) कर्तृपुरा (कर्तृपुर) (नंबर . 22: समुद्रगुप्त का इलाहाबाद स्तंभ शिलालेख):

-22. समतत्-द्वक-कामरूप-नेपाल-कर्त्तृपुरादि-प्रत्यन्त-नृपतिभिर्ममालवार्जुनयन-यौधेय-माद्रकाभिर-प्रार्जुन-सनकानिक-काक-खर्परिकादिभिश्च5 सर्व-कर-दानाज्यकरण-प्राणमागमन-

(22.) - समताता, दावाका, कामरूप, नेपाल, कर्तृपुरा, और अन्य (देशों) के सीमावर्ती राजाओं द्वारा, सभी (प्रकार के) कर देकर और (उनके) आदेशों का पालन करके और पूजा करने के लिए आकर, जिनकी शक्तिशाली आज्ञाओं को पूरी तरह से संतुष्ट किया गया था, और द्वारा मालव, अर्जुनायण, यौधेय, मद्रक, अभिरस, प्रार्जुन, सनकनिका, काक, खरपरिका, और अन्य (जनजाति) आदि का उल्लेख मिलता है। इस शिलालेख से स्पष्ट है कि कार्तिकेयपुर गुप्त काल में सबसे समृद्ध राज्य था।

यह संदेह से परे स्थापित हो चुका है कि कार्त्रिपुरा ही कार्तिकेयपुर है, जो कभी कुमाऊँ के सूर्यवंशी कत्यूरी राजाओं की राजधानी थी। राजशेखर काव्य मीमासा में एक और संदर्भ है गुप्त राजा का जिसे कुमाऊँ में रहने वाली एक जनजाति खसों के अधिपति सूर्यवंशी राजाओं ने हराया था। यहां खसाधिपति शब्द से अभिप्राय उनके पालन करता उन पर शासन करने वाले राजा से है। यह श्लोक इस प्रकार है:

दत्त्वा रुद्धगतिः खसाधिपतये देवीं ध्रुवस्वामिनीम्। यस्मात् खंडितसाहसो निवृते श्री शर्म (सेन?) गुप्तो नृपः। तस्मिन्नेव हिमालये गुरुगुहा कोनेत् क्वान्त किन्नरैः। ज्ञान्ते तव कार्तिकेयनगरस्त्रीणां गणैः कीर्त्तयः ॥

डॉ. डी.आर. भंडारकर का मानना है कि कुमाऊंनी सूर्यवंशी राजाओ द्वारा पराजित राजा रामगुप्त था, जो चंद्रगुप्त विक्रमादित्य का पूर्ववर्ती था। समुद्रगुप्त के उत्तराधिकारी। वह साबित करता है कि हार बदला लिया गया।श्लोक को वैसे ही लें तो ऐसा लगता है कि गुप्त राजाओं का सबसे बड़ा दल हिमालय में पराजित हुआ और वह उसे अपनी रानी ध्रुव स्वामी को सूर्यवंशी क्षत्रिय राजा को देने के लिए मजबूर होना पड़ा। अंतिम दो छंद हमें बताते हैं कि हिमालय में किन्नरों द्वारा बसाई गई गुफाओं में उनकी प्रशंसा के गीत गाए जाते हैं। इन दोनों में किसका उल्लेख है? बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के प्रो. अल्तेकर कहते हैं कि यह श्लोक कुमारगुप्त को संबोधित है जबकि डॉ. भंडारकर लिखते हैं कि यह स्कंदगुप्त को संबोधित है। लेकिन डॉ. के.पी. जायसवाल के अनुसार यह छंद अपनी पूर्णता प्राप्त करता है यदि इसे चन्द्रगुप्त द्वितीय को संबोधित माना जाए तो इसका महत्व और बढ़ जाता है। क्योंकि उस स्थिति में हम आसानी से समझ सकते हैं कि क्यों यह चन्द्रगुप्त हिमालय की गुफाओं में गाए जाते हैं जहां उसके भाई को अपमानजनक तरीके से पीछे हटना पड़ा। यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि गुप्त राजा की पराजय राजवंश के दूसरे

राजा द्वारा बदला लिया गया। यदि वह चन्द्र था गुप्ता कहते हैं कि स्थानीय परंपरा के अनुसार महान मंदिर के जीर्णोद्धारकर्ता विक्रमादित्य को शायद यह सम्मान नहीं मिला। ऐतिहासिक कार्य 12वीं सदी। इसमें उल्लेख है कि उनके पिता के एक पूर्व विद्रोही रावल (रामगुप्त) पर आक्रमण किया और उसे भगा दिया।वह एक पहाड़ पर गया जहाँ उसने एक मजबूत किला बनाया। दुश्मनों ने उसे हरा दिया और उसे एक संधि करनी पड़ी उन्हें अपनी रानी को भेजना पड़ा। बाद में वर्कामारिस ने एक महिला का वेश धारण कर अपने दुश्मनों की हत्या कर दी। निष्पक्ष रूप से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि दोनों के बीच संबंध गुप्त और कार्तिकेयपुर के सूर्यवंशी राजाओं के बीच हुई मुठभेड़ थी। स्थानीय परम्पराओं के अनुसार, यह स्थान जागेश्वर है।

कार्तिकेयपुर राजवंश में राजपरिवार से सम्बद्ध पदनामों के अन्तर्गत, महाराजाधिराज, महाराज, राजा, नृपति, नरेन्द्र, राजपुत्र(क्षत्रिय), क्षितीश, राज्ञी जैसी उद्बोधन मिलते हैं। राजा के लिए परमट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर, गिरिराज चक्रचूड़ामणि तथा रानी के लिए 'राज्ञी महादेवी उपाधियों का प्रयोग मिलता है। कार्तिकेयपुर सूर्यवंशीयो के विस्तृत राज्य में राजा को शासन कार्य में सहायता एवं परामर्श देने के लिए अवश्य ही केन्द्रीय मन्त्रिपरिषद जैसी कोई संस्था थी। संभवतः इस संस्था के सदस्यों को ही 'राजामात्य कहा गया है। राजामात्य की भांति ही 'कुमारामात्य पद का उल्लेख भी पाण्डुकेश्वर पत्रों में आया है। हेमचन्द्र रायचौधरी कुमारामात्य के निम्नलिखित अर्थ बतलाते हैं (1) कुमारामात्य (राजकुमार का मंत्री), राजामात्य (राजा के मंन्त्री) से भिन्न होता था (2) वैद्य के अनुसार राजकुमारों की निगरानी में मंत्री को कुमारामात्य कहा जाता था. (3) कोई ऐसा सहायक मन्त्री जिसका पिता जीवित हो, कुमारामात्य कहलाता था: (4) वह जो अपनी युवावस्था से ही मंन्त्री रहा हो, कुमारामात्य कहलाता था। परन्तु एपिग्राफिया इण्डिका के अनुसार कुमारामात्य दो भागों में विभक्त थे अर्थात् (1) युवराजपादीय, वे जो युवराज की सेवा में थे, तथा (2) परम भट्टारकपादीय, वे जो राजा की सेवा में थे। कुमारामात्य में कुमार शब्द दक्षिण के पिन 'चिक्क' इम्मदि 'एलय आदि का पर्यायवाची तथा पेद का विलोम था और गुप्त काल में कुमारामात्य अधिकतर जिला अधिकारी के पद पर कार्य करते थे, इस पद पर कार्य करने वाले को नायक, मंत्री तथा विदेश मंत्री का कार्य भी करना पड़ता था। पाण्डुकेश्वर पत्रों में 'महासन्धिविग्रहाक्षपटलाधिकृत पद का उल्लेख मिलता है। ललितशूर देव के शासन में, श्री मान् आर्यवतु और पद्मटदेव के शासन

में, श्री नारायणदत्त नामक व्यक्ति इन पदों पर कार्यरत थे। महासन्धिविग्रहाक्षपटलाधिकृत, दो पदों महासन्धिविग्रहिक तथा अक्षपटलाधिकृत को मिलाकर बनाया गया प्रतीत होता है। संभवतः एक ही व्यक्ति को दोनों पद देने के कारण इस नये पद का सृजन हुआ है, क्योंकि सुभिक्षराज के शासन में यह पद नही मिलता है, लेकिन महासन्धिविग्रहाधिकृत का उल्लेख सुभिक्षराज के ताम्रपत्र में आया है। महासन्धिविग्रहिक पद, युद्ध और शान्ति के मंत्री (विदेश मंत्री) तथा अक्षपटलाधिकृत पद, गृह मंत्री आदि के रूप में गुप्त अभिलेखों में व्यवहृत हुआ है। संभवतः कत्यूरी युग में भी इन पदों का यही कर्तव्य रहा होगा। अक्षपटलाधिकृत का उल्लेख हर्ष के अभिलेखों में भी मिलता है, जहाँ महाक्षपटलिक तथा ग्रामस्थपटलिक भूमि-रिकार्ड के कार्य किया करते थे। इस आधार पर अक्षपटलाधिकृत का एक मुख्य कर्तव्य रिकार्ड अधिकारी के रूप में भी माना जा सकता है।

पाण्डुकेश्वर ताम्रपत्रों में महादानाक्षपटलाधिकृत का उल्लेख आया है। ललितशूरदेव के लेख में श्री पीजक पद्मटदेव के लेख में श्रीभट्टधण तथा सुभिक्षराज के लेख में श्रीकमला का नाम महादानाक्षपटलाधिकृत के रूप में आया है। सुभिक्षराज के लेख में देसतदेव को भारत की सभी दिशाओं के ब्राह्मणों को प्रभूत दान देने वाला और पद्मटदेव को बलि, दधीचि, चन्द्रगुप्त, कर्ण जैसे प्रसिद्ध दानियों से भी अधिक गौरव अर्जित करने वाला कहा गया है। इनके ताम्र पात्र में सूर्यवंशी राजा भागीरथ, मांधाता, दिलीप पृथु का भी उल्लेख मिलता है जो कत्यूरी सूर्यवंशीयो के पूर्वज थे। इससे पता चलता है कि कत्यूरी सूर्यवंशी शासकों का राज्य स्वर्ग के राजा इंद्र के तुल्य था। इन्होंने प्रभूत धन दान में दिया था जो क्षत्रिय धर्म का हिस्सा है और इसके लिए महादानाक्षपटलाधिकृत के अधीन एक दान-विभाग की व्यवस्था भी की थी। भूमि सम्बन्धी दानादि के कार्यों का लेखा-जोखा रखने का कार्य भी संभवतः इसी विभाग के हाथ में था। सूर्यवंशी कत्यूरी राजा शालिनकुल देव ने 724 ईस्वी में काबुल को जीता था व कुछ समय पश्चात कनक पाल देव काबुल में मार दिए गए थे। इसका जिक्र फिरिस्ती ने अपने लेख में किया है।

पाण्डुकेश्वर पत्रों में 'महाकर्तात्रिक' पद आया है। गुप्त तथा पाल अभिलेखों में भी इस पद का उल्लेख आया है। इसे राजकीय कार्यों का प्रबन्धकर्ता अधिकारी बताया गया है, संभवतः कार्तिकेयपुर सूर्यवंशी शासन में विभिन्न राजकीय कार्यों के प्रबन्ध की जिम्मेदारी इसी अधिकारी की रही होगी। कत्यूरी ताम्रपत्रों में 'अष्टादशप्रकृत्याधिष्ठानीयन' नामक

पद का उल्लेख भी आया है, सूर्यवंशी कत्यूरी शासन में यह 18 विभागों का अधिकारी बतलाया गया है। पाण्डुकेश्वर अभिलेखों में उल्लिखित गमागमिक पद प्राचीन भारत में नगर में प्रवेश एवं निर्गमन का कार्य देखता था और यह संदेशवाहकों की व्यवस्था भी करता था। पाण्डुकेश्वर पत्रों में प्रयुक्त दिविर पद गुप्तकाल में मिलता है। यह क्लर्कों का अधीक्षक होता था तालेश्वर और पाण्डुकेश्वर पत्रों में 'दिविर का उल्लेख लेखक के रूप में ही हुआ है।

पाण्डुकेश्वर पत्रों में महाप्रतिहार पद का उल्लेख आया है। प्राचीन भारत में इस पद का अधिकारी महल में आने वाले आगन्तुकों तथा दूतों को प्रवेश दिलाने वाले सहायक के रूप में कार्य करता था। कत्यूरी शासन में भी यह संभवतः राजदरबार का प्रमुख स्वागत अधिकारी रहा होगा। कार्तिकेयपुर कत्यूरी ताम्रपत्रों में आये शरभंग पद को सरकार ने राजकीय चिकित्सक बतलाया है, लेकिन एटकिंसन इसे धनुर्धरों का या धनुष-बाण तैयार करने वाले सरकारी कारखाने का अध्यक्ष मानते हैं खाड्गिक' पद को सरकार, तलवार चलाने वाले या उनके अधीक्षक से समीकृत करते है। संभवतः कत्यूरी काल में तलवार चलाने वाले क्षत्रिय सैनिकों का कोई विशेष दस्ता रहा होगा, जिसके प्रधान के लिए यह पद प्रयुक्त किया गया है। 'किशोरवडवागोमहिष्याधिकृत पद को सरकार राजसी पशुधन की देखभाल करने वाले विभाग का अधिकारी मानते हैं। प्रतिशूरक पद के विषय में सरकार का मानना है कि ये पुरस्कार हेतु परस्पर युद्ध करते थे। पाण्डुकेश्वर अभिलेखों में दूतक' पद आया है यह पद अत्यन्त प्राचीन है। पाणिनी ने भी इसका उल्लेख किया है। प्राचीन भारत में यह राजा का प्रतिनिधि होता था और विशेष अवसरों पर विभिन्न व्यक्तियों या पदाधिकारियों को राजा का दूतक बनाया जाता था।

पाण्डुकेश्वर अभिलेखों में उल्लिखित 'गमागमिक पद प्राचीन भारत में नगर में प्रवेश एवं निर्गमन का कार्य देखता था और यह संदेशवाहकों की व्यवस्था भी करता था। पाण्डुकेश्वर पत्रों में प्रयुक्त दिविर पद गुप्तकाल में मिलता है। यह क्लर्कों का अधीक्षक होता था तालेश्वर और पाण्डुकेश्वर पत्रों में 'दिविर का उल्लेख लेखक के रूप में ही हुआ है।

पाण्डुकेश्वर पत्रों में महाप्रतिहार पद का उल्लेख आया है। प्राचीन भारत में इस पद का अधिकारी महल में आने वाले आगन्तुकों तथा दूतों को प्रवेश दिलाने वाले सहायक के रूप में कार्य करता था। कत्यूरी शासन में भी यह संभवतः राजदरबार का प्रमुख स्वागत

अधिकारी रहा होगा। कत्यूरी ताम्रपत्रों में आये 'शरभंग' पद को सरकार ने राजकीय चिकित्सक बतलाया है, लेकिन एटकिसन इसे धनुर्धरों का या धनुष-बाण तैयार करने वाले सरकारी कारखाने का अध्यक्ष मानते हैं, खाड्गिक' पद को सरकार, तलवार चलाने वाले या उनके अधीक्षक से समीकृत करते हैं। संभवतः कत्यूरी काल में तलवार चलाने वाले सैनिकों का कोई विशेष दस्ता रहा होगा, जिसके प्रधान के लिए यह पद प्रयुक्त किया गया है। 'किशोरवडवागोमहिष्याधिकृत पद को सरकार राजसी पशुधन की देखभाल करने वाले विभाग का अधिकारी मानते हैं। प्रतिशूरक' पद के विषय में सरकार का मानना है कि ये पुरस्कार हेतु परस्पर युद्ध करते थे।

पाण्डुकेश्वर अभिलेखों में दूतक पद आया है यह पद अत्यन्त प्राचीन है। पाणिनी ने भी इसका उल्लेख किया है। प्राचीन भारत में यह राजा का प्रतिनिधि होता था और विशेष अवसरों पर विभिन्न व्यक्तियों या पदाधिकारियों को राजा का दूतक बनाया जाता था। पाण्डुकेश्वर पत्रों में भूमि संबंधी अनुदान के लिए महादानाक्षपटलाधिकृत को दूतक बनाया गया है, ताकि प्रदत्त भूमि की माप-जोख और सीमा निर्धारण का कार्य उचित ढंग से कार्यान्वित हो सके। अभिलेखों में दूत-प्रेषणिक पद दूतों को विभिन्न कार्यों के लिए भेजने वाले अधिकारी के रूप में उल्लिखित हुआ है।

पाण्डुकेश्वर के चारों अभिलेखों में सामन्त और महासामन्त पद आये हैं, जबकि पद्मटदेव और सुभिक्षराज के अभिलेखों में महासामन्ताधिपति पद भी आया है। प्राचीन काल से ही छोटे-छोटे राज्यों के प्रशासकों को सामन्त पद दिये जाने का उल्लेख मिलता है और कालान्तर में जब इनकी शक्ति बढ़ती गयी तो इन्हें महासामन्त, महाराज सामन्त आदि पदों से विभूषित किया जाने लगा। कत्यूरी काल में भी यह पद संभवतः ऐसे छोटे-छोटे शासकों के लिए प्रयुक्त किया गया है, जो कत्यूरी राज्य के अधीन होते हुए भी अपने क्षेत्रों में अपेक्षाकृत अधिक स्वतंत्र रहे होंगे।

पाण्डुकेश्वर पत्रों में नरपति और महामनुष्य पदों का वर्णन आया है। नरपति पद को नौटियाल ने तरपति मानते हुए घाट अधिकारी बतलाया है और महामनुष्य पद को एटकिंसन, ग्राम प्रमुख मानते हैं। संभवतः सूर्यवंशी शासन काल में नरपति और अश्वपति पद एक ही व्यक्ति के पास था और यह पद सैनिक महत्व का प्रतीत होता है। महामनुष्य पद पाण्डुकेश्वर के चारों अभिलेखों में ठक्कुर-महामनुष्य की भाँति आया है। जैसा कि

हम जानते हैं कि ठक्कुर पद समाज के एक विशेष वर्ग (क्षत्रिय) के सदस्यों के लिए प्रयुक्त किया जाता रहा है। संभवतः कत्यूरी काल में प्रभावकारी क्षत्रिय नेता को ठक्कुर कहा जाता रहा होगा, इसी प्रकार महामनुष्य पद भी समाज के किसी क्षत्रिय वर्ग विशेष के नेता के लिए प्रयुक्त होता होगा क्योंकि ग्राम प्रमुख के लिए अन्य पद नाम कत्यूरी युग (समसामयिक भारत) में ज्ञात थे, अतः इस पद नाम से ग्राम प्रमुख को संबोधित करना असंगत प्रतीत होता है।

पाण्डुकेश्वर पत्रों में 'कोट्टपाल' का उल्लेख आया है। मध्यकाल में पहाड़ी दुर्गों का सामरिक दृष्टि से अत्यधिक महत्व था, कोट्टपाल संभवतः ऐसे ही 'कोट' या दुर्ग का रक्षक अधिकारी रहा होगा। अभिलेखों में 'वर्त्मपाल पद भी मिलता है। वर्म का शाब्दिक अर्थ पथ' या 'सड़क' होता है। वर्तमान की भाँति ही प्राचीन काल में भी सड़कों का अत्यधिक महत्व था। व्यापार-वाणिज्य एवं दूरस्थ क्षेत्रों को जोड़ने के लिए राज्य द्वारा पथों का निर्माण कराया जाता था, इन सड़कों की सुरक्षा एवं देखभाल का दायित्व वर्मपाल पर था। पाण्डुकेश्वर अभिलेखों में आये खण्डरक्षाधिपति पद को बेनीप्रसाद ने अंगरक्षक श्रेणी में शामिल किया है जबकि सरकार इसे लघु क्षेत्र का प्रभारी अथवा राजसी अभियन्ता मानते हैं। रायचौधरी, महादण्डनायक पद को मुख्य सेनाध्यक्ष बतलाते हैं, संभवतः इसे न्यायिक अधिकार भी प्राप्त थे और यह राज्य में कानून एवं व्यवस्था का संरक्षण और दण्डविधियों की क्रियान्विति से सम्बद्ध दण्डनायकों का प्रधान रहा होगा। पाण्डुकेश्वर पत्रों में आये दण्डपाशिक, दशापराधिक जैसे पद कानून-व्यवस्था से सम्बद्ध प्रतीत होते हैं । दण्डपाशिक पद अपने नाम के अनुरूप अपराधियों को पकड़ने के लिए पाश् (हथकड़ी) का प्रयोग करता रहा होगा। दशापराधिक पद का अधिकारी दण्डस्वरूप लगाये गये धन को वसूलने का कार्य करता था।

पाण्डुकेश्वर पत्रों में विषयपति पद का उल्लेख मिलता है। गुप्तकाल में विषयपति (विषय या जिले का पदाधिकारी) का पद कुमारामात्य नामक राजकीय अधिकारी अथवा आयुक्तक अथवा जागरीदार महाराजा को दिया जाता थासंभवतः कत्यूरी सूर्यवंशी काल में भी यह पद इसी रूप में रहा होगा। प्रमातार पद भी कत्यूरी अभिलेखों में मिलता है। गुप्तकाल में भूमि-सर्वेक्षण के कार्य को करने वाले अधिकारी को 'प्रमातृ' कहा जाता था प्रतीत होता है कि कत्यूरी काल में भी प्रमातार, भूमि-सर्वेक्षण से सम्बन्धित रहा होगा। विनियुक्तक पद पाण्डुकेश्वर पत्रों में आया है, सरकार के अनुसार यह एक अधीनस्थ

अधिकारी था जिसकी नियुक्ति गर्वनर द्वारा की जाती थी। गुप्तकाल में 'शौल्किक' का कार्य नगर में प्रवेश करने वालों तथा हाट-बाजारों में विक्रय की वस्तुओं पर शुल्क वसूल करना था, कत्यूरी युग में भी शौल्किक का यही कार्य रहा होगा। गौल्मिक पद को एटकिंसन सैनिक अधिकारी मानते हैं। भोगिक एवं भागिक पद अत्यन्त प्राचीन हैं। भोगकर, भूमि का उपयोग करने के एवज में और भागकर कृषि उपज में राजा का हिस्सा था. इन्हें एकत्र करने वाले कर्मचारियों को ही भोगिक एवं भागिक कहा जाता था।

उपरोक्त महत्वपूर्ण पदनामों के अतिरिक्त ब्रह्मचारी, गौग्गुलिक, पारिषद जैसे पदनाम भी पाण्डुकेश्वर अभिलेखों में आये हैं, ये पदनाम धर्म से सम्बन्धित प्रतीत होते हैं। इन अभिलेखों में वर्णित पदाधिकारियों की वृहत सूची कत्यूरियों के व्यापक प्रशासनिक संगठन को बतलाती है साथ ही इस सूची से यह भी पता चलता है कि कत्यूरी सम्राटों ने राजनीतिक एवं सार्वजनिक जीवन से सम्बन्धित प्रायः प्रत्येक क्षेत्र में अपना प्रभाव स्थापित कर रखा था।

कार्तिकेयपुर कत्यूरी प्रशासन में राजा सर्वोच्च था, उसके द्वारा धारण की गयी बड़ी-बड़ी विरुदावलियाँ, जहाँ राजा के सर्वोच्च सत्ताधारी होने का संकेत करती हैं वहीं कुछ राजाओं की शूर वीरता एवं विजेता होने की परिचायक भी हैं। सूर्यवंशी शासक सर्वधर्म समभाव पर आस्था रखते थे. हालांकि भूदेव देव ने स्वयं को परम ब्राह्मण भक्त एवं बुद्ध श्रमण शत्रु घोषित किया था। कत्यूरी शासक उदार एवं दानी थे, विभिन्न मन्दिरों को दिये गये दान-पत्र इसके परिचायक है। राजा, शासन का केन्द्र बिन्दु होता था। वह न्याय, सेना एवं कार्यकारी शक्तियों का प्रधान था, संभवतः सभी मन्त्रियों, पदाधिकारियों की नियुक्ति एवं विमुक्ति का अधिकार उसी का था। विदेशी राज्यों के साथ सन्धि एवं विग्रह का निर्णय वही करता था।

राजा की सहायतार्थ एवं मंत्रणार्थ, मन्त्री परिषद रही होगी, जो राजा के प्रति अपने कृत्यों के लिए पूर्णरूपेण उत्तरदायी रही होगी। मन्त्रियों के अधीन एक से अधिक विभागों का उल्लेख भी मिलता है। शासन, अनेक विभागों में विभक्त था, अष्टादशप्रकृत्याधिष्ठानीयन जैसा पद अठारह विभागों के अध्यक्ष की ओर संकेत करता है, विभिन्न मन्त्रियों के कर्तव्य निर्धारित थे इनका उल्लेख पीछे किया जा चुका है।

राज्य की विशालता, यातायात माध्यमों की न्यूनता एवं भौगोलिक वैभिन्यता के कारण प्राचीन काल में एक ही केन्द्र से शासन करना सुगम नहीं था। अतः प्राचीन समय में शासन की सुविधा के लिए राज्य को अनेक इकाइयों में बाँटा जाता था। कत्यूरी अभिलेख भी उपरिक, ठक्कुर (ठाकुर), महासामन्त, सामन्त, प्रान्तपाल जैसे पदाधिकारियों का उल्लेख करते हैं, ये पदाधिकारी संभवतः कार्तिकेयपुर काल में प्रान्त या भुक्ति जैसी इकाइयों के शासक रहे होंगे। ऐसे सभी शासक राजा के सीधे अधीन रहे होगें, क्योंकि पाण्डुकेश्वर पत्रों में इन सभी को सम्बोधित और आदेशित किया गया है। केन्द्र की भाँति ही इन इकाइयों में भी विभागाध्यक्ष एवं अन्य कर्मचारी रहे होंगें जो कृषि, आन्तरिक शान्ति, सुरक्षा, न्याय, वन, पशु, कर, अभिलेख आदि से सम्बन्धित कार्यों में शासक को सहायता एवं परामर्श देते होगें।

कत्यूरी प्रशासन में विषय या जिला जैसी इकाई का उल्लेख भी मिलता है। इसके शासक को विषयपति कहा जाता था, गुप्त-शासन के अनुकरण में हम मान सकते हैं कि, विषयपति का पद कुमारामात्य नामक राजकीय अधिकारी अथवा आयुक्तक अथवा जागीरदार महाराज को दिया जाता था। इनकी सहायता के लिए भी अनेक कर्मचारियों/पदाधिकारियों की व्यवस्था रही होगी।

कत्यूरी अभिलेखों में नगर एवं ग्राम जैसी इकाईयों का उल्लेख हुआ है। नगरों के प्रशासन में श्रेष्ठी तथा गावों के प्रशासन में महत्तम की सहायता ली जाती रही होगी। प्रशासन में इनका भी महत्वपूर्ण योगदान रहा होगा, क्योंकि अभिलेखों में इन्हें भी आदेशित किया गया है।

कार्तिकेयपुर कत्यूरी काल में किसी प्रकार की मुद्रा निर्गमित नहीं की गयी है। सम्भवतः इस काल में वाणिज्यिक क्रियाकलाप मुख्यतः वस्तु विनिमय के द्वारा होते थे। पद्मटदेव के तामपत्र में नन्दन नामक व्यक्ति द्वारा भूमि को मूल्य देकर खरीदने और बदरिकाश्रम के पुजारी को उसे दान करने का उल्लेख आता है। कत्यूरी काल में भूमि के क्रय में सुवर्ण देने का उल्लेख अभिलेखों में हुआ है। इस सन्दर्भ में जोशी बताते हैं कि कुणिन्द, यौधेय और कुषाण सिक्कों के उपरान्त दसवीं सदी ईसवी तक उत्तरांचल में मुद्राओं के प्रमाण नहीं मिलते हैं इसका कारण बताते हुए वह लिखते हैं कि, उत्तर-कुणिन्दकाल में उत्तराखण्ड में मौद्रिक अर्थव्यवस्था का अत्यन्त सीमित भाग था, जैसा कि हाल तक

स्थानीय व्यापार वस्तु विनिमय द्वारा होता था और अन्य आर्थिक गतिविधियाँ जजमानी प्रणाली' द्वारा निर्देशित होती थीं।

कार्तिकेय कत्यूरी काल आर्थिक समृद्धि का काल था क्योंकि ये उन्हीं प्राचीन सूर्यवंशी क्षत्रियो में से एक थे जिसमें इक्ष्वाकु, रघु और श्री राम जैसे महान राजा है। इस काल के अभिलेखों में प्रचुर दान देने का उल्लेख आता है। कत्यूरी काल में निर्मित विभिन्न भव्य एवं विशाल मन्दिर-समूह, कलात्मक प्रतिमाएँ एवं मूर्तियाँ, नौले, बावड़ियाँ आदि भी इस काल की समृद्धि के परिचायक हैं। कत्यूरी काल की विस्तृत प्रशासनिक एवं सैनिक व्यवस्था भी राज्य की समृद्धि को व्यक्त करती है। कार्तिकेपुर कत्यूरी अभिलेखों में किसी प्रकार के कर का उल्लेख नहीं मिलता है लेकिन करों से सम्बन्धित विभिन्न अधिकारियों का उल्लेख आता है। कार्तिकेपुर सूर्यवंशी का बृहत साम्राज्य लगभग पच्चीस सौ वर्ष प्राचीन है जो नेपाल से लेकर अफगानिस्तान के काबुल व पूर्व मैं बिहार के भागलपुर तक फैला था हालांकि इसके कुछ अवशेष बंगाल में भी देखने को मिलते है कार्तिकेयपुर सूर्यवंशी साम्राज्य में सात चक्रवर्ती सम्राट हुए सभी गिरिराज चक्रचूड़ामणि की उपाधि धारण करते थे।तुर्की आक्रांताओं के द्वारा नालंदा विश्वविद्यालय जलाए जाने पर कत्यूरी सूर्यवंशी राजा पुरुषोत्तम सिंह एक विशाल सेना के साथ हिमालय से बिहार की तरफ आते है। इसी सम्बन्ध में यह कत्यूरी शासन से संबंधित एक शिलालेख है। यह बोधगया के अंदर ही पाया गया था, इसलिए यह स्पष्ट है कि कत्यूरियों ने वहां अपना शासन स्थापित किया था। कुमाऊं के सूर्यवंशी कत्यूरियों ने सनातन धर्म और अपने क्षत्रिय धर्म को काफी अच्छे से निभाया। लेकिन हम जो देख सकते हैं, वह यह है कि सूर्यवंशी कत्यूरियों ने आधुनिक नेपाल, कुमाऊं और मैदानी इलाकों के कुछ हिस्सों पर शासन किया। 1100 के दशक के अंत में तुर्कों ने इस क्षेत्र पर कब्ज़ा कर लिया था, लेकिन ऐसा लगता है कि कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो ने आखिरी हंसी हंसते हुए तुर्कों पर हमला किया और उन्हें बोधगया से निकाल दिया। पुरूषोत्तम सिंह द्वारा संचालित सूर्यवंशी राजाओं की सेना ने पश्चिमी नेपाल में प्रवेश किया व अश्क चल्ला और पीलीभीत के चिंदा की सेनाओं द्वारा संचालित इस आक्रमण के बाद तुर्कों को वहां से खदेड़ दिया गया और उन्होंने लंबे समय तक अपना अधिकार बनाए रखा। यह बात बिल्कुल भी अस्वीकार्य नहीं है, क्योंकि 1197-1204 के बाद तुर्कों ने समूचे गंगा के मैदान पर कब्जा कर लिया

था, तथा एक बड़ी तुर्क सेना ने बोधगया पर कब्जा कर उसे काफी नुकसान पहुंचाया था, जिससे हिमालयी शासक चिंतित थे।

कत्यूरी सूर्यवंशी राजवंश की प्रारंभिक राजधानी जोशीमठ (चमोली) में थी। कत्यूरी नरेशों का राज्य चमोली के पश्चिम में सतलुज नदी के तट से लेकर दक्षिण के मैदान तक फैला था। पूरब में भारत तिब्बत की सीमा पर कुछ गांव तक सीमित था। वर्तमान काशीपुर, पीलीभीत और संपूर्ण रूहेलखंड उनके शासन के अंतर्गत आते थे।

राजनैतिक व्यवस्था

मौर्य वंश की भांति ही कत्यूरी सूर्यवंशी नरेशो ने प्रशासन व्यवस्था बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण पद नियुक्त किए थे।

• राजा ने सीमाओं की सुरक्षा के लिए प्रांतपाल नियुक्त किया था। ताकि बाहरी आक्रमणों से सुरक्षा मिल सके। और सीमाओं में होने वाली गतिविधियों की सूचना अति शीघ्र प्राप्त हो ।

• जैसे कि कत्यूरी राजवंश ने पहाड़ों पर शासन व्यवस्था स्थापित की थी। तो जरूरी था उसके क्षेत्र में सभी पहाड़ों की रक्षा की जाए । इसके लिए प्रत्येक पहाड़ पर घट्टपाल नियुक्त किए थे ।

• इसके अलावा सड़क परिवहन की सुविधाएं बनाए रखने के लिए वर्मपाल पद स्थापित किया। वर्मपाल सीमावर्ती मार्गो से आने-जाने वाले प्रत्येक व्यक्ति पर कड़ी निगाह रखता था ।

प्रशासनिक व्यवस्था

कत्यूरी सूर्यवंशी राजाओं की उपाधि रजबार, गिरिराज चक्रचूड़ामणि थी। राजा राज्य में सर्वोपरि शासक होता था। और सुव्यवस्थित राज्य को चलाने के लिए "उपरिक" नियुक्त करता था। (उपरिक अर्थात वर्तमान समय के राज्यपाल)। जनपद को प्रांतों में विभाजित किया गया था। और प्रांतों को जिलों में जिन्हें विषय कहा जाता था। विषय के संचालक को विषयपति कहते थे। सूर्यवंशी कत्यूरी शासन को पांच विषयों (ज़िलों) में विभाजित किया गया था।

1. कार्तिकेयपुर विषय चमोली जिले वाला क्षेत्र

2. टंकणपुर विषय अलकनंदा भागीरथी संगम से उत्तर वाला क्षेत्र

3. अंतरराग विषय भागीरथी तथा अलकनंदा के मध्यवर्ती वाला क्षेत्र

4. एशाल विषय भागीरथी तथा यमुना वाला क्षेत्र

5. मायापुरहाट - हरिद्वार के निकटवर्ती भाबर क्षेत्र

कत्यूरी प्रशासन में तहसील स्तर की प्रशासनिक इकाई को "कर्मात" कहा जाता था।

पांडुकेश्वर दान पत्र तथा सुभिक्षराज लेख के अनुसार कत्यूरी वंश के प्रशासनिक संरचना के तहत् तहसील स्तर की प्रशासनिक इकाई को 'कर्मांत' कहा जाता था। कत्यूरी शासन में प्रांतों को विषयों (जिलों) में विभाजित किया गया था। विषयों को प्रशासनिक दृष्टि से छोटी इकाइयां कर्मांत में विभाजित किया गया था। कत्यूरी अभिलेखों एवं ताम्रपत्रों में प्रशासनिक संरचना तथा अधिकारियों का उल्लेख मिलता है।

कत्यूरी प्रशासन में तहसील स्तर की प्रशासनिक इकाई को "कर्मात" कहा जाता था।

पांडुकेश्वर दान पत्र तथा सुभिक्षराज लेख के अनुसार कत्यूरी वंश के प्रशासनिक संरचना के तहत् तहसील स्तर की प्रशासनिक इकाई को 'कर्मांत' कहा जाता था। कत्यूरी शासन में प्रांतों को विषयों (जिलों) में विभाजित किया गया था। विषयों को प्रशासनिक दृष्टि से छोटी इकाइयां कर्मांत में विभाजित किया गया था। कत्यूरी अभिलेखों एवं ताम्रपत्रों में प्रशासनिक संरचना तथा अधिकारियों का उल्लेख मिलता है।

रक्षा व्यवस्था

किसी भी राज्य व शासक को शांति एवं सुव्यवस्था बनाए रखने के लिए एक रक्षा विभाग बनाना ही पड़ता है। ऐसे ही सुव्यवस्था कत्यूरी सूर्यवंशी नरेशो के ताम्रपत्रों में उल्लेख है जिसमें विभाग के अधिकारियों का नाम और पद लिखा है।

दांण्डिक (खड्गिक) राज्य तथा जनता की सुरक्षा का दायित्व

दोषापराधिक - अपराधियों को पकड़ने वाला (दरोगा)

चोरोद्धरणिक - चोर डाकू को पकड़ने वाला सिपाही

दुःसाध्यसाधनिक - गुप्तचर विभाग

दण्डपाशिक या महादण्डनायक पुलिस विभाग के प्रमुख एवं सर्वोच्च अधिकारी।

सैन्य व्यवस्था

सूर्यवंशी वीर वाहिनी अपने शौर्य व सफलताओं के लिए जग प्रसिद्ध थे। इसी के बल पर २००० से अधिक वर्षों तक उत्तराखंड पर शासन किया। इसका मुख्य श्रेय सेना को जाता है। सेना को चार भागों में विभाजित किया था

1. पदातिक- पैदल सैनिकों के सर्वोच्च अधिकारी को "गोल्मिक" कहा जाता था।

2. अश्वारोही - अश्वों की सेना के सर्वोच्च अधिकारी को "अश्वबलाधिकृत" कहा जाता था।

3. गजारोही - हाथियों की सेना के सर्वोच्च अधिकारी को "हस्तीबलाधिकृत" कहते थे।

4. उष्ट्रारोही- ऊंटों की सेना के सर्वोच्च अधिकारी को "उष्ट्राबलाधिकृत" कहते थे।

आर्थिक स्थिति

कर व्यवस्था

किसी भी राज्य की आय का मुख्य साधन कर होता है। कत्यूरी शासकों ने आय प्राप्त करने के लिए नरपति पद की नियुक्ति की थी। "नरपति" सीमा पर कर की वसूली करता था। अजनबी लोगों की जांच पड़ताल करता था। इसके अतिरिक्त "भोगपति" व "शौल्किक" नामक अधिकारी राज्य के अंदर शुल्क व कर वसूला करते थे।

कृषि व्यवस्था

कृषि की उन्नति का उत्थान के लिए क्षेत्रपाल के पद की नियुक्ति की गई थी जिसका कार्य वर्तमान पटवारी के रूप में होता था। भूमिका मापना और सहायता प्राप्त करना आदि कार्य क्षेत्रपाल करता थाा। कत्यूरी शासन में द्रोणाबापम (पाथा) व नालीबापम (२ सेर) भूमि का उल्लेख है। आज भी उत्तराखंड में द्रोणबापम और नाली पाथा का प्रयोग करते हैं।

खनिज वन संपदा

पहाड़ों में सबसे बड़ी संपत्ति खनिज और वन संपदा को माना जाता है। खनिज व वनों की रक्षा के लिए खण्डपति (खण्डरक्षास्थाधिपति) की पद व्यवस्था की गयी थी। इसके अतिरिक्त उद्योग व व्यापार की देखरेख भी इसी को प्रदान की गई।

धार्मिक एवं सांस्कृतिक व्यवस्था

कत्यूरी सूर्यवंशी राजवंश की प्रमुख भाषा संस्कृत थी जो भगवान राम के शासन में प्रयोग की जाती थी। जबकि आम बोलचाल की भाषा पाली थी। कत्यूरी राज्य में अधिकांश हिंदू धर्म के अनुयायी थे। और कुछ क्षेत्रों में बौद्ध धर्म और जैन धर्म के लोग बसे हुए थे। कत्यूरी शासन के अंतर्गत बौद्ध तथा जैन मतावलंबियों को अपने मत के अनुसरण की एवं प्रचार की पूर्ण अनुमति दी। कत्यूरी भगवान शिव के उपासक थे। कत्यूरी सूर्यवंशी वंश का शासक ललितसूरदेव कट्टर ब्राह्मण धर्मावलंबी था। कत्यूरी शासकों ने साम्राज्य विस्तार के साथ स्थापत्य कला पर विशेष ध्यान दिया। और अनेकों मंदिर एक विशेष शैली से बनवाए। जिसे इतिहास में कत्यूरी शैली के नाम से जाना गया। प्रारंभिक समय में कत्यूरी शैली को नागर शैली कहा गया। आदिशंकराचार्य के आने के बाद उन्होंने सूर्यवंशी राजाओं का जोशीमठ में राज्याभिषेक किया व उनके मार्गदर्शन कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो ने कई मंदिरों का निर्माण निर्माण करवाया जिसमें से पांच केदार मंदिर मुख्य हैं। आदिशंकराचार्य और सूर्यवंशी क्षत्रियों का एकीकरण सनातन संस्कृति के धरोहरों का निर्माण, संरक्षण व इनकी रक्षा करना था। आदिशंकराचार्य के मार्गदर्शन में कार्तिकेयपुर सम्राट भूदेव ने केदारनाथ धाम का पुनर्निर्माण करवाया था।

• नरसिंह मंदिर (जोशीमठ) वसंतनदेव द्वारा - कत्यूर शैली

• जागेश्वर धाम (अल्मोड़ा) नटराज मंदिर, दुर्गा मंदिर, लकुलिश मंदिर और महेशमंदिनी मंदिर - इष्टगणदेव द्वारा कत्यूर शैली

• बैजनाथ मंदिर (बागेश्वर), केदारनाथ धाम मंदिर- भू-देव द्वारा नागर शैली/कत्यूर शैली

• कटारमल सूर्य मंदिर (अल्मोड़ा) कटारमल देव (महान सूर्यवंशी शासक)

इनके अलावा गंगोत्री (उत्तरकाशी), यमनोत्री (उत्तरकाशी, केदारनाथ मंदिर (रूद्रप्रयाग) भी कत्यूर शैली में बनाए गए थे।

सभी कत्यूरी सूर्यवंशी राजा ब्राह्मणवादी व सनातन धर्मके कट्टर अनुयायी थे और उन्होंने कई मंदिरों का निर्माण करवाया था जो उत्तराखंड के मुख धरोहर है। जोशीमठ के वासु देव मंदिर का श्रेय सूर्यवंशी राजा वासुदेव को जाता है जो बड़े ही धर्म वीर और न्याय प्रिय थे ये वैष्णव धर्म को मानने वाले थे व भगवान विष्णु के नरसिंह अवतार के भक्त थे इसी क्रम में उन्होंने नरसिम्हा देव के मंदिर का निर्माण कराया जहां पर इनका नाम भी

उल्लेख किया गया है। आगे बसंत देव को राज्य में तीर्थयात्रा मार्गों पर कई आश्रय-झोपड़ियाँ और धर्मशालाएँ बनवाने के लिए जाना जाता है। त्रिभुवनराज देव को व्याघ्रेश्वरदेव (संभवतः बागेश्वर) मंदिर को ढाई द्रोण की भूमि देने के लिए जाना जाता है। इससे यह संकेत मिलता है कि उस देवता का मंदिर लगभग ८९०–९०० ई. में पहले से ही मौजूद था, जब वे शासन करते थे। जागेश्वर मंदिर परिसर में संभवतः निम्बर्ता देव के शासनकाल के दौरान बनाया गया था। इष्टांगदेव को जागेश्वर में नव दुर्गा, महिषासुरमर्दिनी, लकुलेश और नटराज के मंदिरों से युक्त दूसरे मंदिर समूह के निर्माण का श्रेय दिया जाता है। बौद्ध विरोधी भू देव एक भक्त ब्रह्मन परायण थे, अर्थात ब्राह्मणों के प्रति समर्पित थे। आदिशंकराचार्य वसम्राट भूदेव के बीच गहरा संबंध था। आदिशंकराचार्य सूर्यवंशी सम्राट भूदेव से काफी प्रभावित व प्रसन्न थे। उन्होंने सम्राट भूदेव का जोशीमठ कार्तिकेय पुर में राज्याभिषेक किया व आदिशंकराचार्य के मार्गदर्शन में सम्राट भूदेव ने कई बड़े मंदिरों का निर्माण करवाया, जिसमें से केदारनाथ धाम व बैजनाथ धाम का निर्माण जो कत्यूरी शैली मैं बना हुआ है आदि मुख्य मंदिरों का निर्माण करवाया। आदिशंकराचार्य के मार्गदर्शन में सम्राट भूदेव ने बौद्ध धर्म का विरोध व नरसंहार किया कई बड़े बौद्ध राजाओं को हराकर धर्म की पताका को लहराया।

उन्हें बागेश्वर में मंदिर निर्माण गतिविधि की शुरुआत करने का श्रेय दिया जाता है, लेकिन उस मूल मंदिर का कुछ भी अब मौजूद नहीं है। संभवतः, वर्तमान में खड़ा मंदिर पहले की नींव पर बनाया गया था। इसी तरह, यह कहा जाता है कि उन्होंने बैजनाथ में कई मंदिर बनवाए। अब उनके बारे में केवल परंपराएं ही बची हैं। परंपराएं पद्मात देव को जोशीमठ, भेटा और बैजनाथ में नौला के मंदिरों का महान निर्माता मानती हैं।

मुख्य भूमि की शास्त्रीय शैली में मंदिर बनाने का उद्यम उत्तराखण्ड में कत्यूरी सूर्यवंशी साम्राज्यवाद के उदय से बहुत पहले ही स्थापित हो चुका था। उत्तराखण्ड के पवित्र तीर्थस्थलों ने न केवल भिक्षुकों और आम लोगों को, बल्कि मुख्य भूमि के राजकुमारों, धनिकों और श्रेष्ठियों को भी आकर्षित किया। उनमें से कई धनी भक्तों ने मंदिर और धर्मशालाएँ बनवाकर अपनी तीर्थयात्रा पूरी की। इस धारणा पर शायद ही संदेह किया जा सकता है, क्योंकि हमारे समय में भी, तीर्थयात्रा मार्गों और तीर्थस्थलों पर इस तरह की परोपकारी गतिविधियाँ आम हैं। चूँकि, पत्थर आधारित शास्त्रीय मंदिरों के निर्माण के लिए स्थानीय विशेषज्ञता हिमालय के अंदरूनी इलाकों में मुश्किल से ही उपलब्ध थी,

जहाँ केवल लकड़ी ही निर्माण की सामग्री थी, और इसे संभालने के लिए विशेषज्ञता प्रचुर मात्रा में उपलब्ध थी। जाहिर है, उन पत्थर के मंदिरों के लिए कारीगर मुख्य भूमि से आयात किए गए थे। उदाहरण के लिए, रोहतक (रौहितक) के नागदत्त के पुत्र ईश्वरनाग को लाखामंडल में मंदिर बनाने के लिए नियुक्त किया गया था। इस क्षेत्र को अपने व्यापार के लिए संभावित पाते हुए, उनमें से कई ने धार्मिक और राजधानी केंद्रों के आसपास स्थायी रूप से बसने के बारे में सोचा होगा। इस प्रकार, शास्त्रीय पत्थर-आधारित मंदिर वास्तुकला, चिरस्थायी और ऊंचे देवदारु के पेड़ों के जंगलों के बीच यहाँ आकर बस गई। जब कत्यूरी सत्ता में आए, तो उन्होंने अपने राज्यों में पहले से ही मौजूद ब्राह्मण देवताओं के शास्त्रीय मंदिरों के संचालन और रखरखाव के लिए संरक्षण और भौतिक साधन बढ़ाए। कई ताम्रपत्र अनुदान उस शाही उदारता के अकाट्य प्रमाण हैं। कत्यूरियों ने न केवल अच्छी तरह से परखी हुई प्रशासनिक प्रणाली को अपनाया।

कार्तिकेयपुर सम्राज्य में अनेक पराक्रमी, धर्मपालक, वीर व न्यायप्रिय सम्राट हुई उनमें से ललितसुरदेव की कीर्ति सबसे ज्यादा है ये चक्रवर्ती सम्राटों में से एक थे व गिरिराज चक्रचूड़ामणि की उपाधि धारण करते थे। इनका पांडुकेश्वर शिलालेख इस बात के प्रमाण है जहां उन्हें धर्म पालक क्षत्रिय राजा के रूप में बताया गया है व उनके महान सूर्यवंशी पूर्वज पृथु आदि से जोड़ा गया है। इसी क्रम मे कटारमल देव की ख्याति हुई है, ये बड़े धर्मनिष्ठ और प्रजा पालक क्षत्रिय थे इन पर कत्यूर सूर्यवंशीयो के आराध्य व पूर्वज और सूर्यदेव की विशेष कृपा थी, सूर्यदेव की विशेष कृपा से इनमें बड़ा बल और तेज था शत्रु इनके समक्ष आने से भी डरते थे। सम्राट कटारमल देव ने अपने नाम के अनुसार अपने आराध्य कटारमल सूर्य मंदिर का निर्माण कराया व कई सूर्य मूर्तियों की प्रतिष्ठा करवाई। इसके बाद निम्बर्त देव द्वारा राज्य शुरू किया गया। उन्होंने लगभग 900 ई. से 915 ई. तक शासन किया। उन्हें अपने हथियारों के बल पर स्थानीय सामंतों और सरदारों को वश में करने के बाद उत्तरांचल में मज़बूती से कत्यूरी शासन की स्थापना का श्रेय दिया जाता है। निम्बर्ता देव के बाद इष्टांग ने उत्तराधिकार प्राप्त किया, जिन्होंने लगभग 915 ई. से 930 ई. तक शासन किया। उनके बारे में कहा जाता है कि "उनकी तलवार की धार ने उग्र हाथियों को मार डाला।" चूँकि, हिमालय क्षेत्र के अंदरूनी इलाकों में हाथी का आना उचित नहीं लगता परंतु यह अतिशयोक्ति तराई क्षेत्र में उनके सफल सैन्य अभियान का संकेत हो सकती है, जहाँ उन्होंने संभवतः युद्ध किया होगा और विजय प्राप्त की थी। इसके

बाद उन्होंने स्थानीय सरदारों की हाथी पर सवार सेना को हराया। इससे यह भी संकेत मिलता है कि कत्यूरियों ने उप-हिमालयी क्षेत्र से आगे भाबर और तराई क्षेत्रों में अपना नियंत्रण बढ़ाया था। इसके बाद ललितासुर देव (सप्तम) का नाम आता है, कार्तिकेयपुर सूर्यवंशी सम्राट भूदेव के बारे मे बागेश्वर के शिलालेख में उन्हें ब्राह्मण-परायण और परम बुद्ध श्रमण रूपु, यानी ब्राह्मणों का कट्टर अनुयायी और बौद्ध भिक्षुओं का दुश्मन बताया गया है। उत्तराखंड में कत्यूरी प्रभुत्व शायद उनके शासनकाल के दौरान ही कम होना शुरू हुआ। राज्य के स्थानीय सामंती सरदारों ने अपनी स्वतंत्रता का दावा करना शुरू कर दिया। बोनी-गढ़ में से एक चांदपुर के परमारो ने उस आंदोलन का नेतृत्व किया। उनके पाश्चात्य पद्माता देव सम्राट बने, वे एक साहसी शासक थे, जिन्होंने लगभग 1015 ई. से 1045 ई. तक शासन किया। उन्होंने पहले से ही कमजोर पड़ रहे साम्राज्य को फिर से मजबूत करने के लिए बहुत प्रयास किया, जिसमें उन्होंने छोटे-मोटे युद्धरत सरदारों को वश में किया। "उन्होंने गढ़वाल क्षेत्र में उनमें से कई को अपने अधीन करने में सफलता प्राप्त की, लेकिन वे कुमाऊं को पुनः प्राप्त करने में विफल रहे, जहाँ उस समय तक चंदों ने अच्छी तरह से जड़ें जमा ली थीं। संभवतः उनके शासनकाल के दौरान ही पश्चिमी तिब्बत में गुगे के भिक्षु-राजा यशे-ओ ने लगभग 1040 ई. में सोने की खोज में गढ़वाल के क्षेत्र में कदम रखा था। सुभिक्षराज देव थे। उन्होंने लगभग 1045 ई. से 1060 ई. तक शासन किया। उन्होंने अपनी राजधानी का नाम अपने नाम पर सुभिक्षपुर रखा। हालाँकि, उस राजधानी शहर का स्थान अनिश्चित है। ऐसा हो सकता है कि उन्होंने कत्यूरी राजधानी कार्तिकेयपुर का पारंपरिक नाम बदलकर सुभिक्षपुर रख दिया हो, जो उनके बाद उपयोग से बाहर हो गया। सुभिक्षराज देव के उत्तराधिकारी धाम देव या ब्रह्म देव और बीरा देव (वीर देव) थे। इन दोनों के नाम शिलालेख में नहीं मिलते, लेकिन पारंपरिक स्रोतों से उन्हें अक्षम और अत्याचारी शासकों के रूप में जाना जाता है, जिन्होंने लगभग 1065 ई. तक बहुत ही कम समय तक शासन किया होगा। उत्तराखण्ड के सामाजिक-सांस्कृतिक वातावरण में कत्यूरी साम्राज्यवाद का योगदान महत्वपूर्ण रहा है। देवभूमि के रूप में उत्तराखण्ड का महत्व, अर्थात् ईश्वर का निवास, तथा भारतीय मुख्य भूमि से हिमालय पार के देशों तक के प्राचीन मार्गों पर इसकी रणनीतिक स्थिति ने न केवल मुख्य भूमि तथा पड़ोसी देशों के राजकुमारों, धनिकों तथा श्रेष्ठियों को आकर्षित किया, बल्कि ऋषियों, तीर्थयात्रियों तथा व्यापारियों को भी समान रूप से आकर्षित किया। कार्तिकेपुर

कत्यूरी साम्राज्यवाद का अंतिम चरण काफी हद तक अस्पष्ट है और इसके विघटन के लिए कोई उचित स्पष्टीकरण उपलब्ध नहीं है। फिर भी, भू देव के शासन के दौरान, कत्यूरी आधिपत्य में क्षरण की प्रक्रिया तब प्रकट होने लगी थी, जब छोटे सरदारों ने अधीनता की बेड़ियाँ तोड़नी शुरू कर दीं। बाद के शासकों-धाम देव और बीरा देव ने राज्य पर शासन करने में अपनी अक्षमता का परिचय दिया। प्रजा पर उनके निर्मम अत्याचार ने ग्यारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में अचानक और अपमानजनक समापन की प्रक्रिया को और तेज़ कर दिया।

इस क्षेत्र में कई परंपराएँ प्रचलित हैं, जिनमें बाद के कत्यूरी शासकों धाम देव और बीरा देव द्वारा किए गए अत्याचारों पर प्रकाश डाला गया है, जिसके कारण उस राजवंश का पतन हुआ। स्थानीय देवता द्वारा गाए जाने वाले पारंपरिक गीतों में से एक में लोगों की पीड़ा का वर्णन इस प्रकार किया गया है:

"हंकारो, तुम्हारे बाबा जिस ऊंचा गाड़ नीचा वनया; नीचा गाड़ ऊंचा बनाया, मर गाड मैदान बनाया; हांकारो, तुम्हारे बाबा सुलती नाली ले लिंचा; उलटी नाली ले दींचा, तरूणी तिरिया रहों नी दिना; वारुणी-बकारी रहों नी दिना; महाराजानाके राजा पेड़ों पर फलफूल नी रहो दिना।" कंचन पुर नेपाल में सूर्यवंशी कत्यूरी राजा ब्रम्ह देव के दूसरे पुत्र सिध्य देव ने तपस्या की थी जो बाद में बाबा सिद्धनाथ के नाम से प्रसिध्य हुए १३वी शताब्दी में सोम देव के पुत्र भरत देव और तुंग देव हुए भरत देव के पुत्र ब्रम्ह देव धर्मात्मा राजा थे इनके दो पुत्र हुए पूर्ण देव और सिद्ध देव हुए सिद्ध देव ने तपस्या की बाद में यह क्षेत्र कत्यूरी राजा त्रिलोक पाल देव जिन्होंने भोट की राजकुमारी से विवाह किया था के वंशजो ने शासन किया सिद्ध देव को तपस्या के बाद ने चंदेश्वर महादेव सिध्यनाथ के नाम से जाना जाता है कत्यूरी राजा ब्रम्हदेव ने ब्रम्ह देव मंडी स्थापित किया था।

दसवीं शताब्दी के अंत में कार्तिकेयपुर के कत्यूरी राज्य के पतन के बाद, सामंती सूर्यवंशी जागीरें टूट गईं और उन्होंने अपनी स्वतंत्रता घोषित कर दी। उनमें से ग्यारह सूर्यवंशी रियासतें (1) असकोट व अस्कोट की शाखा महसों व अमोड़ा (2) पूर्व में कुमाऊं से सटे नेपाल में डोटी, (3) काली-कुमाऊं में सुई, (4) बरहमंडल (अल्मोड़ा के आसपास), (5) कत्यूर (बैजनाथ), (6) द्वाराहाट और (7) लखनपुर-महत्वपूर्ण हैं। द्वाराहाट और लखनपुर के सरदारों के पास पाली क्षेत्र में कई बस्तियाँ थीं। उनमें से डोटी रियासत सबसे

मजबूत थी, जिसके अधीन न केवल कई अन्य रियासतें थीं, बल्कि उसने पहले के चंद शासकों को भी अपने अधीन कर लिया था। (8) सिरा राज्य (9) सौर राज्य (10) कुमूँ राज्य। (11) ग़गोली राज्य

उत्तर-कत्यूरी काल में कुमाऊँ के स्थानीय सूर्यवंशी राज्य।

तेरहवीं शताब्दी में महान सूर्यवंशी कार्तिकेयपुर कत्यूरी राज्य के पतनोपरांत स्थानीय राज्यों का उदय हुआ, जिसे उत्तर कत्यूरी काल कहा जाता है। कत्यूरियों के कुमाऊँ राज्य का विभाजन कत्यूरी राजपरिवार की विभिन्न शाखाओं में हुआ, जिनमें मुख्यतः अस्कोट के पाल और डोटी के राइका थे। उत्तर कत्यूरी कालखण्ड के आरंभिक वर्षों में कुमाऊँ के स्थानीय क्षत्रपों ने पश्चिमी रामगंगा से काली नदी तक के पर्वतीय भू-भाग पर कत्यूर, बागेश्वर, द्वाराहाट, गंगोली, सीरा, सोर और कुमूं (चंपावत) राज्य स्थापित किये। तेरहवीं-चौदहवीं शताब्दी में इन क्षेत्रीय राज्यों में शक्ति-सन्तुलन बना रहा। लेकिन पन्द्रहवीं शताब्दी में चंपावत के चंद, सीरा के मल्ल और पाली-पछाऊँ के कत्यूरियों में त्रिकोणीय संघर्ष शुरू हो गया, जिसे कुमाऊँ का त्रिकोणीय संघर्ष कहा जाता है। सोलहवीं शताब्दी के अंतिम चतुर्थांश में चंपावत के चंद त्रिपक्षीय संघर्ष में सफल हुए और आधुनिक कुमाऊँ का भूगोल चंद राज्य के रूप में स्थापित हो गया। उत्तर-कत्यूरी काल के सन् 1279 ई. को इतिहासकार महान कत्यूरी राज्य का विभाजन वर्ष मान्य करते हैं। इस वर्ष कत्यूरी राजा त्रिलोकपालदेव के पुत्र अभयपाल ने काली के दायें तटवर्ती बगड़ीहाट के निकट लखनपुरकोट में अपनी राजधानी स्थापित की। अस्कोट-पाल और डोटी-मल्ल वंश की प्रकाशित वंशावली के आधार पर त्रिलोकपालदेव कत्यूरी वंश के 36 वें क्रमांक के राजा थे। इस प्राचीन राजवंश के मूल पुरुष सूर्यवंशी शालिवाहनदेव थे, जो अयोध्या से उत्तराखण्ड आये थे। त्रिलोकपालदेव के पुत्र अभयपाल से संबंधित वर्ष सन् 1279 तथा कत्यूरी राजवंशावली क्रमांक के आधार पर शालिवाहन लगभग तीसरी शताब्दी में उत्तराखण्ड आये थे। शालिवाहन की वंशावली में 20 वें व 21 वें क्रमांक पर क्रमशः आसन्तिदेव और बासन्तिदेव का उल्लेख किया गया है, जो कत्यूरी घाटी के राजा थे और कत्यूरी कहलाये। इसी कत्यूरी राज्य के विघटन के फलस्वरूप तेरहवीं शताब्दी में स्थानीय राज्यों का उदय हुआ था।

तेरहवीं शताब्दी और राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य-

तेरहवीं शताब्दी के अंत तक उत्तराखण्ड का शक्तिशाली कत्यूरी राज्य स्थानीय क्षत्रपों में विभाजित हो चुका था। ''यह युग समूचे उत्तर-भारत में बहुत राजनैतिक उथल-पुथल का भी था। दिल्ली में गुलाम वंश की स्थापना (सन् 1206 ई.) हो चुकी थी। मध्य हिमालय में यह एक ऐसा अवसर था, जब सर्वत्र बड़े राज्यों के स्थान पर छोटे-छोटे प्रान्तपति स्वतंत्र होकर महत्वाकांक्षी हो गये थे।'' इन ऐतिहासिक घटनाओं के मूल में बारहवीं शताब्दी के अंतिम दशक में हुए वाह्य आक्रमण थे। इस पर्वतीय क्षेत्र पर सन् 1191 ई. में नेपाली शासक अशोकाचल्ल ने आक्रमण किया था। वहीं दिल्ली पर तुर्क मुहम्मद गोरी ने आक्रमण किया, जिसने तराईन का प्रथम युद्ध (1191 ई.) हारने के पश्चात भी तराईन के द्वितीय युद्ध (1192 ई.) में दिल्ली के शासक पृथ्वीराज चौहान को पराजित किया था। यह एक संयोग था कि सन् 1191 ई. में भारत पर उत्तर-पश्चिम और उत्तराखण्ड पर पूर्व दिशा से वाह्य आक्रमण हुआ। राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में जहाँ मुहम्मद गोरी भारत के कुछ क्षेत्रों में मुस्लिम राज्य की नींव रखने में सफल हुआ, वहीं चमोली के गोपेश्वर त्रिशूल लेखानुसार आक्रमणकारी अशोकाचल्ल ने मध्य हिमालय में 'धर्म राज्य' की स्थापना की थी।

बारहवीं शताब्दी के अंतिम दशक में हुए वाह्य आक्रमण के कारण मध्य हिमालय क्षेत्र में धीर-धीरे शक्तिशाली कत्यूरी सत्ता का ह्रास होता गया। कुमाऊँ के संबंध में डॉ. रामसिंह लिखते हैं-''अतः कहा जा सकता है कि लगभग 12 वीं शताब्दी के पश्चात का कालखण्ड सोर (पिथौरागढ़) सहित कुमाऊँ में छोटे-छोटे राजतंत्रों के अभ्युदय का युग था। केन्द्रीय सत्ता के दुर्बल पड़ते ही उनके स्थानीय सामन्तों ने अपने को स्वतंत्र घोषित कर दिया था।'' उत्तराखण्ड के इतिहासकार इन स्थानीय सामन्तों को ही उत्तर कत्यूरी कहते हैं। सन् 1264 ई. के आस पास गंगोली/गंगावली क्षेत्र में भी एक स्वतंत्र सत्ता स्थापित थी, जिसे गंगोली का उत्तर कत्यूरी राजवंश कहा जाता है। गंगोलीहाट का जाह्नवी नौला अभिलेख गंगोली में उत्तर कत्यूरी राजसत्ता की पुष्टि करने वाला एक महत्वपूर्ण अभिलेख है।

गंगोली राज्य-

मध्य हिमालय क्षेत्र में प्रवाहित सरयू और पूर्वी रामगंगा के अंतस्थ क्षेत्र को 'गंगोली' कहा गया। ''सरयू और रामगंगा के बीच की रमणीक व उपजाऊ भूमि गंगावली (गंगोली)

के नाम से विख्यात है।'' वर्तमान में इस रमणीक व उपजाऊ भूमि गंगावली में पिथौरागढ़ जनपद के गंगोलीहाट, गणाई-गंगोली, बेरीनाग एवं थल तथा बागेश्वर जनपद के काण्डा, दुग-नाकुरी और कपकोट तहसील सम्मिलित हैं। यह समस्त क्षेत्र पश्चिम और दक्षिण में सरयू तथा पूर्व की ओर से पूर्वी-रामगंगा नदी से धिरा है। जबकि इस क्षेत्र के उत्तर में कफनी हिमनद का दक्षिणवर्ती पर्वत है, जिसके दक्षिणी पनढाल की विभिन्न धाराओं से ही सरयू और पूर्वी रामगंगा का उद्गम होता है। गंगोलीहाट तहसील के दक्षिण-पूर्वी भाग में स्थित रामेश्वर मंदिर से मात्र 50-70 मीटर दूरी पर सरयू और पूर्वी रामगंगा का प्रयाग है, जिसे 'रामेश्वर घाट' कहा जाता है।

रामेश्वर घाट के उत्तर और कफनी हिमनद के दक्षिणवर्ती पर्वत श्रेणी के मध्य भू-भाग या वैदिक नामकरण वाली नदियों सरयू और पूर्वी रामगंगा के अंतस्थ क्षेत्र में एक नवीन राजवंश का उदय हुआ, जिसे गंगोली का उत्तर कत्यूरी राजवंश कहा जाता है। कुछ विद्वान गंगोली के उत्तर कत्यूरी राजवंश को मणकोटी राजवंश से भी संबद्ध करते हैं। गंगोलीहाट नगर के निकटवर्ती मणकोट नामक एक प्राकृतिक दुर्ग से संचालित राज्य को मणकोटी राज्य तथा शासकों को मणकोटी राजवंश से संबद्ध किया जाता है। गंगोली क्षेत्र का इतिहास अति प्राचीन है। प्रागैतिहासिक कालीन ताम्र-निखात संस्कृति का केन्द्र बनकोट, पाताल भुवनेश्वर गुहा और कुमाऊँ के प्रसिद्ध नाग मंदिर आदि इस क्षेत्र के प्राचीन इतिहास के प्रमुख स्रोत हैं।

प्राचीन काल में यह क्षेत्रक्रमशः कुणिन्द, ब्रह्मपुर, कार्तिकेयपुर-कत्यूरी राज्य का अभिन्न अंग रहा था। कत्यूरी सूर्यवंशी राजवंश के पतनोपरांत तेरहवीं शताब्दी में यह क्षेत्र एक पृथक राज्य के रूप में स्थापित होने में सफल रहा था, जिसका श्रेय इतिहासकार गंगोली के उत्तर कत्यूरी राजवंश को देते हैं। इस राजवंश के अभिलेखीय साक्ष्य उपलब्ध हैं। गंगोलीहाट नगर के जाह्नवी नौले की वाह्य प्राचीर पर स्थापित लेखयुक्त शिलापट्ट गंगोली में उत्तर कत्यूरी राज्य को प्रमाणित करता है। तेरहवीं शताब्दी का यह अभिलेख उत्तराखण्ड में केन्द्रीय सत्ता के स्थान पर क्षेत्रीय राजसत्ता के स्थापित होने को प्रमाणित करता है।

डॉ. रामसिंह के अनुसार तेरहवीं-चौदहवीं शताब्दी के गंगोली के शासक-

1-राजा रामचंद्रदेव 1267ई., 1275ई. जाह्नवी नौला अभिलेख

2- राजा हमीरदेव (धारलदेव के बैजनाथ-अभिलेख के आधार पर)

3-लिंगराजदेव (धारलदेव के बैजनाथ-अभिलेख के आधार पर)

4- धारलदेव शाके 1274 (1352 ई.) बैजनाथ अभिलेख।

सीरा राज्य ।।

गंगोली और द्वाराहाट राज्य की भाँति कुमाऊँ के पूर्वी रामगंगा और काली नदी के मध्य भू-भाग पर सीरा राज्य का उत्थान हुआ। जहाँ के मूल निवासी किरातों के वंशज वनराजी या वनरौत थे, जिन्हें भारतीय संविधान ने जनजाति की श्रेणी में भोटिया, थारू और बुक्सा आदि जातियों के साथ अनुसूचित किया है। महाभारत काल में समूचे उत्तराखण्ड पर किरातों का प्रभुत्व था। कालान्तर में अन्य वाह्य जातियों के उत्तराखण्ड में प्रवेश और स्थापित होने के कारण किरात सीरा और आस पास के राज्यों तक सीमित हो गये। बागेश्वर अभिलेख में उल्लेखित राजा त्रिभुवनराजदेव की मित्रता किरात राजा से थी।

सीरा राज्य के भूगोल के निर्धारण में कुमाऊँ की प्रमुख नदियों काली, पूर्वी रामगंगा और गोरी गंगा का महत्वपूर्ण योगदान था। काली और उसकी सहायक नदियां गोरी गंगा तथा पूर्वी रामगंगा इस प्राचीन राज्य की क्रमशः पूर्वी, उत्तरी, व पश्चिमी भौगोलिक सीमा का निर्धारण करतीं थी। इस राज्य के उत्तर में प्रवाहित गोरी गंगा इसे भोट क्षेत्र तथा पूर्वी रामगंगा इसे गंगोली राज्य से पृथक करती थी। दक्षिण में सीमावर्ती राज्य सोर था, जहाँ के शासक बमशाही कहलाये थे। बम राजाओं का पारिवारिक संबध सीरा के राजाओं से था, जो रैका-मल्ल कहलाते थे। रैका-मल्ल शासक मूलतः कत्यूरी सूर्यवंशी वंश की डोटी शाखा के थे। सन् 1279 ई. में कत्यूरी राज्य के विभाजन के फलस्वरूप डोटी-मल्ल और अस्कोट-पाल वंश अस्तित्व में आये थे। सीरा राज्य की राजधानी सीराकोट में थी, जहाँ अब मलयनाथ देवता का मंदिर है। यह मंदिर एक ऊँचे पर्वत पर्वत पर है, जिसके दक्षिणी तलहटी में डीडीहाट नगर बसा है। यह नगर भी कत्यूरी हाट संस्कृति का केन्द्र था। यह नगर पिथौरागढ़ जनपद में 29° 39‘ 36‘‘ उत्तरी अक्षांश और 80° 16‘ 18‘‘ पूर्वी देशान्तर रेखा तथा समुद्र सतह से लगभग 1627 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है।

कत्यूरी राजा त्रिलोकपाल के दो पुत्र अभयपाल और निरंजनदेव थे। राज्य विभाजन के फलस्वरूप अभयपाल ने अस्कोट-पाल वंश तथा निरंजनदेव के पुत्र नागमल्लदेव ने डोटी-मल्ल वंश की स्थापना की थी। नागमल्ल के दो पुत्रों में से बड़े पुत्र शमशेरमल्ल के

वंशज मल्ल तथा छोटे पुत्र अर्जुनसाही के वंशज साही कहलाये। अभिलेखीय साक्ष्यों से स्पष्ट होता है कि तेरहवीं-चौदहवीं शताब्दी में अग्रलिखित राजाओं ने सीरा पर शासन किया था।

डॉ. रामसिंह के अनुसार तेरहवीं-चौदहवीं शताब्दी के सीरा शासक-

1- रायतारामृगांक, निरैपालदेव के ताम्रपत्र से

2- रायप्रतापनारायण, निरैपालदेव के ताम्रपत्र से

3- निरैपालदेव द्वारा निर्गत ताम्रपत्र शाके 1275 (1353 ई.) के आधार पर

द्वाराहाट राज्य-

द्वाराहाट अपने नाम से ही प्राचीन कत्यूरी राज्य की हाट संस्कृति का प्रतिनिधित्व करता है। यह नगर अल्मोड़ा जनपद में 29° 50‘ 33‘‘ उत्तरी अक्षांश और 79° 26‘ 52‘‘ पूर्वी देशान्तर रेखा तथा समुद्र सतह से लगभग 1510 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। यह ऐतिहासिक स्थल प्राचीन मंदिरों- बद्रीनाथ, केदारनाथ, गणेश, गूजर, मृत्युंजय और दूनागिरि के लिए प्रसिद्ध है। इस नगर के दक्षिण में रानीखेत, पूर्व में बगवाली-पोखर, उत्तर पूर्व में सोमेश्वर और उत्तर-पश्चिम में चौखुटिया स्थित है। भारतीय पुरातत्व विभाग के प्रथम महानिदेशक कनिंघम ने चौखुटिया को प्राचीन ब्रह्मपुर राज्य कहा था, जहाँ छठवीं शताब्दी में पौरव वंश ने शासन किया था। इस तथ्य की पुष्टि तालेश्वर ताम्रपत्र करते हैं। द्वाराहाट के निकटवर्ती बिन्ता में गगास नदी के बायें तटवर्ती स्थल पारकोट में कत्यूरी शैली का प्राचीन मंदिर और नौला स्थापित है। कोसी और गगास नदी के मध्य भू-भाग में सोमेश्वर क्षेत्र है, जहाँ कत्यूर कालीन सोमेश्वर महादेव का प्रसिद्ध मंदिर है।

उत्तर कत्यूरी कालखण्ड में सोमेश्वर, चौखुटिया, बिन्ता और बगवाली पोखर आदि उर्वरा कृषि क्षेत्र द्वाराहाट राज्य में सम्मिलित रहे होंगे। द्वाराहाट से एक मार्ग चौखुटिया तथा एक मार्ग सोमेश्वर होते हुए कत्यूरी राज्य की प्राचीन राजधानी बैजनाथ और बागेश्वर को जाता है। एक अन्य मार्ग बगवाली पोखर होते हुए चंद राज्य की राजधानी अल्मोड़ा को जाता है। अतः कुमाऊँ के प्राचीन इतिहास में द्वाराहाट का सामरिक महत्व अत्यधिक था।

द्वाराहाट राज्य का उदय सूर्यवंशी कत्यूरी राज्य के अवशेषों से हुआ। ‘‘यहाँ पर लगभग 64-65 देवालय व बाँवरियाँ हैं। प्रायः सब कत्यूरी राजाओं के समय के बने हुए हैं।’’

बाँवरियों को कुमाउनी में नौला कहते हैं। कत्यूरी कालखण्ड में मंदिर स्थापत्य के साथ-साथ नौला स्थापत्य का अत्यधिक विकास हुआ था। स्थापत्य कला की दृष्टि से द्वाराहाट के नौले और मंदिर उच्चकोटि के हैं। स्थानीय मान्यताओं के अनुसार शीतला, द्रोणागिरि और विभांडेश्वर मंदिर का जीर्णोद्धार आदि गुरु शंकराचार्य ने नौवीं शताब्दी में करवाया था। द्वाराहाट के बद्रीनाथ मंदिर की मूर्ति पर संवत् 1105 उत्कीर्ण है। इसी प्रकार गणेश मंदिर में शाके 1103 उत्कीर्ण है। ''द्वाराहाट के मृत्युजंय मंदिर में विजयदेव-लिहदेव का शाके 1211 तथा कालीखोली की गरुड़ारूढ़ विष्णु की भग्न प्रतिमा पर शाके 1220 अंकित लघुलेख में अनन्तपालदेव का उल्लेख प्राप्त हुआ है।''

डॉ. रामसिंह के अनुसार तेरहवीं-चौदहवीं शताब्दी के द्वाराहाट शासक-

1- विजयदेव (द्वाराहाट अभिलेख के आधार पर)

2- लिहदेव (1211/1217?) (1295 ई.) (द्वाराहाट अभिलेख के आधार पर)

3- अणंतपालदेव शाके 1220 (सन् 1298 ई)

द्वाराहाट पाली-पछवान क्षेत्र का राजधानी केंद्र था, जब तक कि रानीखेत की नई बस्ती ने इसे गुमनामी में नहीं धकेल दिया। फिर भी, डूबते सूरज के सामने खड़े शानदार पत्थर के मंदिरों के खंडहर इस जगह के अतीत के गौरव को स्पष्ट रूप से बताते हैं। यह कत्यूरी रियासत की एक समृद्ध राजधानी रही होगी, जो मंदिर निर्माण गतिविधि में बैजनाथ से होड़ कर रही थी। अभिलेखों से, द्वाराहाट के चार शासकों के नाम ज्ञात हैं। ज्ञात है कि गुर्ज्जर देव ने लगभग 1257 ई. में कालिका देवी और शीतला देवी की एक प्रतिमा स्थापित की थी। अगले शासक का नाम सुधर देव का उल्लेख 1316 ई. में दूनागिरी में देवी की एक प्रतिमा की स्थापना के संबंध में मिलता है। 1318 ई. में उन्होंने द्वाराहाट में बद्रीनाथ का मंदिर बनवाया। स्थानीय परंपरा के अनुसार, रानीखेत (पूर्व में रानीक्षेत्र) की वर्तमान बस्ती सुधर देव की रानी पद्मिनी का विश्राम-स्थल थी। शिलालेखों से ज्ञात तीसरा नाम मान देव का है। उन्हें 1337 ई. में वासु देव त्रिपाठी नामक ब्राह्मण को एक गांव दान में देने के लिए जाना जाता है। चौथे शासक, सोम देव ने लगभग 1341 ई. में द्वाराहाट में एक नौला (पानी का झरना, जो वर्तमान में पुराने घरों के बीच एक कूड़े का गड्ढा है) और एक चबूतरा (उठाया हुआ मंच) बनवाया। उन्होंने 1354 ई. में गणाई चोखुटिया में गणेश की एक प्रतिमा भी स्थापित की (कुमाऊं, पृष्ठ 68)। यह उन शासकों

के मंदिर निर्माण उद्यम के कारण ही है कि द्वाराहाट कुमाऊं के उन गिने-चुने स्थानों में से एक है, जो समूहों में बने मंदिरों का दावा कर सकता है।

कुमाऊंनी लोक गीतों में कत्यूरी सूर्यवंशी राजवंशावली जो कार्तिकेयपुर वर्तमान बैजनाथ के निकट रणचूला दुर्ग लखनपुर (द्वाराहाट) तथा छिपटधार (भोट प्रांत) में शासन करते थे। उनका वर्णन निम्न गीतों के माध्यम से सुंदर और सरल ढंग से दिया गया है।

पछम खली में को को राजा बसनी

बूढा राजा आसंती देव को पाट

गौर को पाट सांवला को पाट

नीली चौरी उझान को पाट

मन चवन्नी को घट लगायो

द्वाराहाट में दौर मंडल चीणों

रणचूलीहाट में राजा रामायो आसंदी

आसंदी को बासंदी

अजोपीथा, गजोपीथा, नरपीथा, पृथ्वीरंजन, पृथ्वीपाल।

अर्थात पश्चिम में खली (शाखा) में कौन-कौन राजा रहते थे? वहां बूढ़ा राजा आसंदी की राजगद्दी थी, वहां गौरा राजा की राजगद्दी थी, सांवला राजा की राजगद्दी थी, नीली चौकोर भूमि, समतल भूमि में उद्यान की गद्दी थी। उन्होंने भात के मांड़ और चावलों को धोने के पानी की ऐसी नदी का निर्माण किया कि सारे क्षेत्र के लोगों ने चावल धोए पानी को एकत्रित कर उस पानी से घट अर्थात पनचक्की चलाई जाती थी। रणचूलीहाट में अपना राज सिंहासन बनाया। आसंदी देव के पुत्र बासंदी देव हुए और उनके उपरांत अजोपीथा, गजोपीथा, नरपीथा, पृथ्वीरंजन और पृथ्वीपाल हुए।

कुमूं राज्य-

बालेश्वर मंदिर, चंपावत

तेरहवीं शताब्दी में कुमूं राज्य पर चंद राजवंश का अधिकार था। वर्तमान चंपावत नगर ही प्राचीन कूमूं राज्य का केन्द्र था, जहाँ कत्यूरी कालीन बालेश्वर मंदिर है। यह मंदिर

कत्यूरी स्थापत्य कला का अद्भुत उदाहरण प्रस्तुत करता है। चंद राजवंश के आरंभिक राजा के संबंध में इतिहासकारों में मतभेद है। एक मत के अनुसार सोमचंद और दूसरे मतानुसार थोहरचंद प्रथम चंद राजा थे। सोमचंद आठवीं तथा थोहरचंद तेरहवीं शताब्दी के शासक थे। सन् 1223 में दुलू (नेपाल) के शासक क्राचल्लदेव ने उत्तराखण्ड पर आक्रमण किया, जिसका प्रमाण देशटदेव के ताम्रपत्र से प्राप्त होता है। देशटदेव दशवीं शताब्दी के कार्तिकेयपुर नरेश थे, जिनका ताम्रपत्र चंपावत के बालेश्वर मंदिर से प्राप्त हुआ। इस ताम्रपत्र के पृष्ठ भाग में का्रचल्लदेव का लेख उत्कीर्ण है। इस अभिलेख में 10 माण्डलिक राजाओं का उल्लेख किया गया है, जिनमें दो शासक विद्याचन्द्र और विनयचन्द्र थे। चन्द्र नामांत के कारण इन दो माण्डलिक शासकों से चंद वंश से संबद्ध करते हैं। लेकिन 'कुमाऊँ का इतिहास' नामक पुस्तक में उल्लेखित चंद वंशावली से उक्त चन्द्र नामान्त वाले माण्डलिकों के नाम प्राप्त नहीं होते हैं।

डॉ. रामसिंह के अनुसार तेरहवीं-चौदहवीं शताब्दी के कुमूं शासक-

1- कर्मचंद नौलालेख शाके 1178 (1256 ई.)

2- नरचंद्र(ताम्रपत्र) संवत् 1377 वि. (1320 ई.)

तेरहवीं शताब्दी में कुमाऊँ के क्षत्रिय राजाओं में अस्कोट के अभयपाल (सन् 1279), चंपावत के कर्मचन्द (सन् 1256), द्वाराहाट के अनन्तपालदेव (सन् 1298) और गंगोली के रामचन्द्रदेव (सन् 1264-1275) समकालीन थे। इसी प्रकार चौदहवीं शताब्दी में सोर के शक्तिब्रह्मदेव (सन् 1337), वीर ब्रह्मदेव (सन् 1376), सीरा के निरैपालदेव (सन् 1353), गंगोली के धारलदेव (सन् 1352) और चंपावत के चंद राजा अभयचंद (सन् 1374) भी समकालीन थे। चंपावत के चैकुनी बोरा अभिलेख (शाके 1298 माघ सुदि पंचमी शुक्रवार) में राजा अभयचंद के साथ वीर ब्रह्मदेव का उल्लेख किया गया है। इनके अतिरिक्त कत्यूर से लखनपाल के पुत्र सहणपालदेव (सन् 1307) और बागेश्वर से जैचंददेव (सन् 1330) के अभिलेख भी प्राप्त हुए हैं, जो उत्तर कत्यूरी कालखण्ड में कुमाऊँ के स्थानीय क्षेत्रीय क्षत्रप थे।

सोर राज्य –

प्राचीन सोर राज्य का उदय उत्तर कत्यूरी काल में हुआ। इस राज्य के केन्द्र में वर्तमान पिथौरागढ़ नगर था, जिसे सोर घाटी भी कहा जाता है। सरयू, काली और पूर्वी रामगंगा

नदी इस प्राचीन राज्य की क्रमशः दक्षिणी, पूर्वी तथा पश्चिमी भौगोलिक क्षेत्र की सीमा का निर्धारण करती है। इस राज्य के उत्तरी सीमा पर डोटी के मल्ल वंश का सीरा राज्य था। सोर राज्य के संस्थापक वंश 'बम' का संबंध डोटी मल्ल वंश से था। प्राकृतिक स्वरूप में इस नगर को उत्तराखण्ड का कश्मीर कहा जाता है। कश्मीर घाटी की भाँति सोर घाटी चारों ओर से ऊँचे-ऊँचे पहाड़ियों से घिरी हुई है। इसके पश्चिम में स्थित चण्डाक पहाड़ी से सोर घाटी का विहंगम दृश्य दिखलाई देता है। चण्डाक में ही मोस्टा माणू देवता का प्रसिद्ध मंदिर है। सोर घाटी में हर वर्ष एक धार्मिक यात्रा आयोजित की जाती है, जिसे हिलजात्रा कहते हैं। सोर शब्द की व्युत्पत्ति को डॉ. रामसिंह 'सर' या 'सरोवर' से संबद्ध करते हैं। जबकि पद्मादत्त पंत सोर को सूर्यवंशी राजाओं और सौर सम्प्रदाय (सूर्योपासक) से संबद्ध करते हैं जो उचित है। सोर में पौण गांव है, जिसे पौण राजा से संबद्ध किया जाता है, जिनकी धातू मूर्ति जागेश्वर मंदिर के भारतीय पुरातत्व के संग्रहालय में रखी गई है। सोर राज्य में प्राचीन कोट संस्कृति के अवशेष नौ कोट- ऊँचाकोट, भटकोट, बिलोरकोट, उदैपुरकोट, डुंगरकोट, सहजकोट, बमुवाकोट, द्योदारकोट, दूनीकोट विद्यमान हैं। प्रत्येक कोट एक राजा के अधीन था। ''इसलिए इसे 'ना ठुकुर सोर' भी कहते हैं।

डॉ. रामसिंह के अनुसार तेरहवीं-चौदहवीं शताब्दी के सोर शासक-

1- आसलदेव (शक्तिब्रह्म के ताम्रपत्र से)

2- सुहड़देव (शक्तिब्रह्म के ताम्रपत्र से)

3- शक्तिब्रह्म शाके 1259 (1337 ई.)

बाराहमंडल: बाराहमंडल की सूर्यवंशी रियासत

अल्मोड़ा के आसपास स्थित था। यह एक छोटी सी जागीर रही होगी, लेकिन इसके बारे में ज़्यादा कुछ नहीं पता है। कहा जाता है कि कत्यूरी घराने के एक कैडेट बीर सिंह देव ने 1420 ई. में अल्मोड़ा के पास बंदनी देवी के पूर्व में बिसौड़ के किले पर कब्ज़ा कर लिया था, जब उदय चंद चंपावत में राज कर रहे थे। बीर सिंह देव ने तब सुवाल नदी तक के इलाके पर अपना शासन बढ़ाकर अपने क्षेत्र का विस्तार किया, जबकि एक अन्य कत्यूरी वंशज ने खगमरा के किले से नदी के दूसरी तरफ शासन किया। उन दोनों रियासतों ने मिलकर बरहमंडल का क्षेत्र बनाया। उन दो रियासतों के बीच की सीमा पर सुवाल के पास एक खंडहर मंदिर पर लगे शिलालेख से एटकिन्सन ने अर्जुन देव के नाम और

तारीख 1307 ई. की पहचान की तथा पत्थर पर निरया पाल के नाम वाले एक अन्य शिलालेख से 1348 ई. की पहचान की। इससे संकेत मिलता है कि बीर सिंह देव से पहले इस स्थान पर किसी अन्य कत्यूरी परिवार का कब्जा रहा होगा, जिसके बारे में उपरोक्त दो नामों के अलावा कुछ भी ज्ञात नहीं है।

ऐसा कहा जाता है कि खगमरा के प्रमुख ने एक विचित्र बिजौरा (एक स्थानीय खट्टे फल) का अध्ययन करने के बाद ब्राह्मण द्वारा बताई गई एक दुर्घटना को टालने के लिए उस रियासत को चंपावत के श्री चंद तिवारी नामक ब्राह्मण को दे दिया था। ऐसा कहा जाता है कि बिजौरा को स्थानीय रूप से अल्मोड़ा भी कहा जाता है (हालाँकि यह गलत है)। उस जादुई फल के नाम पर खगमरा को अल्मोड़ा कहा जाने लगा, जब इसे कल्याण चंद ने 1563 ई. में चंद साम्राज्य की राजधानी बनाया था। एक अन्य परंपरा के अनुसार, अल्मोड़ा का नाम अल्मोड़ा नामक एक खट्टे हर्बल पौधे से पड़ा, जो उस क्षेत्र में बहुतायत में उगता था। कटारमल के लोग बड़ा-आदित्य मंदिर में धातु के बर्तनों को चमकाने के लिए उस पौधे की पत्तियों को इकट्ठा करते थे। पश्चिमी पहाड़ी बोलियों में अल्मोड़ा को मलोरा या खट्टा मलोरा के नाम से भी जाना जाता है। बाद में बिसौड़ के सरदार ने ब्राह्मण को खदेड़ते हुए खगमरा के क्षेत्र पर भी कब्जा कर लिया। बाद में कीर्ति चंद (1488-1503 ई.) ने बाराहमंडल पर आक्रमण किया और इसे अपने राज्य में मिला लिया।

सुई राज्य काली कुमाऊं।।

सुई (काली-कुमाऊँ में): पूर्वी कुमाऊँ की इस जागीर का कोई ठोस विवरण देना बहुत जोखिम भरा है। क्योंकि इसके बारे में सिर्फ़ अनुमान ही उपलब्ध हैं। फिर भी, यह रियासत महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसने चंद वंश के लिए कुमाऊँ की धरती पर खुद को स्थापित करने की ज़मीन तैयार की। लोहाघाट के पास सुई में पाए गए कई पुरातात्विक साक्ष्यों से यह संकेत मिलता है कि सूर्यवंशी कत्यूरियों के मुख्य घराने के वंशज ने आठवीं शताब्दी के आसपास सुई में राजधानी के साथ काली-कुमाऊँ क्षेत्र में अपनी रियासत स्थापित की थी। सुई में कत्यूरी राजाओं की मंदिर निर्माण गतिविधि के कुछ सबूत प्राचीन मंदिरों के मौजूदा टुकड़ों में पाए जा सकते हैं, खासकर सूर्य मंदिर और ऊंचे देवदार के पेड़ों के बीच छोटे पत्थर के खंभे, चबूतरे, पानी के झरने (नौला) आदि। इस धारणा को लोकप्रिय परम्परा से भी बल मिलता है कि आठवीं शताब्दी में शंकराचार्य के अधीन महान धार्मिक

प्रलय से पहले और बाद में, कत्यूरी कुमाऊं में शासक परिवार थे (एटकिंसन, II, 1, पृ. 467)। दसवीं शताब्दी के अंत में सुई इसकी सहायक नदी थी, लेकिन बाद में यह डोटी रियासत की सहायक नदी बन गई। लगभग दसवीं शताब्दी के अंतिम दशक में, उस समय ब्रह्म देव कत्यूरी सुई के शासक थे। ऐसा प्रतीत होता है कि सुई में सूर्यवंशी कत्यूरी घराने का समय अच्छा नहीं रहा। आस-पास की बस्तियों पर अपना प्रभाव जमाने की कोशिश में ब्रह्म देव को उनकी अवज्ञा का सामना करना पड़ा और उन्हें उनका कड़ा विरोध झेलना पड़ा। खशिया मंडलों के स्वतंत्रता-प्रेमी सरदारों ने डोटी रियासत की सहायक नदी। लगभग दसवीं शताब्दी के अंतिम दशक में, उस समय ब्रह्म देव कत्यूरी सुई के शासक थे। ऐसा प्रतीत होता है कि सुई में कत्यूरी घराने का समय आरामदायक नहीं था। आसपास की खशिया बस्तियों पर अपना प्रभाव जमाने की कोशिश में, ब्रह्म देव को उनकी अवज्ञा का सामना करना पड़ा और उनका कड़ा विरोध झेलना पड़ा। मंडलों के स्वतंत्रता-प्रेमी प्रमुखों-मांडलिकों के प्रमुख के नेतृत्व में रैली की और सूर्यवंशी कत्यूरी साहसिकता का प्रतिरोध किया। असुरक्षा और भय की भावना ने क्षेत्र को जकड़ लिया। अंततः ब्रह्म देव ने चंद हस्तक्षेप प्राप्त करके अपने दुखों से राहत पाई। उन्होंने अपनी बेटी का विवाह एक युवा चंद राजकुमार से किया और अपनी रियासत का एक हिस्सा दहेज में उसे दे दिया। इस प्रकार, चंपावत में एक चंद घराने की स्थापना हुई।

कत्यूर (बैजनाथ): खड़े मंदिरों का परिसर

(आंशिक रूप से क्षतिग्रस्त) गोमती के तट पर आज वह स्थल है जिसे कभी सूर्यवंशी कत्यूरियों का राजधानी केंद्र होने का दावा किया जाता था। इनके अलावा, एक विस्तृत क्षेत्र में बिखरे हुए वीरान मंदिर और खेतों में बिखरे पड़े या आसपास के आवासीय घरों में लगे प्राचीन संरचनाओं के अलग-अलग टुकड़े इस प्राचीन स्थल के अतीत के गौरव के सूचक अवशेष हैं। यह मंदिर-नगर लकुलेश शैव संप्रदाय का केंद्र रहा होगा और अधिकांश पुजारी उसी संप्रदाय से आए थे। पुरालेख संबंधी साक्ष्य भी इस नगर में जंगमों की उपस्थिति का संकेत देते हैं। राहुल भयंकर नाथ जोगी, जंगम राउल जोगी आदि नामों वाले शिलालेखों के बारे में बताते हैं। यह स्थल सूर्यवंशी कत्यूरियों के जोशीमठ में स्थानांतरित होने से पहले और बाद में एकीकृत राज्य स्थापित करने के लिए वापस लौटने से पहले भी उनकी राजधानी रहा। एकीकृत कत्यूरी साम्राज्य के पतन के बाद, राहुल (कुमाऊं, पृष्ठ 67) ने कत्यूर के बाद के शासकों की वंशावली प्रस्तुत की है।

लखनपुर।

रामगंगा नदी पर पाली परगना में लखनपुर (जिसे पहले वैराटपट्टन के नाम से जाना जाता था), हालाँकि बाद की शताब्दियों में बहुत कम जाना जाता था, लेकिन यह कत्यूरी सूर्यवंशी शासकों की प्राचीन राजधानी बनी रही (एटकिंसन, II, 1, पृष्ठ 453)। एक पुरानी कहावत में ऐसे कई शब्द हैं जो इसकी उत्पत्ति का संकेत देते हैं। यह बताता है:

"आसन वा का बासन वा का सिंहासन वा का, वा का बृह्मा वा का लखनपुर।"

इस कहावत से दो नामों का संकेत मिलता है। ये हैं: (i) आसन, यानी असंती देव, और (ii) बसन, यानी बसंती देव। एटकिंसन ने लखनपुर के कत्यूरी शासकों के कालक्रम पर लंबी चर्चा के बाद (II, 1, पृ. 454-555) तेरहवीं शताब्दी की शुरुआत की तारीख तय की है, जब लखनपुर के कत्यूरी घराने की शुरुआत असंती देव ने की थी। ऐसा प्रतीत होता है कि असंती देव से लेकर उनके आठवें उत्तराधिकारी गजव राय तक पाली घराने ने लखनपुर से शासन करना जारी रखा। उनके बाद, उनके दो बेटों में से एक, पीतन देव दक्षिणी गढ़वाल चले गए, जहाँ उन्होंने पातालि दून में अपना राज्य स्थापित किया। दूसरे बेटे सुजान देव ने लखनपुर में शासन जारी रखा। सुजान देव के बाद सारंगा देव थे। उनका नाम चौकोट के तमाधौन गांव में कुलदेवी की एक छवि पर एक शिलालेख में मिलता है, जिसकी तिथि शक 1342 (यानी 1420 ई.) है। सारंग देव के बाद पांच अन्य सरदार हुए, जिनमें अंतिम कल्याण देव थे। उसके बाद रियासत का बंटवारा हो गया

उत्तराधिकारियों में से एक कल्याण देव के समय में ही कीर्ति चंद (1488-1503 ई.) ने पाली पर आक्रमण किया था। कल्याण देव ने बिना किसी प्रतिरोध के लखनपुर का किला आत्मसमर्पण कर दिया। हालाँकि, उन्होंने कीर्ति चंद से अनुरोध किया कि वे रियासत में विनाश न करें और निवासियों को अपनी प्रजा की तरह समझें। कल्याण देव सुल्ट चले गए, जहाँ उन्हें और उनके परिवार को शांति से रहने की अनुमति दी गई। वर्तमान हाट गांव के उपर व गनाई (चौखुटिया) जौरासी वन मार्ग के उपर एक टीले पर पाली के कत्युरी सूर्यवंशी राजाओं का किला था। ऐसा मानना है कि इस किले के अंदर महल थे जो अब सारा क्षेत्र खंडहर में बदल गया है। यहाँ के महलों के तरसे गए पत्थरों को सड़क ठेकेदारों ने सड़कों पर दफ़न कर दिया । ऐतिहासिक महत्व की अनेक वस्तुएं जमीं के गर्त में समां गई हैं इस पहाड़ी के निचे की पहाड़ियों के उपर किलों और महलों

के खंडहर अभी भी विद्यमान हैं यहाँ से गेवाड़ का सुन्दर विहंग्मय दृश्य देखने लायक है । राजा विरम देव यहाँ के शासक थे । इस किले के दो सौ मीटर निचे व हाट गांव के उपर बिरमदेव का नौला बना हुआ है इस नौले में बारों मांस पानी भरा रहता है उस समय पीने की पानी की आपूर्ति इसी नौले से होती थी । लखनपुर किले से एक गुफा द्वार है जो कुछ समय पहले बंद कर दिया गया है कुछ समय पहले तक उस गुफा लगभग 7 – 8 सीढ़ी तक खुला हुआ बाद में किसी कारन वस बंद कर दिया गया। कहा जाता है जब जियारानी रानीबाग (जो हल्द्वानी के पास में है) में स्नान कर रही थी तब स्नान करते वक्त इक दैत्य उन पर मोहित हो गया था और वह दैत्य जियारानी के पीछे पड़ गया । रानीबाग से इक गुफा द्वार है जो अन्दर से कई अन्य सहारों के लिए मार्ग जाता है ऐसा लोगों का कहना है उस वक्त जियारानी अपनी लज्जा बचाने के उस गुफा से सीधे गेवाड़ घाटी की लखनपुर कोट पर आ निकली कई वर्षो तक वह वहां छिपी रही । लखनपुर कोट से ही एक गुफा का मार्ग धामदेवल के पास में निकलता है जहा पर जियारानी अपने स्नान के लिए भोर कल में रामगंगा में आती थी । उस समय गेवाड़ घाटी के पृथ्वी देवपाल राजा थे । उन्हें इस बात का पता चला की कोई स्त्री यहाँ छुपी हुई । पृथ्वी देवपाल जी वहां सवयं गए और जियारानी से मिले । मिलने के पश्च्यात जियारानी ने अपनी व्यथा राजा पृथ्वी देवपाल जी से कही । राजा पृथ्वी देवपाल ने जियारानी की लोक लाज के भय से उन से विवाह कर लिया और उन्हें गेवाड़ घाटी की रानी बना लिया । कई समय तक संतान की प्राप्ति न होने पर पृथ्वी देवपाल ने धर्मा देवी से दूसरी शादी कर ली फिर भी कोई परिणाम न निकला। किसी व्यक्ति ने उन्हें यह जानकारी दी कि वह बागनाथ (बागेश्वर) में शिव की अराधना करे तो उन्हें संतान की प्राप्ति हो सकती है। तद्पश्च्यत ऐसा ही किया । जिस से बाद में जियारानी से धामदेव और दूसरी पत्नी धर्मा देवी से राजा मालूशाही हुए । राजा मालूशाही गेवाड़ घाटी के अंतिम राजा थे । जिनकी प्रेम कथा आज भी जीवित है ।

पॉली पछाऊ।

पॉली पछाऊ शाखा के सूर्यवंशी जब से गुसाई कहलाये, इनको सयानचारी का पद दिया गया। उधर अस्कोट के सूर्यवंशी रजबार देव से पाल हो गये और इधर ये देव से गुसाई हालांकि गुसाई एक उपनाम है जो बड़े बेटे को मिलता था । चौकोट परगने के तामाडौन स्थान में कुलदेवी (इन राजाओं की इष्टदेवी) के मंदिर में सारंगदेव का नाम खुदा है, उसमें संवत् १३४२ लिखा है। यह सारंगदेव पुराने कत्यूरी राजा थे या कुँ० धर्मसिंह व

भवानसिंहजी के पिता। सूर्यवंशी कत्यूरी खानदान के इन छोटे-छोटे राजाओं के अतिरिक्त कत्यूरियों के अवसान तथा चंदों के आगमन के समय कुमाऊँ-राज्य छोटे-छोटे राज्यों में बँटा हुआ था । फल्दाकोट तथा धनियाँकोट एक खाती राजपूत के अधिकार में थे, जो अपने को सूर्यवंशी क्षत्रिय व पुराने राजवंश से होने पर गर्व करते है। चौगर्खा पड्यार राजा के अधिकार में था, जिसकी राजधानी पड्यारकोट में थी। गंगोली परगने में मणकोटी राजा थे। यह नैपाल में पिउठण से आये थेऔर अपने को चंद्रवंशी राजपूत कहते थे । फिर चंदों से हारकर ७-८ पुश्त राज्य कर वहीं को चले गये, जहाँ उनके वंशज अब तक विद्यमान है। कोटा, छखाता व कुटौली राजाओं के अधिकार में आ गये। सोर, सीरा, दारमा, अस्कोट, जोहार, सब डोटी-साम्राज्य में शामिल किये गये ।

जब कुमाऊँ से सूर्यवंशी समाटों का भाग्य-सूर्य छिप गया, और ठौर-ठौर में छोटे-छोटे मांडलिक राजा हो गये, तो लोगों ने कहा कि कुमाऊँ का सूर्य छिप गया है। सारे कुमाऊँ में रात्रि हो गई है।

पॉली पछाऊ शाखा पर लिखित लोकगीत।

दूसरी शाखा पाली पछाऊं

पाली पछाउं के राजा बसे?

इलणदेव, इलणदेव का तिलणदेव

अमरदेव, गरमदेव, नागरदेव, सुजान देव

सुजान देव किस रानी सुजानमति का सारंग देव

सारंग देव का द्वि च्याला-

राजा उत्तम देव, राजा बिरमदेव

अर्थात दूसरी शाखा थी पाली पछाऊं। पाली पछांउं में कौन-कौन राजा रहते थे?

इलणदेव, इलणदेव का पुत्र तिलणदेव, अमर देव, गरम देव, नागरदेव और सुजान देव। सुजान देव की रानी सुजानमती का पुत्र सारंग देव। सारंग देव के दो पुत्र राजा उत्तम देव तथा राजा विरमदेव।

फल्दाकोट की लड़ाई

पाली को सर करके राजा कीर्तिचंद ने फल्दाकोट पर चढ़ाई की। वहाँ खाती-राजा राज्य करते थे। क़िस्सा भी है-

“पहाड़ में खाती, देश में हाथी ।“

फल्दाकोट के राजा से बड़ी विकट लड़ाई हुई। पर राजा मारे गये, किन्तु उनके सिपाही व पट्टी के लोग बराबर लड़ते रहे। वहाँ भी राजा कीर्तिचंद ने तमाम फल्दाकोटियों का क़त्ले-आम करांया, और अपने सिपाहियो में से महरा, करायत, ढेक आदि को कमीन, सयाना तथा जागीरदार बनाकर फल्दाकोट में बसाया, और साथ ही सच पट्टियों का बंदोबस्त कर, सब काम अफसरों को सौंप कोटा व कुटौली को भी सर किया, और ध्यानिरौ होकर चंपावत में लौटे। इसके बाद वह माल यानी देश की तरफ़ गये और जसपुर के पास अपनी चौकी स्थापित की, जिसका नाम कीर्तिपुर रक्खा वह अब तक उत्सी नाम से विख्यात है। कीर्तिचंद के समय में कत्यर, दानपुर, अस्कोट, सौरा, सोर को छोड़कर सारा कुमाऊँ उनके हाथ आ गया था। यह राजा सन् १५०३ में प्रायः कूर्माचल के हिस्से को जीतकर स्वर्गधाम को सिधारे। गढ़वाल को भी फ़तह करने के इरादे से यह राजा कहते हैं कि बाहारस्यूँ तक पहुँचे, किन्तु बाद को बाबा सत्यनाथ के कहने से देघाट के पास सरहद मुक़र्रर कर, देघाट के पश्चिम तरफ के मुल्क को गढ़वाल के राजा के लिए छोड़ दिया। पं० रुद्रदत्त पंतजी लिखते हैं कि इस राजा का राज्य भागीरथी के किनारे तक देश में भी था। इसके पश्चात् पाली के ऊपर राजा कीर्तिचंद ने अपना विजयी लश्कर चढ़ाया। पाली के राजाओं ने यह समझकर कि वे राजा कीर्तिचंद से सामना करने में असमर्थ है और यदि मुक़ाबिला करते हैं, तो जो हाल बारामंडल का हुआ, बही उनका भी होगा। पाली के सूर्यवंशी कत्यूरी-राजा ने राजा कीर्तिचंद के पास सुलह का संदेश भेजा, और उनको लखनपुर के क़िले के भीतर बुलाया, और मेल-मिलाप के बाद कहा कि राजा चंद पाली परगने को अपना ही समझें। सारी प्रजा उन्हीं की समझी जावे । उसे किसी प्रकार तंग न किया जावे । पाली के कत्यूरी-राजाओं ने सल्टपट्टी के भीतर मानिला डाँडा में अपना महल बनवा लिया। वहीं क़िला भी बनवाया । राजा कीर्तिचंद ने भी पाली में अपना अधिकार जमाकर कत्यरियों को मानिला तथा पाली में शान्तिपूर्वक रहने दिया । पर वे एक प्रकार के ज़मीदार हो गये थे।

कार्की राजपूत।

कार्की जिन्हें खारकू के नाम से भी जाना जाता है, ये सूर्यवंशी कत्यूरी घराने के गुसाइयों से निकले हैं और इनका भी पूर्व समय में कुछ प्रभाव रहा है। उनमें से एक, श्री सुखराम कार्की ने राजा विजय चंद के शासनकाल में सत्ता संभाली थी। कार्की राजपूतों को कुमाऊं राज्य में अपना झंडा, निशान (प्रतीक चिह्न) और ढोल बजाने का विशेष अधिकार दिया गया था। कार्की को खारकू के नाम से भी जाना जाता है, यह कत्यूरी राजपूतों की एक शाखा है जो सूर्यवंशी कत्यूरी घराने के रौतेला गुसांईयों से उत्पन्न हुई है और इनका भी पूर्व समय में प्रभाव रहा है। उनमें से एक, सुखराम कार्की ने सत्रहवीं शताब्दी के आरंभ में राजा विजय चंद के समय सत्ता संभाली थी। 1625 ई. में जब विजय चंद कुमाऊं की गद्दी पर बैठे तो राज्य की पूरी सत्ता सुखराम कार्की, पीरू गुसाईं और विनायक भट्ट नामक तीन सरदारों के हाथों में आ गई। राजा विजय चंद ने केवल एक वर्ष तक शासन किया और उनका विवाह बुलंदशहर जिले के अनूपशहर के बड़गूजर परिवार की एक बेटी से हुआ। सुखराम कार्की ने सत्ता को अपने हाथों में रखने का संकल्प लिया और युवा राजा को अपने महल के महिला कक्ष में बंद कर दिया।

इस समय के दौरान, सुखराम कार्की ने कुमाऊं के सिंहासन के लिए किसी भी प्रतिस्पर्धा को खत्म करने के लिए चंद परिवार के सदस्यों की हत्या का आदेश दिया। जब राजा विजय चंद ने अल्मोड़ा के किले में प्रवेश द्वार बनवाया। इसे अधिकार जताने के एक नापाक प्रयास के रूप में देखा गया और सुखराम कार्की ने इस पर नाराजगी जताई। सुखराम कार्की ने कुमाऊं के सिंहासन पर चंद परिवार के किसी युवा सदस्य को बिठाने की योजना बनाई ताकि कुमाऊं के वास्तविक शासक के रूप में अपनी शक्ति को मजबूत किया जा सके। सुखराम कार्की ने एक महिला दास (राज-चेली) के माध्यम से महल में प्रवेश करने का साधन ढूंढ़ा और भांग के नशे में धुत राजा की हत्या कर दी। यह घटना 1625 ई. में हुई। सुखराम कार्की ने तब सूचना दी कि राजा की अचानक मृत्यु हो गई है और जब तक राजा का उचित उत्तराधिकारी नहीं मिल जाता, तब तक उन्हें प्रशासन का प्रमुख बने रहना चाहिए। हालाँकि यह व्यवहार लोगों की सहनशक्ति से परे था। मेहरा और फर्त्याल दोनों गुटों ने संकट में काम करने का संकल्प लिया। पहले ने त्रिमल चंद को बुलाया और दूसरे ने नारायण चंद को आवेदन दिया और प्रत्येक गुट अपने पसंदीदा को कुमाऊँ के राजा के रूप में ताज पहनाना चाहता था

त्रिमल चंद नारायण चंद से पहले अल्मोड़ा पहुंचे और उन्हें कुमाऊं का राजा घोषित किया गया। उन्होंने सुखराम कार्की, पीरू गुसाईं और विनायक भट्ट को दंडित करने का आदेश दिया। नीला गुसाईं का बेटा बाज बहादुर चंद सुखराम कार्की द्वारा चंद परिवार के नरसंहार में बच गया था। उसे कुंवर की उपाधि दी गई और उसे कुमाऊं का अगला राजा घोषित किया गया।

मनराल राजपूत।

मनराल कत्यूरियों की पाली-पछाऊं शाखा के सारंग देव के वंशज हैं। मनराल राजपूतों को पाली के सयाना का पद दिया गया था और उन्हें कुमाऊं राज्य में अपना झंडा, निशान (प्रतीक चिह्न) और ढोल बजाने का विशेष अधिकार दिया गया था।

भारतीय सेना मनराल राजपूतों का अहम योगदान रहा है सेना में एक ही समय में दो या तीन भाइयों द्वारा वर्दी पहनने के उदाहरण भरे पड़े हैं, लेकिन यहाँ एक अनोखे परिवार की कहानी है जहाँ एक सेना अधिकारी के सभी सात बेटे सेना में शामिल हो गए। ब्रिटिश भारतीय सेना के कैप्टन मोहन सिंह मनराल, उत्तराखंड के अल्मोड़ा जिले के द्वितीय विश्व युद्ध के अनुभवी हैं। सभी सात बेटे भारतीय सेना में शामिल हो गए। उनके अधिकांश पोते/पोतियाँ भी सशस्त्र बलों के कर्मियों की सेवा कर रहे हैं या उनसे विवाहित हैं।

कैप्टन मोहन सिंह मनराल के सबसे बड़े बेटे को जून 1958 में भारतीय सेना में कमीशन मिला था। दुर्भाग्य से एक महीने बाद, कैप्टन मोहन सिंह मनराल 52 वर्ष की आयु में एक संक्षिप्त बीमारी के बाद चल बसे, जिससे पूरे परिवार की ज़िम्मेदारियाँ उनकी विधवा बच्ची मनराल और सबसे बड़े बेटे 2 लेफ्टिनेंट जगत सिंह मनराल पर आ गईं उसके बाद अन्य सभी भाई भी कमीशन अधिकारी के रूप में भारतीय सेना में शामिल हो गए।

भारतीय सेना के इस योद्धा परिवार के पुत्रों की वरिष्ठता और सेना में उनकी भागीदारी के अनुसार सूची इस प्रकार है: 1. कर्नल जगत सिंह मनराल ने 1971 के भारत-पाकिस्तान युद्ध के दौरान चंब सेक्टर में सक्रिय भूमिका निभाई थी। 2. मेजर भगत सिंह मनराल ने 1965 के भारत-पाकिस्तान युद्ध और 1971 के युद्ध में पूर्वी पाकिस्तान में सक्रिय भूमिका निभाई थी। 3. ब्रिगेडियर ललित सिंह मनराल असम और जम्मू-कश्मीर में आतंकवाद विरोधी अभियानों में शामिल थे। 4. लेफ्टिनेंट कर्नल महेंद्र सिंह मनराल ने 1971 के भारत-पाकिस्तान युद्ध में भाग लिया था और नागालैंड में आतंकवाद विरोधी अभियानों

में भी शामिल थे। 5. लेफ्टिनेंट कर्नल देवेंद्र सिंह मनराल ने 1987-88 के दौरान श्रीलंका में सक्रिय भूमिका निभाई थी और माले में विदेशी अभियान में भी शामिल थे। 6. कर्नल राजिंद्र सिंह मनराल नागालैंड और जम्मू-कश्मीर में आतंकवाद विरोधी अभियानों में शामिल थे। 7. कर्नल जितेंद्र सिंह मनराल असम और जम्मू-कश्मीर में आतंकवाद विरोधी अभियानों में शामिल थे। वर्तमान में लेफ्टिनेंट कर्नल देवेन्द्र सिंह

मनराल को छोड़कर सभी भाई भारत के विभिन्न शहरों में एक खुशहाल सेवानिवृत्त जीवन जी रहे हैं। सेना में अपने सभी सात बेटों को समर्पित करने के बाद, गर्वित क्षत्राणि माँ अक्टूबर 1990 में एक संतुष्ट देशभक्त के रूप में स्वर्ग सिधार गई।

खैरीगढ़स्टेट–डोटी।

नन्दपर्वतमारभ्यं यावत काकिगिरिः स्मृतः। तावत् वै मानसः खण्डः खयते नृपसत्तम्।।

कुमाऊँ को मानसखंड बताने वाले पुराने ग्रंथों की बात करें तो डोटी क्षेत्र को मानसखंड/कुमाऊँ का हिस्सा बताया गया है। दोनों क्षेत्रों में शमनवाद के अभ्यास में आश्चर्यजनक समानताएँ हैं – जिस तरह से आषाढ़ और कार्तिक के महीनों में देव जात्राएँ

आयोजित की जाती हैं, जिस तरह से दोनों क्षेत्रों में गौरा-महेश्वर उत्सव मनाया जाता है, जिस तरह से दोनों क्षेत्रों की संस्कृति में मुखौटा नृत्य शामिल हैं, और दोनों क्षेत्रों में देव डोल, डोली और छट का उपयोग – यह सब हमें डोटी और कुमाऊँ के मजबूत सांस्कृतिक संबंधों के बारे में स्पष्ट रूप से बताता है। क्षेत्र के दोनों ओर पूजे जाने वाले देवताओं में भी समानताएँ देखी जा सकती हैं। देउड़ा जैसे नृत्य रूप, डोहोरी जैसे संगीत रूप और पैतोली की लय को भी थोड़े अलग नामों से जाना जाता है या लगभग कोई अंतर नहीं है।

डोटी कुमाऊँ के कार्तिकेपुर कत्यूरी सूर्यवंशीयो का एक प्राचीन राज्य था जो वर्तमान में नेपाल में स्थित है। डोटी का निर्माण 13वीं शताब्दी के आसपास कुमाऊँ के कत्यूरी साम्राज्य के विघटन के बाद हुआ था।

सूर्यवंशी सम्राट निरंजन मल्ल देव जो त्रिलोकपाल के दूसरे पुत्र व सम्राट ब्रह्मदेव के पौत्र थे, कत्यूरी साम्राज्य के पतन के बाद 13वीं शताब्दी के आसपास डोटी साम्राज्य की स्थापना करी। वे संयुक्त कत्यूरी साम्राज्य के अंतिम कत्यूरियों के पुत्र थे। डोटी के राजाओं को राइका (रैंका महाराज भी) कहा जाता था।

डोटी में कत्यूरी के राइकों की उत्पत्ति के बाद पश्चिम (कुमाऊं) में रामगंगा और पूर्व में करनाली के बीच का पूरा भूभाग राइकों के अधीन आ गया। बाद में राइकों ने करनाली क्षेत्र के खास मल्लों को हराकर नेपाल के सुदूर पश्चिमी क्षेत्र (डोटी) में एक मजबूत सूर्यवंशी साम्राज्य स्थापित करने में सफलता प्राप्त की।

बाद में, 1790 में गोरखा विस्तार की अवधि के दौरान डोटी साम्राज्य और नेपाल (गोरखा साम्राज्य) के बीच युद्ध, नेपाल के इतिहास के अनुसार, नारी-डांग है जो सेती नदी के तट पर स्थित है और डुमराकोट गोरखालियों के खिलाफ लड़ाई के दौरान डोटी साम्राज्य का आधार था।

गोरखालियों के साथ युद्ध में डोटी राज्य की हार हुई।

डोटी एस्टेट के वंशज को १७९० में नेपाल से निष्कासित कर दिया गया था और अवध आने पर उन्होंने उत्तर प्रदेश के खैरीगढ़ परगना में बसने का प्रयास किया, जो तब बंजारा सरदारों द्वारा शासित था। पहले तो वे वहां पैर जमाने में असफल रहे लेकिन अंततः वे बंजारों को हराने में सफल रहे और न केवल उस परगना में बल्कि भूर के कुछ हिस्सों में

भी खुद को स्थापित किया। १८२१ में, राजा दीप शाह के दस बेटों में से एक राजा गंगा राम शाह ने पहाड़ों की तलहटी में तराई क्षेत्र में कंचनपुर परगना पर विजय प्राप्त की, जिसे १८१५ में नेपाल युद्ध के बाद सिगौली की संधि के तहत अंग्रेजों ने मिला लिया था और १८१६ में दस लाख स्टर्लिंग के कर्ज के भुगतान के लिए अवध के नवाब वजीर को दे दिया था। अवध के विलय के बाद, खैरीगढ़ और कंचनपुर १८५६ में राजा रणध्वज शाह के साथ बसाए गए। 1857 के विद्रोह के बाद 1858 और 1859 के बीच हुआ दूसरा संक्षिप्त समझौता भी उनके साथ ही हुआ था। राजा को 26 अक्टूबर 1859 को लखनऊ में आयोजित दरबार में भारत के तत्कालीन गवर्नर जनरल लॉर्ड कैनिंग से दो इलाकों के लिए स्थानीय भाषा में सनद मिली थी।

एक बार निरंजनमल्ल देव के पौत्र व नागमल्ल देव के पुत्र अर्जुन मल शाही दिल्ली में बादशाह अकबर से मिलने गया और जब वह बाज़ार से गुज़र रहा था, तो रास्ते के दोनों ओर बिक्री के लिए रखे गए सभी धातु के बर्तन फट गए। बादशाह ने यह सुनकर पहाड़ के सरदार को दरबार में आमंत्रित किया और इस बात का ध्यान रखा कि जिस कमरे में साक्षात्कार होना था, वहाँ एक फुल बर्तन रखा जाए अर्जुनमल के जहाज में घुसते ही जहाज के टुकड़े-टुकड़े हो गए। अकबर ने इसका कारण पूछा और उसे बताया गया कि अर्जुनमल सूरजबंसी थे, यानी सूर्य का वंशज, इसलिए उसके शरीर से निकलने वाली दिव्य प्रकाश की किरणें फूल जैसी धातु को भी तोड़ने के लिए पर्याप्त थीं। बादशाह ने उसे जागीर दी। महाराजा की उपाधि दी और उसकी नजर में पच्चीस सोने की मोहरें, पांच टट्टू, ग्यारह याक की पूंछ और पंद्रह कस्तूरी मृग रखे। दीप सिंह अर्जुनमल का वंशज था; उसकी बेटी से नेपाल के राजा राम बहादुर शाह ने शादी का प्रस्ताव रखा था; और इनकार के बाद 1790 के आसपास युद्ध हुआ। यह शायद सच था, क्योंकि गोरखा भी सूर्य की संतान होने का दावा करते थे, फिर भी उन्हें निम्न आदिवासी मूल का माना जाता है। 25

जब उन्हें पहली बार धोती से खदेड़ा गया, तो उन्होंने कंचनपुर में बसने की कोशिश की, जिसे बादशाह मुहम्मद शाह के शासनकाल में खैरीगढ़ (कम से कम धोती, कालकांदन, भरथा, राजहट को खैरीगढ़ में रखा गया था) में शामिल किया गया था। यहीं पर उनके और खैरीगढ़ बंजारों के बीच पहली टक्कर हुई। ऐसा कहा जाता है कि जब चतुर्भुज जांगरे के नेतृत्व में शाही सेना ने कांप के किले की घेराबंदी की और उस पर कब्जा कर लिया, तो कुछ बंजारे सेनापति के साथ उसके पुरोहित के रूप में गए, वे गौड़ ब्राह्मण थे;

संभावना है कि उन्होंने लंबी घेराबंदी के दौरान सेना को अनाज की आपूर्ति की। किसी भी स्थिति में, जब जांगरे ने भूर और धौरहरा पर कब्जा कर लिया, तो बंजारों को खैरीगढ़ मिल गया, ऐसा बिसेन का आरोप है। यह जहाँगीर के शासनकाल में हुआ होगा। उन्नीसवीं सदी की शुरुआत में राव राम सिंह बंजारा प्रमुख थे। वह एक अशांत व्यक्ति थे और अपने भाइयों पर, जो अनाज और मवेशियों का व्यापार करते थे, जब भी वे उनके राज्य में घाटों को पार करते थे, कर लगाने पर जोर देते थे। बंजारों ने अपने नेता संघ नायक के नेतृत्व में राव का विरोध किया और 1800 में लड़ी गई एक भीषण लड़ाई में उन्हें हरा दिया। अगले वर्ष खैरीगढ़ नवाब वजीर द्वारा सौंपे गए क्षेत्रों का हिस्सा होने के कारण अंग्रेजों के हाथों में आ गया। यह 1816 तक उनके कब्जे में रहा, जब इसे जौनपुर के एक हिस्से के बदले अवध को सौंप दिया गया। 1809 में अंग्रेजों ने मिंडिया घाट पर व्यापारियों से उनकी क्रूरता और जबरन वसूली के लिए राजा को दंडित करने के लिए एक सेना भेजी। उन्हें बंदी बनाकर बरेली ले जाया गया। इस बीच, 1810 से 1814 तक, पूरे परगने का पट्टा कैप्टन हियरसे ने ले लिया, जो 1812 के नेपाल युद्ध के शुरू होने से पहले यहां रहते थे, जिसमें उन्होंने एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। राव राम सिंह ने शरणार्थियों पर हमला किया और लूटपाट की, उनके अपने विवरण के अनुसार या जैसा कि समान रूप से संभावित है, पहाड़ी लोगों द्वारा उनके प्रभुत्व पर आक्रमण को विफल कर दिया, जिन्होंने अपने स्वयं के क्षेत्र को लूट लिया था, बदले में अपने पड़ोसी को उसके क्षेत्र से लूटने की योजना बनाई। सूरजबंसी दक्षिण की ओर भाग गए और रोहिलखंड के रामपुर और शाहाबाद में थोड़े समय तक रहने के बाद, बसंतपुर में भूर परगना में कुछ समय के लिए बस गए। उन्होंने भूर के राव बलवंत सिंह से और खैरीगढ़ के कलबरिया को अपने पुराने दुश्मन राम सिंह से एक तरह के भरण-पोषण के रूप में प्राप्त किया, जैसे कि भारत के कुलीन लोग अपने आदेश के क्षयग्रस्त सदस्यों के लिए हमेशा उत्सुक रहते हैं, 39% इस समय के आसपास दीप शाह की मृत्यु हो गई और उनके दो बेटे पिरथीपाल साह और राज गंगा शाह रह गए, जिन्होंने 1812 में गोरखाओं के साथ युद्ध में अंग्रेजों की सहायता की थी और पिरथीपाल साह को 2,400 रुपये की स्थायी पेंशन दी गई थी, जिसका लाभ उनके वंशज आज भी उठा रहे हैं। किसी भी स्थिति में, 1790 में डोटी से परिवार के निष्कासन से लेकर 1830 में कंचनपुर पर कब्ज़ा करने

तक, वे अवध के रईसों के दान पर या ब्रिटिश सरकार के अधीन लड़कर अपना जीवन यापन करते रहे। 97

सूरजबंसी ने कंचनपुर को एक ब्राह्मण परिवार से प्राप्त किया। स्थानीय रिपोर्ट बताती है कि सूरजबांसी परिवार ने कंचनपुर पर एक ब्राह्मण को या तो स्वतंत्र सरदार या एजेंट के रूप में कब्ज़ा करते हुए पाया। उन्होंने उस पर युद्ध किया, उसे बंदी बना लिया और लगभग 1830 ई. में मरौचा घाट के पास चौका में उसे डुबो दिया। उसे जोरैली के भटजी के नाम से जाना जाता था। हालाँकि, सूरजबांसी का दावा है कि कंचनपुर पर हमेशा से ही उनका आधिपत्य रहा है; लेकिन, और संप्रभुता निस्संदेह खैरीगढ़ के परगना में विलय के समय चली गई।

राव राम सिंह बंजारा की मृत्यु बरेली में हुई और उनके स्थान पर नक्स माधो सिंह और गंडू सिंह ने राज किया। हालाँकि, बंजारों ने अब एक खतरनाक क्षेत्र में दुश्मन को उकसाया था। जैसा कि हम पहले ही देख चुके हैं, राज गंगा शाह ने 1821 ई. में कंचनपुर पर कब्ज़ा कर लिया और वहाँ से भूर राजा की सहायता से, जिसका गठबंधन उसने अंतर्जातीय विवाहों के ज़रिए हासिल किया था, बंजारा एस्टेट पर हमला करने की योजना बनाई, जो अब माधो सिंह और गंडू सिंह के पास था। 1830 में बंजारे हार गए; बर्दिया पर अधिकांश एस्टेट का कब्ज़ा कर लिया गया, लेकिन माधो सिंह के बेटे गेन सिंह ने फिर भी डटे रहे। गेन सिंह असाधारण व्यक्तिगत शक्ति वाले व्यक्ति थे। उनके पास केवल 25 आदमी थे, लेकिन उन्होंने खैरीगढ़ किले की विशाल दीवारों की रक्षा की, जो तब तक अच्छी तरह से सुरक्षित थीं, जब तक कि 300 से ज़्यादा दुश्मन मारे नहीं गए। गेन सिंह ने किला छोड़ दिया, लेकिन कुछ महीनों में एक बड़ी सेना के साथ वापस आ गया, जिसे उसने पीलीभीत में अपने भाइयों के बीच इकट्ठा किया था। सूरजबंसी, जिसने ऑक्टरलोनी और गिलेस्पी के अधीन वास्तविक युद्ध देखा था, सुहेली के उत्तर में स्थित प्राचीन जंगल में उसके लिए घात लगाए बैठा था। गेन सिंह की सेनाएँ बिखरे हुए क्रम में जंगल से आगे बढ़ीं, मवेशियों के विशाल झुंडों की रखवाली में व्यस्त थीं, जिन्हें वे खैरीगढ़ के सवाना से होते हुए अपने रास्ते पर ले आए थे। अचानक उन पर दोनों तरफ से अदृश्य दुश्मनों ने हमला कर दिया, जिन्होंने उन पर लगातार तीलियों की बौछार कर दी, जिसका वे जवाब नहीं दे पाए; वे तुरंत भाग गए; बहुत कम कत्लेआम हुआ और कोई पीछा नहीं किया गया। 1841 में बेदखल बंजारा सरदार की शिकायतों को अवध

सरकार ने सुना; एक सेना एकत्र की गई और भीरा से आगे बढ़ी। राज गंगा शाह कंचनपुर भाग गए, और एक साल या उससे अधिक समय तक बंजारे कब्जे में रहे; लेकिन चकलादार के सैनिकों में पेचिश और बुखार फैलने लगा, तो वे पुराने बेड के किनारे एक किले नेवलखर में चले गए, जहाँ कभी चौका बहती थी। वहाँ रहकर वह शक्ति प्राप्त करने की आशा कर रहा था, लेकिन महामारी दस गुना अधिक भयंकर हो गई। बारिश जल्दी शुरू हो गई थी, नदी का पूर्व चैनल एक विशाल दलदल बन गया था, जिसके माध्यम से तोप को खींचना असंभव था, और जहाँ से ज़हरीली साँसें निकल रही थीं, घने कोहरे की तरह ऊपर उठ गया। चकलादार खुद अपनी पूरी सेना के साथ मर गया; कुछ बचे हुए लोग सूरजबंसी द्वारा छेड़े बिना घातक जंगल से रेंगकर वापस आ गए, जो तब से खैरीगढ़ में बिना किसी परेशानी के रह रहे थे। बंजारा परिवार अवध से पूरी तरह से गायब हो गया। एक बूढ़ी महिला, गेन सिंह की विधवा, 1870 में अपने पति की संपत्ति का दावा करने के लिए आगे आई; लेकिन चूंकि राजा का पूरी संपत्ति पर अधिकार स्वीकार कर लिया गया था, दोनों 1856 में, जब अवध को मिला लिया गया था, और 1858 में, विद्रोह के बाद, उसके लिए कुछ नहीं किया जा सका।

यह सूरजबंसी परिवार, काशीपुर के अपने रिश्तेदारों की तरह, पहाड़ों में रहते समय शारीरिक शक्ति और मर्दाना खेलों में दक्षता के लिए जाना जाता था; लेकिन मैदानी इलाकों में आने के बाद से वे काफी पीछे चले गए हैं। काशीपुर के राजा के शब्दों में कहें तो, "हमने प्रत्येक पीढ़ी में लगभग एक हाथ खो दिया है; मेरे दादा लगभग पाँच हाथ के थे, मेरे पिता चार हाथ के, और मैं वह पुतला हूँ जिसे आप देख रहे हैं। एक और उल्लेखनीय बात सौभाग्य है, जिसने परिवार को उनकी वर्तमान स्थिति तक पहुँचाया है। दो पीढ़ियों पहले वे रोटी के एक निवाले के लिए पड़ोसी सरदार के सामने याचक थे और उनके पास कोई कानूनी उपाधि या सैन्य शक्ति नहीं थी। सबसे पहले उन्होंने भर्ती हुए और ब्रिटिश ध्वज के तहत लड़े; एक को 2,400 रुपये की स्थायी पेंशन मिली, जिसके बाद पिरथीपाल शाह को परगना पलिया में एक बड़ी जागीर दी गई; फिर राज गंगा शाह ने मोहन के उत्तर में नब्बे मील तक फैले कंचनपुर पर कब्जा कर लिया; कुछ ही समय बाद 450 वर्ग मील में फैला खैरीगढ़ एक लड़ाई के बाद लगभग बिना किसी संघर्ष के गिर गया, जिसे अमेरिका में दंगे के नाम से भी शायद ही सम्मानित किया जा सकता है। 1858 में राजा को ब्रिटिश कानून अदालत से जागीर मिलने की थोड़ी भी उम्मीद नहीं थी, और

जो सक्रिय रूप से किरायेदारों को निर्वासित कर रहा था। कंचनपुर में उसे खैरीगढ़ का असली मालिक और अवध का राजा मान लिया गया।

१८५९ में कंचनपुर, जो १८१४ तक नेपाल के अधीन था, पुनः उस राज्य को सौंप दिया गया। खैरीगढ़ के राजा, जिसकी उपाधि ब्राह्मण स्वामी की हत्या के कारण मिली थी, को धौरहरा में जब्त संपत्ति देकर मुआवजा दिया गया, जिसका विस्तार ७८ वर्ग मील था, और अब अनुमान है कि इससे वार्षिक किराया ८२,००० रुपये मिलता था। ४०१ राजा गंगा राम शाह के पुत्र ऋंधराज सिंह उर्फ रणधीर सिंह और एक बेटी थी, जिसका विवाह कसमंडा के राजा बहादुर सूरज बख्श सिंह से हुआ था। अगले उत्तराधिकारी ऋंधराज सिंह के पुत्र इंद्र विक्रम सिंह थे, जो ता'अल्लुगा के उत्तराधिकारी बने। उन्होंने नेपाल के अचन के ठाकुर भूप शाह की बेटियों रानी राज कुंवर और रानी सूरत कुंवर से विवाह किया।

सरकार ने 9 दिसंबर 1864 को जारी अधिसूचना FD 633P के तहत ता'अलुगदार इंद्र विक्रम सिंह को राजा की वंशानुगत उपाधि दी। उनकी कोई संतान नहीं थी, इसलिए 1885 में उनकी मृत्यु के बाद, उनकी विधवा रानी सूरत कुंवर ने उत्तराधिकार के लिए उनके भतीजे पृथ्वी ध्वज शाह को गोद ले लिया। लेकिन राजा की भी कुछ समय बाद मृत्यु हो गई और उनके चचेरे भाई प्रताप बिक्रम सिंह ने उनका उत्तराधिकारी बना लिया, जो उनके सबसे करीबी जीवित पुरुष रिश्तेदार थे।

राजा प्रताप बिक्रम शाह का जन्म 1898 में हुआ था, और 1914 में उनका विवाह महाराजकुमारी भुवन राज्य लक्ष्मी देवी से हुआ, जो नेपाल के महामहिम श्री तिन महाराजा देव शमशेर जंग बहादुर राणा की बेटी थीं, और उनके तीन बच्चे थे। 1964 में लखनऊ में उनकी मृत्यु हो गई। उनके बच्चे थे (i) लव शाह (ii) राजकुमार कुश शाह, जिनका जन्म 1917 में हुआ, और 1947 में उनकी मृत्यु हो गई। (iii) राजकुमारी गीता शाह, जिनका जन्म 1926 में हुआ, उन्होंने जींद के लेफ्टिनेंट जनरल (सेवानिवृत्त) राजकुमार जसबीर सिंह से विवाह किया, जो भारत सरकार के सैन्य सचिव थे, 1984 में भारतीय सेना से सेवानिवृत्त हुए। नवंबर 2005 में देहरादून में उनकी मृत्यु हो गई।

राजा प्रताप बिक्रम शाह भारत के पहले ऐसे सरदार थे जो आईसीएस थे। 1965 में उनकी मृत्यु हो गई, उनके बाद राजा लव शाह ने पदभार संभाला। उनका जन्म 20 फरवरी 1915

को हुआ था; पहली शादी कालाकांकर के राजा दिनेश सिंह की बहन से हुई, दूसरी शादी रानी मीनाक्षी देवी से हुई, जिनका जन्म 22 अक्टूबर 1926 को हुआ, वे सिरमौर के कंवर बद्री सिंह की बेटी थीं, और उनकी तीन बेटियाँ और दो बेटे थे। 5 मई 1988 को लखनऊ में उनकी मृत्यु हो गई। उनके बच्चे थे:

(i) आर्य शाह (पहली पत्नी से)

(ii) राजकुमारी बिभु शाह (दूसरी पत्नी से), जन्म 28 जून 1944 को मसूरी, उत्तर प्रदेश में, बी.ए., प्रथम टी. कॉलेज, लखनऊ, उत्तर प्रदेश से शिक्षा प्राप्त, सांसद और राज्य मंत्री, त्रिपुरा के एचएच महाराजा किरीट विक्रम किशोर देब बर्मन माणिक्य बहादुर से विवाहित

(iii) राजकुमारी बिभा शाह (दूसरी पत्नी से), 2 मार्च 1947 को लखनऊ में जन्मीं, लोरेटो कॉन्वेंट, लखनऊ में शिक्षा प्राप्त की और लोरेटो कॉन्वेंट कॉलेज, लखनऊ से स्नातक की उपाधि प्राप्त की; फरवरी 1979 में लखनऊ में ठाकुर रणवीर सिंह चौहान (मूल रूप से खिलचीपुर, मध्य प्रदेश से, लेकिन उनके पूर्वज कोटा, राजस्थान में बस गए थे) से विवाह किया, जो वृत्तचित्र फिल्मों के निर्माता हैं।

(iv) राजकुमारी विभूति शाह (दूसरी पत्नी से), जन्म 23 फरवरी 1951 को लखनऊ में, शिक्षा लोरेटो कॉन्वेंट स्कूल, लखनऊ में तथा स्नातक लोरेटो कॉन्वेंट कॉलेज, लखनऊ से; दिसंबर 1995 से तहसील चौपाल (अब दक्षिणी जुब्बल राज्य में) के केडी-कुपवी वार्ड से जिला शिमला जिला परिषद की सदस्य, विवाह 12 दिसंबर 1976 को लखनऊ, उत्तर प्रदेश में, जुब्बल के कंवर उदय सिंह से हुआ।

(v) अक्षय विक्रम शाह।।

लव शाह की मृत्यु 1988 में हुई और उनके बेटे आर्य शाह ने उनकी जगह ली। राजा आर्य शाह का जन्म 1942 में हुआ था, उन्होंने वेलहम बॉयज़ स्कूल, देहरादून, उत्तरांचल और दून स्कूल, देहरादून, उत्तरांचल में 1959 तक शिक्षा प्राप्त की; 1963 में सेंट मैरीज़ कॉलेज से स्नातक की उपाधि प्राप्त की। दिल्ली विश्वविद्यालय के सेंट स्टीफन कॉलेज में अध्ययन के बाद, उन्होंने 1971 में लखनऊ में रानी उषा कुमारी से विवाह किया, जो बांसवाड़ा के स्वर्गीय महाराज नरपत सिंह की बेटी थीं। 2000 में उनकी असामयिक मृत्यु हो गई। उनके उत्तराधिकारी राजा अक्षय विक्रम शाह थे, जिनका जन्म 14 जनवरी 1977

को देहरादून, उत्तरांचल में हुआ था, जिन्होंने दून स्कूल, देहरादून से शिक्षा प्राप्त की थी। वे परिवार के वर्तमान प्रतिनिधि हैं, जो अपनी पत्नी रानी मीनाक्षी देवी के साथ सूरत भवन, सिंगाही, लखीमपुर, साथ ही सिंगाही हाउस, डालनवाला, देहरादून, उत्तरांचल, भारत में रहते हैं।

वर्तमान भू-राजनीति और संक्षिप्त गोरखा शासन कहानी को किसी और दिशा में मोड़ने की कोशिश कर सकता है, लेकिन सैकड़ों वर्षों में विकसित हुई मजबूत सांस्कृतिक और भाषाई समानताओं को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। हिमालय से नीचे उतरती विशाल काली नदी की अपनी अलग कहानियाँ हैं। कोई भी किनारे पर बैठकर हिमालय की इस बेटी को सुन सकता है। यह इतिहास के अंतहीन अध्यायों का एक उत्सुक पाठक रहा है और इन पहाड़ियों में होने वाली राजनीतिक उथल-पुथल का गवाह रहा है। काली आज भी उन घटनाओं की श्रृंखला पर रोती है, जिसके कारण उसकी मातृभूमि मानसखंड का विखंडन हुआ।

सरकारों और रजवाड़ों ने भले ही उसे अलग घोषित कर दिया हो, लेकिन वह आज भी कुमाऊं और डोटी के बीच हजारों साल पुराने सांस्कृतिक संबंधों को बचाए रखने वाली कड़ी बनी हुई है।

डोटी राजवंश के अवशेष।

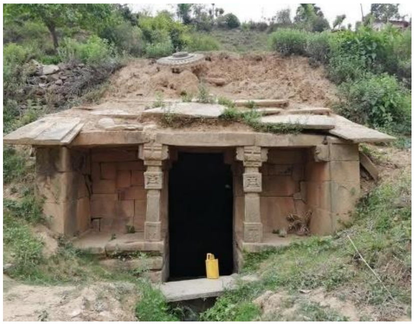

वर्तमान डोटी शाखा की स्टेट खैरीगढ़ राजमहल।

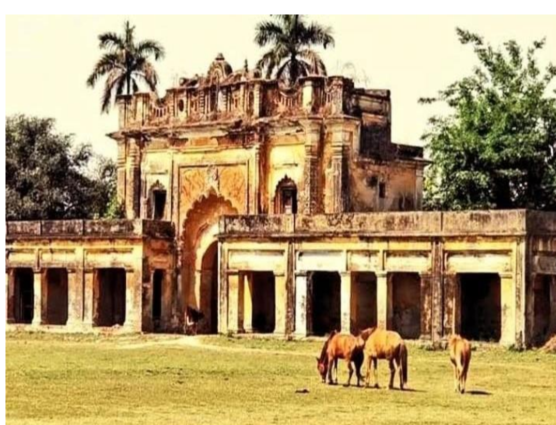

अस्कोट एक समृद्ध राज्य।

अस्कोट पहाड़ियों से घिरा हुआ है और काली नदी के किनारे की चोटियाँ देवदार, शीशम, साल, खैर और ओक के जंगलों से ढकी हुई हैं। बेरीनाग (परगना गंगोली, तहसील डीडीहाट)

इस स्थान का नाम बेरिंग (स्थानीय देवता) के मंदिर से पड़ा है, जिसके बारे में कहा जाता है कि यह गांव जितना ही पुराना है। थोड़ी दूरी पर गराऊं गांव है, जहां 46 मीटर ऊंचा झरना है।

कुमाऊं में चाय की सफल खेती की संभावना की जांच के लिए एक विशेषज्ञ समिति (1827) नियुक्त की गई और पिछली सदी के पचास के दशक में यहां एक चाय बागान स्थापित किया गया। बेरीनाग चाय कंपनी के प्रबंधक को चीनी ईंट चाय के निर्माण का रहस्य पता चला और उनकी चाय को चीनी किस्म से कहीं बेहतर माना गया। 1907 में उन्होंने लगभग 54 क्विंटल चाय बेची, लेकिन धीरे-धीरे कारोबार में गिरावट आई और 1960 तक केवल एक छोटा सा चाय बागान ही बचा था। बेरीनाग भी एक लोकप्रिय बाजार है, जहां आसपास के गांवों के लोग दैनिक उपयोग की वस्तुएं खरीदने आते हैं। यहां श्रावण (जुलाई-अगस्त) में दो मेले लगते हैं, एक अमावस्या को और दूसरा नाग पंचमी के दिन। धारचूला (परगना असकोट, तहसील धारचूला) कहा जाता है कि तहसील मुख्यालय (इसी नाम का) का नाम धार से लिया गया है जिसका स्थानीय बोली में अर्थ चोटी और चूला (खाना पकाने की आग) होता है। परंपरा के अनुसार प्रसिद्ध ऋषि व्यास ने यहां अपना भोजन पकाया था। स्थानीय निवासियों द्वारा हाथ से बुने और हाथ से काते गए ऊनी कपड़े बनाना यहां का मुख्य उद्योग है। उद्योग विभाग ने यहां एक केंद्र शुरू किया है जो विभिन्न प्रकार के परिष्कृत ऊनी सामान तैयार करता है। 1960 में पिथौरागढ़ जिले के गठन के बाद यह स्थान एक टाउनशिप के रूप में विकसित हुआ। सब डिवीजनल मजिस्ट्रेट का आवास और न्यायालय 1965-66 में बनाया गया था। सर्दियों के दौरान ऊपरी ब्यांस के अधिकांश निवासी इस स्थान पर प्रवास करते हैं। यहाँ मलयनाथ का एक पुराना और प्रसिद्ध मंदिर है, जो शिव को समर्पित है, जहाँ दूर-दूर से

लोग आते हैं। मंदिर में रक्षाबंधन और शिवरात्रि के अवसर पर मेले लगते हैं, जिनमें लगभग 1,000 लोग शामिल होते हैं, जब कभी-कभी बकरों की बलि दी जाती है। इस स्थान से लगभग 8 किमी दूर नारायण नगर है, जो एक छोटा लेकिन आकर्षक इलाका है, जिसे नारायण स्वामी ने बसाया था। इसमें नारायण देवता को समर्पित एक मंदिर है। गंगोलीहाट (परगना गंगोली, तहसील पिथौरागढ़) गाँव का नाम गंगोली, परगना के नाम और हाट से लिया गया है, जिस नाम से इस स्थान को स्थानीय रूप से पुकारा जाता है। इसमें महाकाली का एक मंदिर है, जिसके बारे में कहा जाता है कि यह बहुत प्राचीन है और यह घने देवदार के जंगल के बीच में स्थित है। ऐसा कहा जाता है कि चंद राजाओं के शासनकाल के दौरान, कभी-कभी इस मंदिर में मनुष्यों की बलि दी जाती थी, लेकिन पिछली शताब्दी में यह प्रथा बंद कर दी गई थी। बकरियों और भैंसों की बलि आज भी दी जाती है, खासकर चैत्र और अश्विन के नवरात्रों के दौरान। इस स्थान पर चंद राजाओं के एक शासक द्वारा निर्मित एक छोटे किले के अवशेष भी हैं। गांव से लगभग 8 किमी दूर पट्टी भेरंग में शिव को समर्पित पाताल भुवनेश्वर का एक प्राचीन मंदिर है, जो एक लंबी और अंधेरी सुरंग के अंदर स्थित है और बड़ी संख्या में भक्तों को आकर्षित करता है। जराजीबली (परगना असकोट, तहसील धारचूला)

जराजिबली (जिसे आमतौर पर जौलजीबी के नाम से जाना जाता है) नाम दो शब्दों से लिया गया है – जौल (संगम) और, जीभ (जीभ), दो नदियों, गोरी और काली के बीच में भूमि की एक संकीर्ण पट्टी, जीभ जैसी।

संगम से थोड़ा ऊपर आम और अन्य पेड़ों के घने बाग में महादेव का मंदिर है। मंदिर के सामने एक धर्मशाला है (जिसे असकोट की रानी ने 1944 में बनवाया था)

जहाँ से इन दोनों नदियों के संगम का सुंदर दृश्य दिखाई देता है।

यह स्थान अपने रिंगाल और लकड़ी के काम (जिसे निगाला कहा जाता है) के लिए प्रसिद्ध है और यहाँ एक कताई और बुनाई केंद्र है। नवंबर में ब्रिश्चिक संक्रांति के समय जराजीबली में एक व्यापारिक मेला (जिसमें लगभग 10,000 लोग शामिल होते हैं) आयोजित किया जाता है, ऐसा कहा जाता है कि इस प्रथा की शुरुआत असकोट के रजवारों ने की थी। मिलम (परगना जोहार, तहसील मुनस्यारी) मिलम एक ऐसा गांव है जो ऊंचे बर्फ के पहाड़ों से ढके क्षेत्र में स्थित है जहां चट्टानें विभिन्न रंगों की हैं। झरने

असंख्य हैं और उनमें से कई बहुत सुंदर हैं। मिलम के ऊपर गोरी नदी की घाटी में कुछ दूरी पर शांगचू कुंड है, जो हरे पानी की एक छोटी सी चादर है जो तीर्थस्थल के रूप में बहुत प्रसिद्ध है। मिलम जून से अक्टूबर तक आबाद रहता है और बाकी साल के दौरान पूरी तरह से सुनसान रहता है क्योंकि कड़ाके की ठंड पड़ती है। अतीत में यह इस क्षेत्र का सबसे बड़ा प्रवासी गांव था और मल्ला जोहार के लिए एक केंद्रीय स्थान था। मुनस्यारी (परगना जोहार, तहसील मुनस्यारी)

मुनस्यारी, तहसील मुख्यालय, गोरी नदी के दाहिने किनारे पर स्थित है। पहले इसे रांथी के नाम से भी जाना जाता था, उप-मंडल और तहसील मुख्यालय तिकसेन नामक स्थान पर स्थित है। सर्दियों में यहाँ ठंड होती है, लेकिन गर्मियों में बहुत सुहावना होता है।

मुनस्यारी थुलमा (बड़े गलीचे) के लिए सबसे महत्वपूर्ण विनिर्माण केंद्रों में से एक है, भेड़ पालन यहाँ के लोगों का मुख्य व्यवसाय है।

अस्कोट में कुल क्षेत्रफल प्रति एकड़ चार आना नौ पाई राजस्व निर्धारित है जबकि कृषि भूमि पर यह दर सात आना नौ पाई है. पटवारी बाड़कोट में रहता है. स्कूल देवल में है. अस्कोट में कास्तकारी सारे कुमाऊँ से अलग तरह की है. इन पहाड़ियों में यही एक परगना है जहाँ जमींदारी परम्परा है. यह जमींदारी कई पीढ़ियों से कत्यूरी सूर्यवंशी राजाओं के वंशजों के पास है जो अपने नाम के साथ 'पाल' लगाते हैं और जिन्हें 'रजबार' उपाधि मिली है. इनके बारे में कुछ जानकारी कुमाऊँ के इतिहास में दी जा चुकी है और यहाँ हमें केवल राजस्व इतिहास की चर्चा करनी है.

(Askot History Himalayan Gazetteer Edwin Atkinson)

रजबार पीढ़ियों तक अस्कोट का राजस्व लेते रहे लेकिन बाद में चंद राजाओं से हारने के बाद उन्हें वार्षिक नजराने की शर्त पर यह अधिकार मिला. नजराना चंदों के वर्चस्व का प्रतीक था. गोरखाली विजय के समय नजराना 400 रुपया वार्षिक था जो गोरखों के समय ही बढ़ाकर 2000 रुपया कर दिया गया था और अंग्रेज हुकूमत तक राजस्व की यही दर रही. गोरखाली राज में यह रकम सम्भवतः सारे परगने से वसूल होने वाली राशि के बराबर थी. इस दौरान कोई बन्दोबस्त नहीं हुआ और 'टंका' नाम से वसूली होती रही. टंका एक तरह से नजराना ही है. हमारे समय में सबसे पहले बन्दोबस्त में नजराना का निर्धारण किया गया जो पहले से कम था.

पारिवारिक रिवाज ऐसा था कि बड़ा बेटा ही उत्तराधिकारी होता था और अन्य छोटे सदस्य उसी के साथ भूमिधारक होते थे. गोरखा राज में इस नियम की अवहेलना की गई और रजबार की मृत्यु पर उसके भाई व पुत्र रुद्रपाल तथा महेन्द्रपाल को उत्तराधिकारी बना दिया गया ताकि दोनों में से हरेक स्थानीय गोरखाली सेना नायक के हित में एक-दूसरे पर हमला करता रहे।

ब्रिटिश सरकार द्वारा किये गये प्रथम बन्दोबस्त में दोनों लोगों की सुलह करायी गयी और उन्हें परगने का पट्टाधारक बनाया गया. पिछले अनुबन्धों की तुलना में यह पट्टा इस मामले में अलग था कि इसमें गाँवों के नाम लिखे थे और कुल राजस्व निर्धारित किया हुआ था. राजस्व माँग का गाँववार विभाजन पूरी तरह रजबार के निर्णय पर निर्भर था और इसमें गाँव के भूमिधारक की सहमति की कोई जरूरत न थी।

दूसरे बन्दोबस्त में यही प्रणाली अपनायी गयी और तीसरे बन्दोबस्त में केवल यही फर्क रहा कि रुद्रपाल और महेन्द्रपाल के बीच व्यक्तिगत समझौते के अनुरूप रुद्रपाल की सहमति पर उसका नाम अनुबन्ध पत्र से हटा दिया गया. कालान्तर में दोनों के बीच मतभेद हो गये और रुद्रपाल ने न्यायालय में अर्जी दे दी. परिणास्वरूप वादी के पक्ष में यह निर्णय हो गया कि जैसी पहले त्रैवार्षिक बंदोबस्त में स्थिति थी उसी हिसाब के परगने की एक तिहाई रजबारी रुद्रपाल को उसके एक तिहाई हिस्से के वास्ते और तीसरा नयी खेती वाले उन गाँवों के बारे में जो महेन्द्रपाल ने अपने संसाधनों से पूर्व के तीन वर्षों में हासिल किये थे और जिनके बारे में न्यायालय ने निर्णय नहीं दिया था।

परिवार के अन्य सदस्यों ने भी रजबारी में हिस्सों का दावा किया लेकिन चूंकि इनमें से किसी भी सदस्य ने पिछली सरकार के समक्ष अधिकार का दावा नहीं किया था और न इस बाबत पिछला अनुबंध था इसलिए स्थानीय प्रचलित नियमों के हिसाब से उनका दावा खारिज कर दिया गया।

बाद में रजबारी का छोटा हिस्सा सामान्य उत्तराधिकार में तीन भाइयों- पिर्थी, सरबजीत और मोहकम को मिला. वर्ष 1832 में ट्रेल ने हैल्पिया और उसके 24 तोकों का अलग अनुबन्ध मोहकम सिंह को स्वीकृत किया जबकि देवल और उसके 83 तोक रजबारी के पट्टे में ही रहे. इस तरह की स्वीकृति को स्थानीय कानूनों ने पहले कभी मान्यता नहीं दी थी. इन नये भू-स्वामियों ने भूमिधारकों से अलग पहचान बनाने में खूब कर्ज लिया. वे

ऋण में इस कदर डूब गये कि उन्हें न्यायालय में लाया गया. उन्होंने मूर्खतापूर्ण ढंग से प्रतिवाद किया।

मोहकम सिंह अपने एक रिश्तेदार की शरण में डोटी चला गया लेकिन पिरथी सिंह को पकड़ लिया गया और कुछ समय तक वह अल्मोड़ा सिविल जेल में रहा. इस कानूनी कार्रवाई का नतीजा यह हुआ कि 1843 के कोर्ट के एक निर्णय के तहत उनकी सम्पत्ति नीलाम कर दी गई और प्रमुख लेनदार कृष्णा सयाल इस सम्पत्ति का खरीदार बना. खरीदार का बडा भाई हीरालाल मुकदमे के दौरान ही आश्चर्यजनक तरीके से गायब हो गया और देनदार और उनके दोस्तों पर उसे गायब करने का हाथ होने का संदेह था. इसके बाद कृष्णा सयाल के साथ नया बन्दोबस्त किया गया और पहले से चला आ रहा राजस्व 273 रुपये ही तय किया गया लेकिन कृष्णा सयाल कब्जा लेने ही वाला था कि पिरथी और मोहकम सिंह के लड़कों ने उसका कत्ल कर दिया और खुद बचने के लिए अपने रिश्तेदारों के पास डोटी चले गये।

कृष्णा सयाल का उत्तराधिकारी नाबालिग था और कमिश्नर की सहमति से कछ समय के लिए सम्पत्ति उस रजबार के प्रबन्ध में रही जिसने मुकदमें में भाग लिया था. इस बीच प्रत्येक गाँव के संसाधनों और वहाँ खेती करने वाले ग्रामीणों के हालातों की जाँच की गई और पाया गया कि वास्तविक हल जोतने वाले लोग डोटी के आप्रवासी थे. प्राप्तियों का अनुमानित मूल्य सीर जमीन के साथ 364 रुपये था. साथ ही पारम्परिक देय 'साग-पात' या 'डोला-ढेक' और विशेष देय 'टीका-भेंट' तथा सामान व पालकी ले जाने की सेवाओं के रूप में था. रजबारी का हक सदैव राज-सत्ता की इच्छा पर निर्भर था और प्राचीन परम्परा से नियम यह था कि जब तक रजबार अपने घर के लोगों की समुचित जरूरतों की पूर्ति सुचारु रूप से करता रहता है तब तक अपनी सम्पदा का लाभ लेने और उसकी मात्रा तथा उसके बँटवारे में मामले में उस पर कोई बन्धन नहीं था।

वर्ष 1847 में न्यायालय के निर्णय पर यह सम्पत्ति फिर बेच दी गई और खरीदार था अल्मोड़ा कलक्ट्रेट का खजांची तुलाराम. कब्जा लेने के लिए संसाधन वह अगले साल तक जुटा पाया लेकिन 1855 में रजबार पुष्कर पाल ने इसका अधिकार वापस खरीद लिया और अब वह पूरे अस्कोट का जमींदार है. वह इन शर्तों के साथ जमींदार है कि वह लाभ के लिए खेती बढ़ा सकता है और ऐसी व्यवस्था कर सकता है जिसे वह तालुका

के लाभ के लिये जरूरी समझता हो लेकिन वह स्थाई कास्तकारों के उन कब्जों में हस्तक्षेप नहीं कर सकता जो गाँव के दस्तावेजों में दर्ज हों।

अस्कोट की इतिहास काफी प्राचीन और गौरवशाली है शक्तिशाली कार्तिकेयपुर कत्यूरी साम्राज्य के सूर्यवंशी सम्राट ब्रह्मदेव के पौत्र व त्रिलोक पाल देव के पुत्र कत्यूर से अस्कोट पिथौरागढ़ में आकर अपना राज्य स्थापित किया। इसका प्रारंभ 12 वीं शताब्दी से होता जब कैलाश मानसरोवर को जाने वाले यात्रियों को डाकू लुटेरे लुट लेते थे उस समय एक बड़े संत महात्मा ने सम्राट ब्रह्मदेव से गुहार लगाई और उनकी रक्षा करने को कहा और अपना एक पुत्र प्रदान करने को कहा तब धर्म व प्रजा पालक सूर्यवंशी कत्यूर राजवंश के सम्राट ब्रह्मदेव ने अपने पौत्र व त्रिलोक पाल देव के पुत्र अभय पाल देव को अपना क्षत्रिय धर्म निभाने के लिए कत्यूर से मानसरोवर यात्रीयो की रक्षा के लिए भेजा उस समय अस्कोट समेत आस पास का इलाका एक नेपाली राजा के अधीन था अभय पाल देव ने बहुत बड़ी सेना जो लगभग एक लाख के करीब थी नेपाली राजा पर आक्रमण कर उन्हें परास्त किया और सारा भू भाग जीत लिए और सन 1279 में अस्कोट राज की स्थापना करी जोकि 800 वर्ग मील में फैली थी व अस्सी कोट की थी जो 800 वर्ग मील की विशाल राज्य की देख रेख के लिए और सुचारू ढंग से शासन चलाने के लिए बनाई गई थी इस वजह से इसे अस्कोट भी कहा जाने लगा। अस्कोट की स्थापना होने पर तब देश भर से कैलास मानसरोवर यात्री अस्कोट पहुंचते थे। जहां से फिर जत्था अस्कोट रियासत की भूमि से लिपुलेख पार कर तिब्बत में प्रवेश करता था। इस दौरान मार्ग में कुछ अराजक तत्व लूटपाट करते थे। 1279 में तत्कालीन राजा अभय देव पाल ने कैलास यात्रियों की सुरक्षा के लिए अपने हथियार बंद लोगों को भेजना प्रारंभ किया। यह व्यवस्था आजादी के बाद रियासत के देश में विलय होने तक जारी रही। आज जिस कालापानी, लिपुलेख, लिम्पियाधुरा पर नेपाल अपना हक जता रहा है यह नेपाल का कभी नहीं रहा। वर्तमान सीमा से लगा पश्चिमी नेपाल का विशाल भू-भाग अस्कोट के पाल सूर्यवंशी राजाओं का था। सुगौली संधि पर अंग्रेजों ने कालापानी को सीमा बनाया। पाल कत्यूरी राजवंश के तत्कालीन राजा को तब नेपाल को सौंपी गई उनकी भूमि का अंग्रेजों ने मुआवजा दिया था, हालांकि अस्कोट राजवंश इसके पक्ष में नहीं था। एक समय पर अस्कोट राज रियासत तिब्बत सीमा कालापानी, लिपुलेख से लेकर वर्तमान नेपाल के पश्चिमी क्षेत्र तक फैली थी। अंग्रेजों की वर्ष 1815 में गोरखाओं से संधि की वार्ता चली।

वर्ष 1816 में संधि पर सहमति बनी। संधि होने के बाद कत्यूरी राजवंश के तत्कालीन राजा महेंद्र पाल द्वितीय को बिहार के सुगौली बुलाया गया था।

सुगौली में अंग्रेजों ने बताया गया कि कालापानी को भारत नेपाल की सीमा तय कर दिया गया है। अंग्रेजो ने पाल राजवंश की नेपाल को दी गई भूमि का मुआवजा दिया। उस समय उनके पूर्वजों को उनकी रियासत की 200 वर्ग मील जमीन नेपाल को दिए जाने के बदले में दी गई धनराशि 70000 थी, और सुगौली संधि में भूमि नेपाल को दिए जाने का उल्लेख है। रियासत की भूमि नेपाल को दिए जाने से अस्कोट राजवंश अंग्रेजों की चाल से नाखुश थे। हालांकि अंग्रेजो द्वारा एक बार एक बड़ी सेना के साथ अस्कोट पर चढ़ाई की गई थी जिसमें उन्हें मुंह की खानी पड़ी, अस्कोट के सूर्यवंशी योद्धा गोरिल्ला युद्ध में पारंगत थे जिसका अंग्रेजो का जरा भी भान नहीं था और वो अस्कोट की पहाड़ियों की तरफ अस्कोट को जितने के उद्देश्य से निकल पड़े हालांकि सूर्यवंश की ध्वजा लिए क्षत्रिय वीर पहले ही उनका इंतजार कर रहे थे, अंग्रेजो के पहुंचते ही क्षत्रियों ने गोली बारी, भाला बरछी व धनुष बाण से हमला करने लगे कुछ ही देर में अंग्रेजो की सेना हौसला खोने लगी इधर अस्कोट के राजा ने अंग्रेज जनरल को पकड़ने का आदेश दे दिया कई घंटों के भीषण युद्ध के बाद सूर्यवंश का डंका बजने लगा ढोल नगाड़े बजने लगे जब अस्कोट के सेनापति ने राजा के आदेश पर अंग्रेज जनरल का सर काटकर अपने राजा के चरणों में रख दिया ये बड़ा ही मनोरम मंजर था अंग्रेजो पर सूर्यवंशीयो की विजय का आज भी अस्कोट राजघराने में अंग्रेज का कटा सर महल के दरवाजे के नीचे दबा रखी और जनरल की तलवार अस्कोट महल की दीवारों पर सूर्यवंशीयो की विजय के चिन्ह के रूप में शोभा बढ़ा रही है।

अस्कोट पाल राजवंश के कुलदेवता का मंदिर अभी भी नेपाल में है। काली नदी पार के शिखर चोटी पर राजवंश के कुलदेवता मल्लिकार्जुन महादेव का मंदिर है। अस्कोट के धर्मवीर राजा महेंद्र पाल द्वितीय और रानी प्रतिदिन इस मंदिर में पूजा करने जाते थे।मल्लिकार्जुन की परम भक्त रानी नेपाल को 200 वर्ग मील जमीन देने के बाद उन्होंने महादेव से प्राथना की ये अब हमारी रियासत का हिस्सा नहीं अतः आप कुछ हल निकालिए इस प्रार्थना पर नेपाल के शिखर से एक स्वयंभू शिवलिंग शंख और एक घंट उड़ता हुआ अस्कोट के अंगलेख की चोटी पर आया जहां पर पूजा अर्चना के लिए मल्लिकार्जुन में मंदिर बनाया गया।

अस्कोट के रजवार शासकों के ताम्रपत्र कुमाऊँ के पृथक-पृथक स्थानों से प्राप्त हुए है, जो कुमाऊँ के सरयू पूर्व भू-भाग पर रजवारों द्वारा शासित क्षेत्र के राजनैतिक भूगोल को निर्धारित करने में सहायक हैं। रजवार शासकों के प्रकाशित ताम्रपत्र-

1- किरौली ताम्रपत्र।

2- भेटा ताम्रपत्र।

3- अठिगांव या गणाई-गंगोली ताम्रपत्र।

रजवार शासकों के उक्त प्रकाशित ताम्रपत्रों के अतिरिक्त इन्द्र रजवार और महेन्द्रपाल का एक-एक ताम्रपत्र प्रकाश में चुका है। इन्द्र रजवार का सन् 1594 ई. का ताम्रपत्र बागेश्वर के चामी गांव तथा महेन्द्रपाल का सन् 1622 ई. का ताम्रपत्र अठिगांव से प्राप्त हुआ है। अतः गंगोली में रायपाल के मृत्यूपरांत, जो रजवार शासन आरम्भ हुआ, प्रथम रजवार शासक इन्द्र रजवार तथा अंतिम शासक महेन्द्रपाल थे। महेन्द्रपाल अस्कोट-पाल वंशावली के अनुक्रम में 95 वें राजा थे।

सोलहवीं सदी में चंद शासक बालो कल्याणचंद ने गंगोली पर अधिकार कर लिया जो कार्तिकेयपूर सूर्यवंशीयो का राज्य था और इसके साथ ही यह गांव भी चंद राज्य के अधीन आ गया। चंद कालीन एक ताम्रपत्र बनकोट के निकट गणाई-गंगोली से प्राप्त हुआ है, जिसमें शाके 1532 (सन् 1610 ई.) उत्कीर्ण है। इस ताम्रपत्र में 'श्री राजाधिराज पृथ्वीचन्द्र रजवार' उत्कीर्ण है। रजवार नामान्त से स्पष्ट है कि श्री राजाधिराज उपाधि धारक यह शासक चंद वंशज नहीं था। कुमाऊँ के चंदों पर ब्राह्मण-वर्चस्व कालीपार के चंद रजवारों की तुलना में अधिक था। यह भी एक सूक्ष्म अंतर हैं। यों तो कुमाऊँ के चंदों ने भी जहां पर अपनी प्रजाजनों की किसी विशेष उद्देश्य से गणना की है, ब्राह्मणों की गिनती भी सामान्य कृषक वर्ग में की है, फिर भी वे विभिन्न धार्मिक क्रिया-कलापों में ब्राह्मण वर्ग का सम्मान करते थे। दूसरी ओर आज भी कालीपार के रजवारों में ब्राह्मण को प्रणाम तभी किया जाता है, जब वह पहले स्वस्तिवाचन करता है। ब्राह्मण पहले रजवार वर्ग के किसी भी व्यक्ति को चाहे वह दरिद्र हो या राजा, पहले 'स्वस्ति' कहता है, तब रजवार 'पैलागि' कहते हैं। अस्कोट के 'रजवार' को तो उनके ब्राह्मण भूमि पर लेटकर 'स्वस्ति महाराज' कहकर पहले प्रणाम करते थे। रजवार नामन्त वाले शासक अस्कोट राजवंश के माने जाते हैं। इस ताम्रपत्र में उत्कीर्ण राजाधिराज की उपाधि से स्पष्ट

होता है कि पृथ्वीचन्द्र रजवार समकालीन चंद शासक का अधीनस्थ शासक था। तेरहवीं सदी में कत्यूरी सूर्यवंशी सत्ता के विभाजन के फलस्वरूप पिथौरागढ जनपद के अस्कोट, सीरकोट और मणकोट में नवीन क्षेत्रीय राज्यों का उदय हुआ। अस्कोट और सीराकोट पूर्वी रामगंगा और काली नदी के अंतस्थ भाग में तथा मणकोट पूर्वी रामगंगा और सरयू नदी के अंतस्थ भाग में स्थित है। सरयू और पूर्वी रामगंगा के अंतस्थ भाग को ही गंगोली कहा जाता था। ''कत्यूरी-राज्य के समय तमाम गंगोली का एक ही राजा था। उसके नगर व किले का नाम मणकोट था। राजा भी मणकोटी कहलाता था।'' यह कोट कुमाऊँ के इतिहास में एक ऐसा कोट था जो अस्कोट के अस्सी कोटि के अंतर्गत आता था, जिसके नाम से शासक वर्ग की वंशावली आरंम्भ हुई।

मणकोट के अतिरिक्त गंगोली क्षेत्र में बनकोट, बहिरकोट, रणकोट, सिमलकोट, धारीधुमलाकोट, ''जमड़कोट'' इत्यादि कोट थे। अस्कोट राज्य में ''अस्सीकोट'' थे। बनकोट पुरास्थल उत्तराखण्ड के पिथौरागढ़ जनपद के नवनिर्मित गणाई-गंगोली तहसील में स्थित एक पर्वतीय गांव है, जिसे ब्रिटिश कालीन पट्टी अठिगांव, परगना गंगोली, जनपद अल्मोड़ा में के रूप में चिह्नित कर सकते हैं। जिस पहाड़ी की उत्तरी पनढाल पर बनकोट गांव बसा है, उसके दक्षिणी पनढाल में सरयू नदी प्रवाहित है। इस गांव के उत्तरी पनढाल का जल सरयू की एक सहायक नदी कुलूर नदी में गिरता है। भौगोलिक स्थिति एवं ऐतिहासिक अनुक्रम के आधार पर कह सकते हैं कि यह गांव चौदहवीं सदी में मणकोट और पूर्व काल में कत्यूरी सूर्यवंशी राजवंश के अधीन था। गंगोली का प्रथम ऐतिहासिक राजवंश मणकोटी मान्य है और इस वंश का शासन मणकोट (गंगोलीहाट के निकटवर्ती सुनार गांव के पूरब में स्थित प्राकृतिक दुर्ग) से संचालित था। आदिवासी खसों को एक केन्द्रीय शासन में लाने का श्रेय सूर्यवंशी कत्यूरी राजवंश को है। चौथी ताब्दी ईस्वी में एक सूर्यवंशी कत्यूरी राजा गुप्त साम्राज्य के मांडलिक थे। (स्मिथ १६२४-३०२) । सूर्यवंशी शासकों ने कुमाऊँ में यहाँ के निवासी खसों और डोमों के अतिरिक्त अनेक राजनैतिक संस्थाओं का प्रवेश कराया। कत्यूरी सूर्यवंशीयो ने अपने राज्य के छोटे-छोटे मंडल बनाए । प्रत्येक मंडल में एक मंडलार या मांडलिक की नियुक्ति की। चार मांडलिकों को मिलाकर एक राजवटी बनाई और इस राजवटी का अधिकारी रजवार कहलाया। मंडलारों के अन्तर्गत सैनिक कार्य के लिए थोकदार (जाति का मुखिया) तथा पधान (गाँव का मुखिया) नियुक्त किया गया। ये दोनो मंडलारों के अधीन अपने-अपने

इलाके में शांति और व्यवस्था के लिए उत्तरदायी थे। (ठुलघरिया-२३)। शंकराचार्य के आगमन के उपरान्त कत्यूरी सूर्यवंशीशासकों ने दक्षिण तथा मैदान भूक्षेत्न से ब्राह्मणों को बुलाकर उन्हें जागीरें दीं थी।

अस्कोट के सूर्यवंशी धर्मरक्षक शासकों की सूची।

राजवार अभय पाल देव 1279 अस्कोट की स्थापना करी और पाल उपनाम अपनाया जिसका अर्थ प्रजापालक, गौ, ब्राह्मण और मंदिरों की रक्षा करना है जो एक क्षत्रिय का कर्तव्य है। सम्राट अभय पाल देव के तीन पुत्र हुए रजवार निर्भय पाल

कुँवर अलख देव पाल एवं तिलक देव जिनमें रजवार निर्भय पाल आगे चल कर अस्कोट के राजा हुए व उनके दो छोटे भाई एक बड़ी सेना लेकर तराई की तरफ उत्तर-पूर्वी उत्तर प्रदेश के मैदानी इलाकों में एक सेना का नेतृत्व किया और 1305 में महुली में अपनी राजधानी स्थापित की व कुँवर तिलक देव ने बस्ती जिले के अमोड़ा में राज्य बसाया। रजवार निर्भय पाल के पश्चात्

रजवार भरत पाल,

रजवार भैरों पाल,

रजवार बीएचयू पाल,

रजवार रतन पाल,

रजवार शंख पाल,

रजवार श्याम पाल,

रजवार साई पाल,

रजवार सुरजन पाल,

रजवार भोज पाल,

रजवार भरत पाल,

रजवार स्तुति पाल,

रजवार अछव पाल,

रजवार त्रिलोक पाल,

रजवार सूर्य पाल,

रजवार जगत पाल,

रजवार प्रजा पाल व इनके बाद रजवार राय पाल में शासन संभाले है उनके बाद 1588 में रजवार महेंद्र पाल अस्कोट के राजा बनते है फिर आगे ये रजवार जैत पाल से बढ़ते हुए

राजवार बीरबल पाल,

राजवार अमर पाल,

राजवार अभय पाल व राजवार उच्चभ पाल जी असकोट के राजवार 1742 में हुए इन्होंने तीन पत्नियाँ ब्याहीं जिनसे उनके छह बेटे थे।

राजवार बिजय पाल (सबसे बड़ा बेटा)

राजकुमार रुद्र पाल। 1811 के बाद उनकी मृत्यु हो गई।

कुंवर मोकम सिंह

कुंवर पृथ्वी सिंह

कुंवर सरबजीत सिंह, उनके वंशज बाद में मुआनी और रावलखेत के गांवों में चले गए, जहाँ वे अभी भी रहते हैं।

राजवार बिजय पाल, असकोट के राजवार राजा हुए उनके बाद

राजवार महेंद्र पाल अस्कोट के शासक हुए उनके बाद

राजवार महेंद्र पाल, असकोट के राजवार हुए 1811 के बाद उनकी मृत्यु हो गई।

राजवार बहादुर पाल,

कुंवर चीम सिंह, वे असकोट में बड़घर नामक स्थान पर रहते थे।

कुंवर तेज सिंह

कुंवर लक्ष्मण सिंह

कुंवर हिम्मत सिंह, अन्य बेटे बगड़ीहार्ट और भेलिया गांवों में चले गए, जहां उनके वंशज रहते हैं।

राजवार बहादुर पाल, असकोट के राजवार हुए उनकी मृत्यु 1871 में हुई। फिर राजवार पुष्कर पाल, असकोट के राजवार 1871 में हुए इनका जन्म 1843 में हुआ था ये मानद मजिस्ट्रेट थे। इनके बाद राजवार गजेंद्र पाल असकोट के राजवार उनकी मृत्यु 1929 में हुई।

कुंवर भूपेंद्र पाल,

राजवार बिक्रम बहादुर पाल

कुंवर जंग बहादुर पाल

कुंवर मांधाता पाल असकोट राजा हुए उनकी पुत्री श्री रानी बिंदु देवी, नेपाल के जनरल श्री अर्जुन शमशेर जंग बहादुर राणा से विवाहित थीं। इनके बाद

कुँवर राम बहादुर पाल,

कुँवर जीत बहादुर पाल फिर अस्कोट के रजवार बिक्रम बहादुर पाल हुए जो 1929 से 1939 तक शासन किए इन्होंने पश्चिमी नेपाल के बझांग के श्री प्रभु जंग बहादुर सिंह की बेटी रानी त्रिभुवनेश्वरी देवी से शादी की इनकी मृत्यु 1939 में हुई।

रजवार टिकेन्द्र बहादुर पाल,

कुँवर हरिराज सिंह पाल,

कुँवर चित्रवन सिंह पाल,

राजवार टिकेंद्र बहादुर पाल, अस्कोट के राजवार हुए जो 1939 से 2000 तक शासन किया इन्होंने बांसवाड़ा के महामहिम महाराजा चंद्रवीर सिंहजी की बेटी से शादी की और नवंबर 2000 में उनकी मृत्यु हो गई। इनके

रजवार भानुराज सिंह पाल असकोट के रजवार हुए जो क्षत्रिय इतिहास और उसके संरक्षण के लिए कार्य कर रहे कार्तिकेपुर राजवंश का इतिहास प्रकाश में लाने के लिए इनका अमूल्य योगदान रहा है। ये 2000 से असकोटे के रजवार के रूप में अस्कोट राजा हुए इनका विवाह नीलगाउन राज्य (सीतापुर, यूपी) के राजा भानु प्रताप साहा की बेटी रानी नीलम पाल देवी और रायराखोल की रानी कदम कुमारी देवी से शादी की जिनका जन्म 23 अप्रैल 1959 को हुआ था और इनके एक बेटा और एक बेटी है। राजकुमारी गायत्री कुमारी पाल, जिनका जन्म 17 नवंबर 1988 को हुआ था, उनकी शादी 18

नवंबर 2010 को जयपुर में युवराज साहब महाराजकुमार शिवराज सिंहजी से हुई, जो जोधपुर के महामहिम महाराजा गज सिंहजी द्वितीय और उनकी पत्नी महारानी हेमलता राज्ये के बेटे हैं।

अस्कोट राज के राजा भानुराज पाल जी के एक पुत्र

टिक्का महिराज सिंह पाल है इनका जन्म 22 सितंबर 1993 को हुआ था।

अस्कोट राज के कुछ चित्र।

अस्कोट पुराना राजमहल इसमें १०० कमरे थे

अस्कोट महल का अवशेष।

वर्तमान अस्कोट महल।

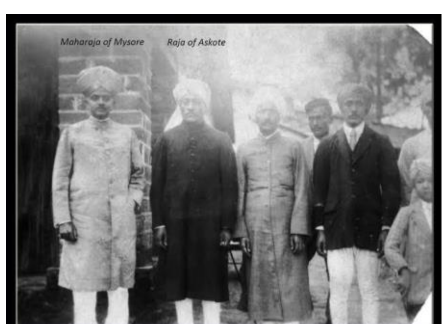

अस्कोट के राजा विक्रम बहादुर पाल के साथ मैसूर के राजा कृष्णराज वाणियार।

अस्कोट के वर्तमान राजा श्री भानुराज पाल और रानी नीलम कुमारी।

अस्कोट सूर्यवंश कुलभूषण राजा भानुराज पाल व उत्तराखंड मुख्यमंत्री पुष्कर धामी जी।

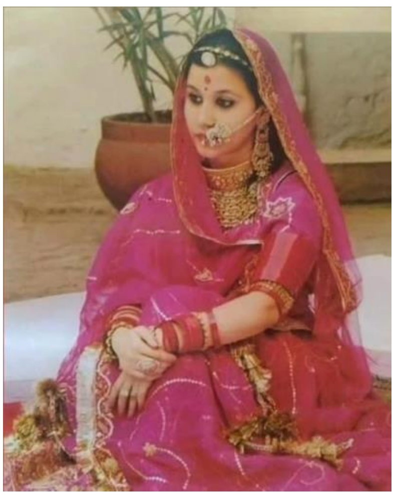

अस्कोट की राजकुमारी श्रीमती कुमारी गायत्री पाल।

वर्तमान में जोधपुर – मारवाड़ की रानी व कुंवर शिवराज सिंह जी की पत्नी हैं।

अस्कोट के सूर्यवंशी क्षत्रियों द्वारा अंग्रेजो को हराकर व उनका सर काटकर लायी गई अंग्रेज जनरल की शाही तलवार।

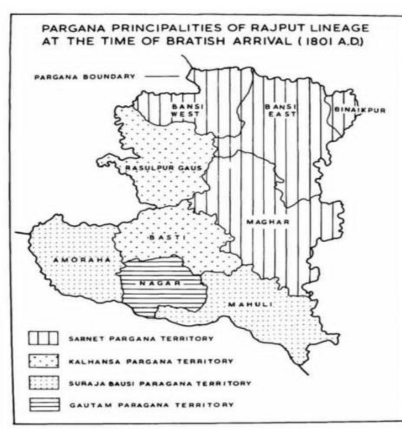

महसों/ महुली।

शक्तिशाली कार्तिकेयपुर कत्यूरी साम्राज्य के सम्राट ब्रह्मदेव के पौत्र व त्रिलोक पाल देव के पुत्र कत्यूर से अस्कोट पिथौरागढ़ में आकर अपना राज्य स्थापित किया उन्हीं के दो छोटे पुत्र अलख पाल देव और तिलक देव अस्कोट से एक विशाल सेना लेकर तराई मैदानी क्षेत्रों की तरफ आए और 1305 में एक बड़ी सेना के साथ तराई क्षेत्र और यूपी के मैदानी इलाकों से गुजरने के बाद गोंडा/गोरखपुर बस्ती क्षेत्र में आ गए। यह क्षेत्र घने जंगलों और दलदलों से आच्छादित था और यहाँ उग्र भर आदिवासी रहते थे। दक्षिण में घाघरा नदी और पूर्व में राप्ती नदी इस क्षेत्र को भारी हमलों से बचाती थी। राजा अलख देव महसों के प्रथम राजा बने और तिलक देव ने अपना राज्य अमोड़ा मैं स्थापित किया, राजा अलख पाल देव का राज 1305 से1342 तक रहा तथा उनका जन्म 1281 में हुआ था, सम्राट ब्रह्म देव के परपोते और असकोट के रजवार अभय पाल देव के पुत्र, उन्होंने उत्तर-पूर्वी उत्तर प्रदेश के मैदानों में एक सेना का नेतृत्व किया और राजभर आदिवासी

कौलबिल को मार डाला। अलख देव ने 1305 में बस्ती से 32 किमी (गोरखपुर से 100 किमी) दूर महुली गाँव में अपनी राजधानी स्थापित की। महसों-महुली का सामंती राज्य 14 कोस (47 किलोमीटर) लंबाई में फैला था और इसमें कई सौ गाँव शामिल थे; शादी की और बच्चे हुए। उनकी मृत्यु 1342 में हुई उसके बाद उनके पुत्र राजा तपतेज पाल, महसों के दूसरे राजा हुए जिनका राज1342 से 1359 तक रहा उनका जन्म 1308 में हुआ था, उनके शासनकाल के दौरान 1353 में भारत के सम्राट, सुल्तान फिरोज शाह तुगलक ने बंगाल के नवाब को दंडित करने के लिए एक विशाल सेना का नेतृत्व करते हुए दिल्ली से मार्च किया, जिसने दिल्ली से अपनी स्वतंत्रता की घोषणा की थी। उसी वर्ष नवंबर में, सुल्तान फिरोज शाह तुगलक ने उत्तर-पूर्वी उत्तर प्रदेश में रुकने और शिविर लगाने का फैसला किया। यहां उन्होंने सामंतों से श्रद्धांजलि एकत्र की और दिल्ली सल्तनत के सिंहासन के प्रति उनकी वफादारी सुनिश्चित की। सुल्तान के बंगाल अभियान के लिए तपतेज देव ने पुरुष, हथियार और सामग्री प्रदान की। बदले में, सम्राट सुल्तान ने तपतेज देव को 'राजा' का दर्जा और इसके साथ आने वाले विशेषाधिकार प्रदान किए।

महसों के तीसरे राजा राजा खान पाल का जन्म 1329 में हुआ जिनका राज 1359 से1372 तक चला उसके बाद राजा कुँवर पाल महसों के चौथे राजा बने जिनका जन्म 1358 में हुआ था इनका राज 1372 से 1404 ईसवी तक चला इनके पश्चात राजा तेज पाल महसों के 5वें राजा बने इनका जन्म 1378 ई. में हुआ था इनका राज 1404 से 1421 तक चला तत्पश्चात महसों के छठे राजा राजा सकत पाल का जन्म 1398 में हुआ इनका राज 1421 से1441 तक चला। राजा मान पाल महसों के 7वें राजा हुए इनका जन्म 1440 ईसवी में हुआ इनका राज 1441 से 1480 तक रहा 1480 ईसवी में इनका देहांत हो गया।

- राजा परशुराम पाल महसों के 8वें राजा हुए इनका जन्म 1470 में हुआ तथा इनका राज 1480 से 1535 तक चला इनकी मृत्यु 1535 में हो गई इसके बाद राजा मर्दन पाल महसों के 10वें राजा बने इनका जन्म 1545 ईसवी में हुआ तथा इनका राज 1585 से1620 तक रहा इस दौरान मुगल साम्राज्य अपने चरम पर था, दिल्ली के सिंहासन पर सम्राट अकबर थे। मुगलों ने विभिन्न राजपूत राज्यों को भारत पर अपना आधिपत्य स्वीकार करने के लिए प्रेरित किया। मुगलों ने या तो गठबंधन किया या विद्रोहों को

कुचल दिया, जिससे यह सुनिश्चित हुआ कि राजपूत सामंतो ने अपने लोगों और उनके हित जान माल और संस्कृति की रक्षा के लिए दिल्ली की सत्ता स्वीकार लिया उसी क्रम में राजा मर्दन पाल ने दिल्ली के खजाने में 6,18,256 तांबे के सिक्के (15,456 चांदी के रुपये) का वार्षिक कर चुकाया। इसके अलावा, उन्होंने 2,000 पैदल सैनिकों के साथ-साथ कई सौ सैनिकों की एक स्थायी सेना भी प्रदान की। मुगल साम्राज्य में घुड़सवार सेना, ऊँट सेना और हाथी सेना के अधिकारी हुए व उनकी मृत्यु 1620 में हुई। इसके बाद राजा पृथ्वी पाल का जन्म 1570 में हुआ ये महसों के 11वें राजा बने इनका राज 1620 से 1631 तक रहा इनकी मृत्यु 1631 में हुई। राजा युधिष्ठिर पाल महसों के 12वें राजा बने जो 1631 से 1674 तक शासन किए इनका जन्म 1620 में व मृत्यु 1674 में हुई। तत्पश्चात राजा मणि पाल महसों के 13वें राजा बने इनका जन्म 1641 में हुआ व इनका शासन 1674 से 1710 तक रहा इनकी मृत्यु 1710 में हुई। इसके पश्चात् राजा द्वीप पाल महसों के 14वें राजा हुए जो 1710 से 1730 तक शासन किए इनका जन्म 1680 में हुआ था, इस दौरान मुगल साम्राज्य कमजोर हो गया था और अवध के गवर्नर ने मध्य और पूर्वी उत्तर प्रदेश के पूरे क्षेत्र पर एक वंशानुगत राज्य स्थापित किया था। इनकी मृत्यु 1730 में हुई। तत्पश्चात राजा बख्तावर पाल महसों के 15वें राजा बने जो 1730 से 1774 तक शासन किए इनका जन्म 1728 में हुआ था व इनकी मृत्यु 1774 में हुई। इनके बाद राजा सरफराज पाल महसों के 16वें राजा हुए जो1774 से 1833 ईश्वी तक शासन किए इनका जन्म 1765 में हुआ इनके शासनकाल के दौरान एक भयंकर हमला किया गया था 1780 में पड़ोसी सामंती गौर सरदारों द्वारा जागीर पर कब्ज़ा कर लिया गया फिर आगे राजा जसवन्त पाल के नेतृत्व में एक बड़ा युद्ध होता है जिसमें सूर्यवंश कुलभुषण राजा जसवन्त पाल गौर सरदार को मारकर विजयी होते है। इसे मुरकट्टी के युद्ध के मैदान में (जहाँ सिर कटते हैं) कहा गया है जहां राजा विजयी होते है और जीत बहुत बड़ी होती है, जिसमें भारी नुकसान और कमज़ोरियाँ उजागर होती हैं। राजधानी को अधिक दूर किसी अन्य स्थान पर स्थानांतरित करने का निर्णय लिया जाता है। सुरक्षित स्थान चुना गया, और महुली से 22 किलोमीटर दूर महसों गांव को चुना गया और फिर राजधानी महुली से महसों आ गई इस युद्ध का उल्लेख महसों के राज कवि पीतांबर भट्ट ने जंगनामा में किया है। महसों के सेनापति पहलवान हुए जो अंग्रेजो से लड़ते हुए वीरगति को प्राप्त हो गए थे महसों राजा द्वारा सूर्यवंश कुलभूषण पहलवान पाल हलुआपार जागीरदारी दी

गई थीं। हलुआपार के सूर्यवंशी क्षत्रिय इन्हीं के वंशज है। सेनापति पहलवान पाल की पत्नी इन्हीं के साथ सती हो गई थीं इनकी समाधि आज भी महसों में बुआ व बाबा के नाम से बनी हुई है। इनकी मृत्यु 1833 में हुई। तत्पश्चात

राजा शमशेर बहादुर पाल, महसों के 17वें राजा हुए जिनका शासन 1833 से1834 तक रहा व इनका जन्म 1784 में हुआ था। जब 1801 में अवध के नवाब सआदत अली खान ने अवध साम्राज्य का आधा हिस्सा ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी को सौंप दिया। इसमें गोरखपुर और आसपास के जिलों सहित अवध का पूरा पूर्वी क्षेत्र शामिल था। क्षेत्र के सामंतों ने कमजोर अवध साम्राज्य को कर देना बंद कर दिया था और जब ईस्ट इंडिया कंपनी ने अपना आधिपत्य थोपने का प्रयास किया, तो सामंतों ने विद्रोह कर दिया। गोरखपुर क्षेत्र के लिए ब्रिटिश कलेक्टर रूटलेज के अधीन ईस्ट इंडिया कंपनी को विद्रोह को कुचलने में चार साल लगे, जिसमें उन्होंने कई शासकों को सबक सिखाने के लिए उनके किले ध्वस्त कर दिए। राजा सरफराज पाल और शमशेर बहादुर पाल ने अंग्रेजों के साथ शांति समझौता कर लिया, जिसके तहत महसों-महुली परिवार को शासक के रूप में अपने विशेषाधिकार जारी रखने के बदले में कंपनी का आधिपत्य स्थापित हुआ, जिसमें वंशानुगत अधिकार के रूप में 'राजा' की उपाधि भी शामिल थी। इनका विवाह बलरामपुर के राजा की बेटी से विवाह हुआ व इनकी मृत्यु 1834 में हुई

इसके बाद राजा मर्दन पाल, महसों के 18वें राजा बने इनका शासन 1834 से 1850 तक रहा व इनका जन्म 1805 में हुआ था उनके दो छोटे भाइयों ने जिनमें बेहिल के ठाकुर भी शामिल थे, ने 1857 के विद्रोह में भाग लिया था। ईस्ट इंडिया कंपनी के विजयी होने के बाद, उन्होंने प्रतिशोध और बदला लेने का अभियान शुरू किया, जिसमें छोटे भाइयों की सभी संपत्तियां जब्त कर ली गईं और उन सामंतों को दे दी गईं जिन्होंने सक्रिय रूप से अंग्रेजों का समर्थन किया था (मरवाटिया के ठाकुर प्राथमिक लाभार्थी थे)। भाइयों को उनकी माँ के परिवार (बलरामपुर के राजा) के हस्तक्षेप से फांसी से बचाया जाता है, जिन्होंने विद्रोह में सक्रिय रूप से अंग्रेजों का साथ दिया था। दोनों भाइयों के परिवार निराशा और दरिद्रता की स्थिति में आ जाते हैं, और बलरामपुर से वजीफा और संपत्ति के साथ-साथ महसों परिवार द्वारा पुनर्वास के साथ उनका समर्थन किया जाता है। इनकी मृत्यु 1850 में हुई।

राजा भवानी गुलाम पाल, महसों के 19वें राजा हुए जिनका शासन 1850 से1892 तक रहा व इनका जन्म 1845 में हुआ था। उन्होंने अपनी कनिष्ठ पत्नी से अपने सबसे छोटे बेटे को उत्तराधिकार के अधिकार दिए, साथ ही अपनी कनिष्ठ पत्नी के दो अन्य बेटों को विशाल संपत्ति दीया इससे सबसे बड़े बेटे नरेंद्र बहादुर पाल ने ब्रिटिश अदालत में चुनौती दी थी। नरेंद्र बहादुर पाल पर कई बार हत्या के प्रयास किए गए और उन्होंने अपनी पत्नी और मां के परिवारों के समर्थन से निर्वासन से मुकदमा लड़ने का फैसला किया। मामला हाउस ऑफ लॉर्ड्स की प्रिवी काउंसिल में गया, जहां सामंती जागीर के उत्तराधिकारी के रूप में नरेंद्र बहादुर पाल के पक्ष में फैसला सुनाया गया। उनके पिता, राजा भवानी गुलाम पाल ने मुकदमा हारने के बाद, अपने तीन छोटे बेटों को अहरा, बुडवल और बिठ्ठा की प्रमुख राजस्व संपत्तियां भत्ते के रूप में देने का फैसला व उनकी मृत्यु 1892 में हुई तथा राजा नरेंद्र बहादुर पाल (वरिष्ठ पत्नी द्वारा) ठाकुर राजेंद्र बहादुर पाल (रानी सरताज कुवारी द्वारा), महसों में पैदा हुए, 1892 में अहरा की संपत्ति के उत्तराधिकारी बने व इनका विवाह कर्मेहिया के राजा की बेटी से हुआ।

• अहरा के लाल सत्राजीत बहादुर पाल ने अहरा राज की स्थापना करी। तथा राजा नरेंद्र बहादुर पाल महसों के 20वें राजा बने जिनका शासन 1892 से 1924 ईश्वी तक रहा व इनका जन्म 1865 में हुआ था इनकी पहली शादी गंगवाल के राजा की बेटी से व दूसरी शादी मझगवां के राजा की बेटी से हुई इनकी मृत्यु 1924 में हुई। इनके पुत्र राजा विजयप्रताप नारायण बहादुर पाल, लाल उदयप्रताप नारायण बहादुर पाल, लाल भानुप्रताप नारायण बहादुर पाल ने तीन विवाह किया और उनके पांच बेटियां और एक बेटा थे।

राजा विजयप्रताप नारायण बहादुर पाल महसों के 21वें राजा हुए इनका शासन 1924 से1930 तक रहा इनका जन्म 1901 में हुआ था इनका विवाह रानी प्रताप कुंवारी से हुआ था व इनका जन्म 1900 ईस्वी में तथा मृत्यु 1948 में हुआ था इनकी मृत्यु 1930 में हुई इसके बाद राजा काशी नाथ बहादुर पाल, महसों के 22वें राजा बने इनका शासन 1930 से1988 तक रहा व इनका जन्म 1918 में हुआ था ये स्वतंत्र पार्टी के सदस्य और उत्तर प्रदेश विधानसभा 1962 से 1967 में विधायक रहे इनका विवाह रानी शैलेश्वरी कुमारी से हुआ जो मनकापुर के राजा रघुराज सिंह की पुत्री थी उनकी मृत्यु दिसंबर 1988 में हुई।

राजकुमार अविनाश नाथ पाल, जन्म 11 जुलाई 1940, कॉल्विन ताल्लुकदार कॉलेज (लखनऊ), बिड़ला विद्या मंदिर (नैनीताल) से शिक्षा प्राप्त की, जी.बी. पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय पंतनगर (उत्तराखंड) से कृषि में बीएससी की डिग्री प्राप्त की; जुलाई 1963 में सुत्था (रायबरेली) के लाल सिद्धेश्वर बक्स सिंह की पुत्री कुंवरानी उषा पाल (जन्म 18 जनवरी 1947) से विवाह किया।

कुंवर अंशुमान पाल, जन्म 1 फरवरी 1969, कॉल्विन ताल्लुकदार कॉलेज लखनऊ से शिक्षा प्राप्त की, 1 फरवरी 1999 को कुंवरानी विनीता पाल (जन्म 19 मई 1970) से विवाह किया, जो बीहट (सीतापुर) के श्री नागेंद्र सिंह और (दइया) की राजकुमारी विमला देवी की पुत्री हैं और उनका एक पुत्र है।

कुंवर आर्यमन पाल महसों इनका जन्म 20 नवंबर 2000 को हुआ ये स्टडी हॉल (लखनऊ) से शिक्षा प्राप्त किए और भारतीय पर्यटन एवं यात्रा प्रबंधन संस्थान (ग्वालियर) से यात्रा एवं पर्यटन में बीबीए की पढ़ाई कर रहे हैं। कुंवर आर्यमन पाल का इतिहास को लेकर काफी लगाव है व अपने इतिहास को संरक्षित और उसकी देखभाल के लिए प्रयासरत हैं इनका कार्तिकेपुर कत्यूरी सूर्यवंशी राजवंश के इतिहास को संरक्षित करने में विशेष योगदान रहा है स्वभाव से सूर्य सा तेज व शूरवीर हैं।

राजा कैलाश नाथ पाल, महसों के 23वें राजा [दिसंबर 1988], इनका जन्म 19 मार्च 1938 को हुआ था ये रॉयल इंडियन मिलिट्री कॉलेज, देहरादून, राष्ट्रीय रक्षा अकादमी और भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, खड़गपुर (बी.टेक.) से शिक्षा प्राप्त की और जुलाई 1963 में लखनऊ में रानी दुर्गा कुमारी पाल से विवाह किया, जिनका जन्म 1945 में हुआ, जो टेकारी के राजा हिमांशुधर सिंह की बेटी थीं।

वर्तमान में महसों के राजा अमिताभ पाल है ये अमेरिका में रहते है।

महसों राजमहल।

महसों के अंतिम तिलकधारी राजा काशीनाथ बहादुर पाल

महसों के युवराज कुंवर आर्यमान पाल

राजा कैलाश नाथ बहादुर पाल व रानी शैलेश्वरी कुमारी जी।

दार्चुला।

दार्चुला जो सूर्यवंशियों द्वारा शासित राज्य था। दार्चुला में उक्कू महल का ऐतिहासिक और पुरातात्विक महत्व सूर्यवंशीयो की गौरव गाथा का बखान करता है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर लिखे गए ऐतिहासिक दस्तावेजों से भी यह सिद्ध हो चुका है कि दार्चुला स्थित उकू पैलेस जो सूर्यवंशी राजा भारती पाल द्वारा बनवाया गया था, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय पटल पर कालापानी जितना ही चर्चा का विषय है। यद्यपि विभिन्न इतिहासकारों और सांस्कृतिक विशेषज्ञों ने उकू पैलेस के संबंध में कुछ मुद्दे उठाए हैं, लेकिन यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि स्थानीय सरकार और अन्य निकायों ने इस ओर ध्यान नहीं दिया है। जबकि कालापानी चुनाव के दौरान एक राजनीतिक एजेंडे के रूप में बड़ी बहस का विषय बन गया था, उकू महल के चुनावी एजेंडा बनने का कोई सवाल ही नहीं था। दार्चुला जिले के मलिकार्जुन ग्रामीण नगर पालिका के वार्ड संख्या 6, उकू के शीर्ष पर स्थित पुरातात्विक, प्राचीन और ऐतिहासिक महत्व के उकू महल के खंडहर संरक्षण और पुनर्निर्माण की प्रतीक्षा कर रहे हैं। हालाँकि, आज तक किसी भी शोधकर्ता, इतिहासकार, सांस्कृतिक विशेषज्ञ, राजनेता या यहाँ तक कि राज्य ने भी इस महल की सुरक्षा, जीर्णोद्धार या पुनर्निर्माण के लिए कोई पहल नहीं की है। उकू पैलेस के बारे में लिखते समय, उकू गांव के एक छोटे से परिदृश्य को चित्रित करना भी प्रासंगिक लगा। मलिकार्जुन ग्रामीण नगर पालिका अंतर्गत वार्ड क्रमांक 6 में महाकाली नदी के तट पर स्थित उपजाऊ मैदान बहुत ही सुंदर एवं मनोरम स्थान है। उकू गांव में कदम रखने वाला कोई भी व्यक्ति इस सुंदर, शांतिपूर्ण और मनोरम स्थान से मोहित हुए बिना नहीं रह सकता। वर्ष 1279 (संवत 1336) का उल्लेख "कुमाऊँ का इतिहास" (बद्री दत्त पांडे) पुस्तक में मिलता है जब अभयपाल ने डोटी में राज्य की स्थापना की थी। अभयपाल के डोटी साम्राज्य की स्थापना और उसे मजबूत करने के बाद, उन्होंने अजयमेरु महल का निर्माण किया और राज्य का विस्तार उकु तक किया, उकु महल का निर्माण किया और आठ खस राजाओं को हराने के बाद ही अस्कोटा राज्य की स्थापना की। इस प्रकार, उकू महल के निर्माण का इतिहास स्कॉटिश विजय के समय से पहले का है। यह महत्वपूर्ण महल, जो मध्ययुगीन सूर्यवंशी राजाओं के राज्य का हिस्सा था, किसी कारणवश ढह गया और खंडहर में बदल गया। सुदूर पश्चिमी प्रांत की ऐतिहासिक एवं पुरातात्विक प्राचीन धरोहरों में से एक इस महल का यदि अध्ययन, अन्वेषण, शोध एवं

उत्खनन किया जा सके तो यह न केवल दार्चुला बल्कि राष्ट्र के लिए भी ऐतिहासिक उपलब्धि बनने के साथ-साथ घरेलू एवं अंतर्राष्ट्रीय पर्यटकों के लिए पर्यटन स्थल बनने की अपार संभावनाएं रखता है। अधिक ईमानदारी से कहा जाए तो, जो कोई भी इस महल के संपर्क में आएगा, जिसे केवल अध्ययन, अनुसंधान, अन्वेषण और उत्खनन के माध्यम से ऐतिहासिक और पुरातात्विक धरोहर के रूप में वर्णित किया गया है, वह इसे ऐसा कहने में संकोच करेगा। इस ऐतिहासिक एवं पुरातात्विक महल को संरक्षित एवं संरक्षित किया जा सकेगा तभी दार्चुला जिला इसे ऐतिहासिक एवं पुरातात्विक धरोहर कहलाने में गौरव महसूस कर सकेगा। उकू क्षेत्र में बड़ी संख्या में कलात्मक चट्टानें बिखरी हुई हैं। विभिन्न चट्टानों पर देवी-देवताओं की मूर्तियां, आमलक, शिखर गजुर के आधे भाग, पत्थर की धाराएं, सांप, बसा, शेर और चक्रशिला सहित विभिन्न अन्य आकृतियां स्पष्ट रूप से उकेरी गई देखी जा सकती हैं। उन्होंने अनुरोध किया कि इस लेख के साथ चट्टानों और उकू गांव की तस्वीरें भी संलग्न की जाएं। उकू में उकू पैलेस के खंडहर प्रचार और शोध के अभाव में गुमनामी में खो गए हैं, और उकू पैलेस का अस्तित्व ही लुप्त होने के कगार पर है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि उकू महल खतरे में है और अध्ययन व अन्वेषण के अभाव के कारण संरक्षण की प्रतीक्षा कर रहा है, क्योंकि यह एक पुराने महल का खंडहर है। ऐसा कहा जाता है कि इसका निर्माण मध्ययुगीन कत्यूरी राजाओं की राजधानी के रूप में किया गया था। 12वीं शताब्दी में कत्यूरी सूर्यवंशी राजवंश के अंत के बाद पाल सूर्यवंशी राजा अस्कोट, अजयमेरुकोट, दीपालयाकोट आदि क्षेत्रों में बस गए। उकू पैलेस के खंडहरों में विभिन्न शिलालेखों वाली चट्टानें हैं। इतिहासकारों का कहना है कि इस क्षेत्र में महल बनवाने वाले पहले राजा भारती पाल थे। इतिहासकारों के अनुसार, उकू के खंडहरों में राजा नागपाल द्वारा निर्मित मंदिर का स्थान था, जहां उन्होंने मूर्तियां और शिलालेख एकत्र किए थे। आज इस क्षेत्र में पाई जाने वाली सूर्यनारायण की मूर्तियों और शिलालेखों को देखते हुए, ऐसा माना जाता है कि इन्हें महल के अंदर एक मंदिर बनाने के लिए एकत्र किया गया होगा। यह तथ्य कि यह एक ऐतिहासिक महत्व का स्थान है, महल के मजबूत किलों, मंदिरों, प्रासादों, पत्थरों में उकेरी गई विभिन्न देवताओं की मूर्तियों और वहां पाए गए विभिन्न आकृतियों के पत्थरों से स्पष्ट होता है जो सूर्यवंशी की अमिट कीर्ति में चार चांद लगाता है।

महसों राज्य की शाखाएं।

हरिहरपुर स्टेट।

तप्पा औरदौड़ का एक गांव, कटनेहिया के बाएं किनारे पर 26° 40′ उत्तर और 83° 1' पूर्व में, महुली से लगभग तीन मील उत्तर और बस्ती से लगभग 21 मील दक्षिण-पूर्व में स्थित है। यह जगह काफी बड़ी है, और इसमें कुछ अच्छे चिनाई वाले घर हैं; पहले यह कुछ व्यापारिक महत्व का प्रतीत होता था, लेकिन हरिहरपुर परगना के अधिकांश शहरों की तरह इसका व्यापार भी कम हो गया है। जनसंख्या, जो 1872 में 2,194 थी, पिछली जनगणना में 234 मुसलमानों सहित 2,937 हो गई थी। (बस्ती गजेटियर) पश्चिम में हरिहरपुर से सटा हुआ, और इसके साथ व्यावहारिक रूप से एक ही स्थान बनाने वाला, सवापार है, जिसमें 1,074 निवासी थे। गांव में एक समृद्ध माध्यमिक स्थानीय भाषा स्कूल, एक डाकघर और एक बाजार है जिसमें सप्ताह में दो बार बाजार लगता है; सवापार में एक माध्यमिक बालिका विद्यालय है। हरिहरपुर के मैदान 434 एकड़ में फैले हैं, लेकिन केवल 250 एकड़ पर ही खेती की जाती है, आस-पास का इलाका कमज़ोर है और बारिश के दौरान जलमग्न हो जाता है; राजस्व 507 रुपये है। अगहन में धनुषजग उत्सव के अवसर पर यहाँ एक बड़ा मेला लगता है, और कुआर में रामलीला के दौरान एक

छोटा सा जमावड़ा लगता है। यह गाँव कार्तिकेपुर सूरजबांसियों के परिवार का है, जो महसों या महुली के एक भूतपूर्व राजा के छोटे बेटे से एक शाखा के रूप में यहां आई थी । हरिहरपुर घराने के सबसे बड़े प्रतिनिधि बाबू कालका बख्श पाल हैं, जिनके पास इस जिले में 2,163 एकड़ ज़मीन है। अलख देव के सातवें वंश के राजा मान पाल के तीन पुत्र थे जिनमें सबसे बड़े परसराम पाल ने महुली प्राप्त की; बेटे जगत बली पाल ने जसवाल रियासत की स्थापना की; और तीसरे संसार पाल ने सिकटार की स्थापना की। दो पीढ़ियों के बाद, राजा मर्दन पाल के छोटे भाई करण पाल ने 11,673 रुपये का राजस्व देकर बड़ी संपत्ति प्राप्त की, जिसे आज भी हरिहरपुर के रूप में जाना जाता है, जिसमें 40 गांव शामिल हैं। राजा मर्दन पाल के बाद उनके बेटे पृथ्वी पाल ने शासन किया, जिनके छोटे बेटे दुर्जन पाल ने सिलेहरा रियासत की स्थापना की, इसी तरह राजा मणि पाल के दूसरे बेटे जोरावर पाल ने बानपुर प्राप्त किया, जिसमें अब हस्तांतरण के समय, महुली का स्वामित्व राजा बख्तावर पाल के पास था, जिन्हें राजा शर्मशेर बहादुर पाल ने और फिर उनके बेटे राजा मर्दन पाल ने उत्तराधिकारी बनाया। इसके बाद राजा भवानी गुलाम पाल आए, जिनकी मृत्यु 1892 में हुई और उनकी पहली पत्नी से दो बेटे हुए, जिनमें से बड़े बेटे राजा नरेंद्र बहादुर पाल थे और छोटे लाल रघुरेंद्र बहादुर पाल की बिना संतान के मृत्यु हो गई; और उनकी दूसरी पत्नी मंगल प्रसाद पाल से एक बेटा था, जो 8,276 रुपए के स्वामित्व वाले 20 गांवों की बुड़वल संपत्ति के मालिक थे। संपत्ति के निरंतर विभाजन के कारण, राजा के पास जो हिस्सा है वह अब पैतृक क्षेत्रों का एक अंश मात्र है; इसमें वर्तमान में इस जिले के 65 गांव शामिल हैं जो 20,135 रुपए का राजस्व देते हैं यह समग्र क्षेत्र युवा भाइयों के प्रतिनिधियों के स्वामित्व वाले क्षेत्र से बहुत कम है, जिनमें से अधिकांश एक दूसरे के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध रखते हैं।

एक समय हरिहरपुर स्टेट के राजा तहसील खलीलाबाद (जिला बस्ती) में एक बड़े राजा अपने दिवंगत पिता की इच्छा के अनुसार एक मंदिर का निर्माण करवा रहे थे। बाबू ज्ञानपाल देव जो हरिहरपुर के राजा थे उस समय गांधीजी के खिलाफ थे उस समय महात्मा गांधी गोरखपुर आए हुए थे। उस समय हरिहरपुर के राजा गांधी जी और उनकी नीतियों से संतुष्ट नहीं थे जो क्षत्रिय व समाज विरोधी थी उन्होंने अपनी प्रजा को धमकी दी थी कि अगर किसी ने गांधीजी की बात भी की या उनका अनुयायी बन गया, तो उस पर पांच रुपये का जुर्माना लगाया जाएगा। 4 अप्रैल को रात 11.30 बजे चार भुजाओं

वाली एक विशालकाय आकृति दिखाई दी और एक बड़ी सभा के सामने ऊंचे स्वर में घोषणा की, 'मैं शिव का अनुयायी हूं। आप सभी को उनकी पूजा करनी चाहिए। बाबू साहब अपनी गलत नीतियों को छोड़ दें (अनिति को छोड़ दें) सत्य बोलें। धर्म का पालन करें, अधर्म का त्याग करें।' इसके बाद उसने छोटा रूप धारण कर लिया और गायब हो गया। 'यह एक तथ्यात्मक और प्रत्यक्षदर्शी विवरण है। उस क्रम में हरिहरपुर में भगवान शिव का शिवलिंग स्थापित कर मंदिर का निर्माण किया गया।।

बेल्डूहा हरिहर पुर में राजा शोहरत सिंह –कलहंस प्रतिहार राजा (जिनके नाम से शोहरत गढ़ पड़ा) की बहन राज माता सफराज कुवरी उनके पति हरिहर प्रसाद पाल के इच्छा के अनुरूप कुल देवता भगवान शिव का मंदिर बेल्डूहा में उनके जुगल पुत्रों ज्ञान पाल देव और चन्द्रिका प्रसाद पाल देव के द्वारा 110 वर्ष पूर्व बनावया गया था।

कानन पाल उसके बाद कन्हैया बख्श पाल, जगत बहादुर पाल, हरिहर प्रसाद पाल के बेटे ज्ञान पाल देव और चंद्रिका बॉक्स पाल वर्तमान में राजेंद्र बहादुर पाल राजा हैं। हरिहर पुर एक स्वतंत्र राज्य के रूप में था इसपर महासों या महुली का नियंत्रण नहीं था बाद में 12 कोट मे विभाजीत हुआ, हरिहरपुर स्टेट से सबसे वरिष्ठ परिवार के सदस्य कोअध्यक्ष बनाया जाता था व प्रसासन कमेटी के आधार पर चलता था। हरिहर पाल के 5 भाई थे सबसे बड़े दान बहादुर पाल जिनका विवाह प्रताप गढ़ राज्य में हुआ था इन्हें दहेज में सागर सुंदर पुर रियासत मिला जिसके वे राजा रहे उनका कोई पुत्र नहीं थे उसके उनके भाई के पुत्र महादेव पाल रहे उसके बाद उनके उनके पौत्र पाटेश्वरी पाल जो राजेन्द्र बहादुर पाल के चेहरे बड़े भाई थे वो 1953 तक हरिहरपुर के राजा रहे। वर्तमान में हरिहरपुर स्टेट के वंशधर अखिलेश बहादुर पाल जी इस विरासत को आगे बढ़ा रहे है व कार्तिकेपुर सूर्यवंशी राजवंश के इतिहास के प्रति बहुत अच्छा कार्य व समाज में जागरूकता फैला रहे है। कार्तिकेपुर सूर्यवंशी राजवंश के इतिहास के संरक्षण व देखभाल में इनका अमूल्य योगदान है।

हरिहरपुर स्टेट में निर्मित शिव जी का मंदिर।

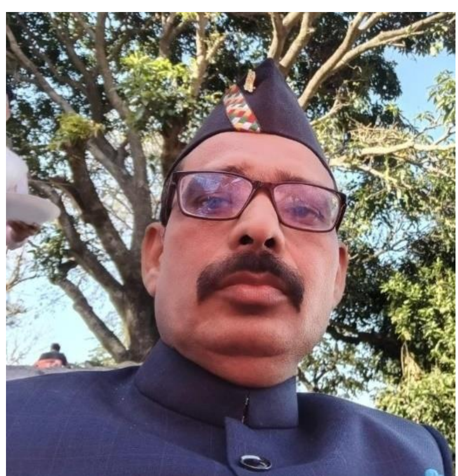

हरिहरपुर स्टेट कुंवर श्री अखिलेश बहादुर पाल।

हरिहरपुर स्टेट कुंवर अखिलेश बहादुर पाल व महसों राजा साहब अंशुमान पाल।

बानपुर स्टेट।

महसों-

महुली का सूर्यवंशी राज्य 14 कोस (47 किलोमीटर) लंबाई में फैला था और इसमें कई सौ गांव शामिल थे। महसों के 13वें राजा (राजा मणि पाल) के 2 पुत्र थे, राजा द्वीप पाल जो महसों के राजा बने रहे और राजा जोरावर पाल जिन्हें राजा बानपुर के रूप में राज्याभिषेक हुआ।

गाँव: 70 (1895 में राय कन्हैया बख्श पाल बहादुर के अधीन थे।

राजस्व: 17509 रुपये (1895 में राय कन्हैया बख्श पाल बहादुर के अधीन थे।

स्थान: उत्तर प्रदेश (बस्ती जिला उत्तरप्रदेश)

बाबू जोरावर पाल, बाणपुर के प्रथम राजा 1710 हुए।

संग्राम पाल

बानपुर के दूसरे राजा, बाबू संग्राम पाल हुए उनके बाद

बसंत पाल बानपुर के तीसरे राजा हुए। उनके बाद शिवभक्त पाल बानपुर के चौथे राजा हुए,बानपुर के 5वें राजा बाबू जालिम पाल हुए, जानकी प्रसाद पाल

हरगोविंद प्रसाद पाल का विवाह तिलोई (रायबरेली जिले में) की राजकुमारी से हुआ।

बाबू जानकी प्रसाद पाल, बाणपुर के छठे राजा हुए।

बाबू जोखन प्रसाद पाल

बाबू माधव प्रसाद पाल

बाबू जोखन प्रसाद पाल, बानपुर के 7वें राजा, ने चंदपुर एस्टेट (रायबरेली जिले में) की राजकुमारी से शादी की थी।

राय कन्हैया बख्श पाल बहादुर, बानपुर के 8वें राजा हुए इनका जन्म 1869 हुआ इनका विवाह सोहरतगढ़ (सिद्धार्थनगर जिले में) के राय बहादुर सोहरत सिंह की बेटी से शादी की थी। उनकी मृत्यु 1914 में हुई

लाल गिरजेश बहादुर पाल, बानपुर के 9वें राजा (1914 – 1962), जन्म 1898, ने क्रमशः गंगापुर (सुलतानपुर जिला) की राजकुमारी, चौखरा (डोमरियागंज, सिद्धार्थनगर जिला के पास) की राजकुमारी और बरही एस्टेट (गोरखपुर जिला) की राजकुमारी से तीन बार शादी की उनके पहली शादी से 1 बेटा (उमेश पाल) और 1 बेटी (कुमारी इंद्रा देवी का विवाह सज्जनपुर, सतना जिला, मध्य प्रदेश में हुआ), दूसरी शादी से 2 बेटे (रमेश पाल और दिनेश पाल) और तीसरी शादी से 2 बेटे (गग्गा साहब और सुरेश पाल) और 6 बेटियाँ (दाबिलगढ़ – बिहार; केशट – आरा जिला; सुपौली – सीतापुर जिला; गढ़ैया – मुजफ्फरपुर जिला; कटहा – रीवा मध्य प्रदेश; जामू एस्टेट – सुल्तानपुर जिला में क्रमशः विवाहित)। उनके बाद एस्टेटशिप की राजगद्दी समाप्त कर दी गई और पूरे वंशज ने एस्टेट को बांट लिया और अपनी आजीविका चलानी शुरू कर दी। 28 मई, 1962 को उनकी मृत्यु हो गई। बानपुर के सूर्यवंशी राजा बड़े ही धर्मवीर और प्रजा पालक व

क्षत्रिय धर्म पालन करने वाले थे बानपुर कोर्ट में राजदरबार लगता था जहां सैकडो किलोमीटर दूर से लोग न्याय के लिए और अपने तकलीफों को लेकर आते थे व यहां के राजा धर्मपूर्वक उनका न्याय और सहायता करते थे।

राजमहल बानपुर राजा कन्हैयाबख्श बहादुर पाल का कोर्ट यहां उनका दरबार लगता था व १०० किमी से लोग इनके पास न्याय के लिए आते थे।

अहरा स्टेट।

अहराके लाल शत्रुजीत बहादुर पाल ने अहरा राज की स्थापना करी तथा राजा नरेंद्र बहादुर पाल महसों के 20वें राजा बने जिनका शासन 1892 से 1924 ईश्वी तक रहा व इनका जन्म 1865 में हुआ था इनकी पहली शादी गंगवाल के राजा की बेटी से व दूसरी शादी मझगवां के राजा की बेटी से हुई इनकी मृत्यु 1924 में हुई। इनके पुत्र राजा विजयप्रताप नारायण बहादुर पाल, को लाल उदयप्रताप नारायण बहादुर पाल, लाल भानुप्रताप नारायण बहादुर पाल ने तीन विवाह किया और उनके पांच बेटियां और एक बेटे थे।

अहरा राजमहल

शस्त्र पूजन

अहरा राजपरिवार।

बुढ़वल स्टेट।

बस्ती एक

ऐसा क्षेत्र है जिसने सूर्यवंशियों (13वीं शताब्दी) से लेकर नवाबों के शासनकाल और फिर ब्रिटिश राज (19वीं शताब्दी) तक कई शासकों को देखा है। रानी सरताज कुंवारी के पोते राजा चंद्रमौली बहादुर पाल के नेतृत्व में बस्ती शाही वैभव का प्रतीक बन गया। वह एक उत्साही पर्माकल्चरिस्ट थे और भूमि के प्रति उनका प्रेम हरियाली के विभिन्न रंगों के माध्यम से परिलक्षित होता है जो आज भी परिदृश्य को सुशोभित करते हैं। यह सब महसों के राजा भवानी गुलहम पाल की संपत्ति के उनके बेटों के बीच विभाजन से शुरू होता है, जो 1911 में रानी सरताज कुंवारी, उनकी प्रिय सह-पत्नी द्वारा महसों राज्य की स्थापना के साथ समाप्त हुआ, जो रानी सरताज कुंवारी के पोते राजा चंद्रमौली बहादुर पाल के नेतृत्व में महसों राज्य के शाही वैभव का प्रतीक बन गया। यह संग्रह बुढ़वाल कोर्ट (महल) को आकार देने वाली मजबूत महिलाओं, विशेष रूप से कुंवारी लक्ष्मी सिंह को विनम्र श्रद्धांजलि देता है, जिन्होंने रानी सरताज कुंवारी की विरासत को आगे बढ़ाया। वर्तमान में बुड़वाल एस्टेट के अधीन क्षत्रिय सताशी राज कुंवरानी लक्ष्मी सिंह के पुत्र कुंवर शैलेंद्र सिंह (श्रीनेत) और उनकी पत्नी कुंवरानी पूजा सिंह बुड़वाल एस्टेट की विरासत को गर्व से संभाले हुए हैं।

बुढ़वल महल।

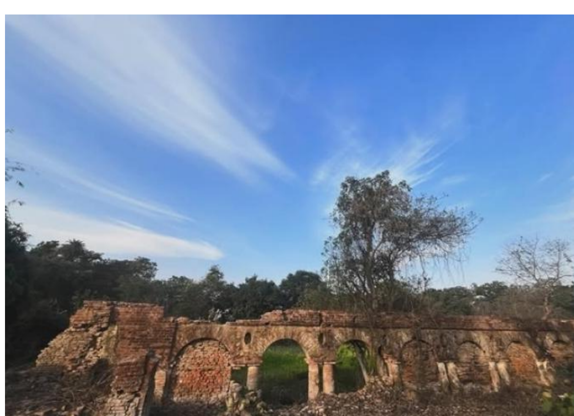

बुढ़वल महल के अवशेष।

अमोडा स्टेट।

अंग्रेजो द्वारा ध्वस्त अमोड़ा राजमहल।

अमोड़ाराज प्राचीन समय का कत्यूर सूर्यवंशीयो की स्टेट हुआ करती थी, जो कौशल देश का हिस्सा हुआ करता था. जिसकी सीमा वर्तमान में सरयू नदी अयोध्या जिले से मनवर नदी बस्ती जिले तक फैली थी। महान कार्तिकेपुर – कत्यूरी राजवंश का ह्रास होने पर ये कई टुकड़ों में विभक्त होगया, जिसमें से एक शाखा अस्कोट हुई जिसकी स्थापना कार्तिकेपुर सूर्यवंशी राजवंश के सम्राट अभय पाल देव ने की थी उनके तीन पुत्रों में से एक पुत्र थे तिलक देव जो 13 वी शताब्दी में अस्कोट से एक विशाल सेना लेकर अवध

क्षेत्र के बस्ती / गोरखपुर की ओर आए व यहां के खूंखार भील आदिवासियों भरो व कायस्थ जमींदारों को हराया जो मंदिरों व लोगों की लुट पाट कर उन्हें मार देते थे। 13 वी शताब्दी में स्थापित अमोड़ा राज का जिक्र बस्ती गजेटियर आदि में भी देखने को मिलता है। अमोड़ा राज के प्रथम राजा सूर्यवंशी सम्राट अभय पाल देव के तीसरे पुत्र तिलक देव हुए जो बहुत धर्मात्मा व वीर थे, उनके बाद उनके पुत्र कान्ह देव थे, जिन्होंने उस इलाके के कायस्थ ज़मींदारों को बाहर निकालने का बीड़ा उठाया। इसमें वे आंशिक रूप से ही सफल रहे, लेकिन उनके बेटे कंस नारायण ने कायस्थ राजा से परगना का आधा हिस्सा हासिल कर लिया, जबकि उनके उत्तराधिकारियों ने विजय पूरी की। राजा कंस नारायण सिंह अमोड़ा के राजा बनने के बाद अमोड़ा ने अपनी सीमाएं और बढ़ाई। वैसे तो अमोढा राज्य में कई राजा हुए, लेकिन 1732 में जब राजा जालिम सिंह ने राज्य संभाला तो उन्होंने अमोड़ा में काफी विकास किया, क्षेत्र की सीमाएं बढ़ाए, सैन्य शक्ति व सैनिकों में भी बृद्धि की और व्यापार में भी काफी तेजी लाए. इसलिए उनके शासन काल को अमोड़ाराज्य के स्वर्णिम काल के रूप में भी गिना जाता है, क्योंकि उस समय में अमोड़ाराज्य ने जो समृद्धि हासिल की वैसा कभी नहीं हुआ था और न ही बाद में भी हो सका उन्होंने अपने राज्य को मुगलों और अंग्रेजोंसे बचाने के लिए कई युद्ध भी लड़े और विजयी भी हुए। राजा जालिम सिंह का महल अवशेष आज भी अमोढा में स्थित है और उन पर अंग्रेजों द्वारा तोपो से किए गए हमले का निशान भी विद्यमान है। राजा जालिम सिंह को गौरिल्ला युद्ध और छापेमार युद्ध में महारथ हासिल थी. यही कारण रहा की उन्होंने कई बार मुगलों और अंग्रेजों को धूल चटाई और राजा जालिम सिंह को भेष बदलने में भी महारथ हासिल थी वो सामने से ही पलक झपकते ही भेष बदलकर गायब हो जाते थे। राजा जालिम सिंह जब मुगलों से लड़ रहे थे तब उन्होंने अपने सेना में लगभग 4 हजार पठान सैनिकों को शामिल किया था.- क्षत्रिय सैनिक और पठान सैनिक मिलकर मुगलों और अंग्रेजों से मुकाबला किया करते थे, किले के अन्दर ही व्यायामशाला, सैन्य प्रशिक्षण, शस्त्रादि चलाने व घुड़सवारी हेतु आवश्यक प्रबन्ध किया गया था. जहां सभी सैनिकों को सैन्य शक्ति में निपूर्ण किया जाता था।

व्यापार कौशल में भी महारथी थे जालिम सिंह तब के समय में ही राजा जालिम सिंह अपने प्रजा को व्यावसायिक खेती के लिए प्रोत्साहित किया करते थे .खेती के अवकाश के दौरान बढ़ई, धोबी, मोची, लुहार, नाई, सुनार, कुम्हार, धुनिया, बुनकर, जुलाहा व

वैद्य आदि सभी लोग कुटीर उद्योग में रमे रहते थे और इनके द्वारा बनाए गए उत्कृष्ट उत्पाद की बाजार में डिमांड भी अधिक थी। राजा जालिम सिंह खुद इन सब उत्पादों के क्रय के लिए बाजार उपलब्ध कराते थे। जिससे राज्य के सभी प्रजा धन धान्य से परिपूर्ण थे और सभी राजा को भगवान की तरह पूजते भी थे. अमोढा में स्थित किला व वहां से 3 किमी की दूरी पर स्थित पखेरवा का शानदार राजमहल जिसमें अमोढा किले से पखेरवा महल तक चार किमी की लम्बी सुरंग भी राजा जालिम सिंह ने अपने ही कार्यकाल में बनवाया था। जालिम सिंह का जन्म 1723 में अमोढ़ा गांव में हुआ था, जो उत्तर प्रदेश के बस्ती जिले में स्थित है। वह कार्तिकेय पुर सूर्यवंशी राजपूत वंश से थे, जो भारत के सबसे शक्तिशाली राजपूत वंशों में से एक है। जालिम सिंह के पिता, राजा छत्र सिंह, अमोड़ा के शासक थे। राजा जालिम सिंह ने अवध के नवाब के साथ मिलकर भारत के स्वतंत्रता संग्राम के लिए ब्रिटिश साम्राज्यवादियों के खिलाफ लड़ाई लड़ी थी। 13 अगस्त 1857 को, ब्रिटिश साम्राज्यवादियों को एहसास हुआ कि राजा के उग्र प्रतिरोध के कारण अमोढ़ा में अपना शासन स्थापित करना बहुत मुश्किल था। इसने 2 मार्च 1858 को अंग्रेज अधिकारी कर्नल रॉबर्ट क्राफ्ट को इस क्षेत्र से पीछे हटने पर मजबूर कर दिया। अमोढ़ा की अंतिम रानी और राजा जालिम सिंह की पत्नी रानी तलाश कंवर ने अंग्रेजों के खिलाफ हथियार उठाए और खूनी युद्ध में मारी गईं। राजा जालिम सिंह एक बहादुर भारतीय स्वतंत्रता सेनानी थे। उन्होंने अपने क्षेत्र में सभी ब्रिटिश आक्रमणों को विफल कर दिया। उन्होंने लंबे समय तक अंग्रेजों के खिलाफ अपने क्षेत्र की अत्यंत वीरता के साथ रक्षा की, जब तक कि एक दिन उन्हें ब्रिटिश सेना ने घेर नहीं लिया। वह एक गुप्त सुरंग के माध्यम से भागने में सफल रहे और अंग्रेजों के खिलाफ गुरिल्ला युद्ध लड़ते रहे। राजा जालिम सिंह के वंशज अभी भी अमोढ़ा और उत्तर प्रदेश के अन्य हिस्सों में रह रहे हैं। उन्हें अपने पूर्वजों की बहादुरी और देशभक्ति पर गर्व है। जालिम सिंह ने छोटी उम्र से ही सैन्य शिक्षा प्राप्त की। वह एक कुशल घुड़सवार और तलवारबाज थे। वह तीरंदाजी और निशानेबाजी में भी माहिर थे। जालिम सिंह ने अमोरा सेना में तेजी से तरक्की की। वह छोटी उम्र में ही सेनापति बन गए। बस्ती में अमोरा सूर्यवंश राज्य के संस्थापक राजा छत्र सिंह थे। वह राजा जालिम सिंह के पिता थे, जो भारतीय इतिहास के सबसे शक्तिशाली राजपूत शासकों में से एक थे। छत्र सिंह का जन्म 1685 में अमोरा गाँव में हुआ था, जो अब उत्तर प्रदेश के बस्ती जिले में स्थित है। वह सूर्यवंशी राजपूत वंश से

थे, जो भारत के सबसे शक्तिशाली राजपूत वंशों में से एक है। छत्र सिंह के पिता, राजा उदय प्रताप सिंह, अमोरा के शासक थे। छत्र सिंह ने छोटी उम्र से ही सैन्य शिक्षा प्राप्त की। वह एक कुशल घुड़सवार और तलवारबाज थे। वह तीरंदाजी और निशानेबाजी में भी माहिर थे। छत्र सिंह ने अमोरा सेना में तेजी से तरक्की की। वह कम उम्र में ही सेनापति बन गए। 1723 में छत्र सिंह अपने पिता के बाद अमोरा के शासक बने। उन्होंने 30 साल तक शासन किया और उनके समय में अमोरा भारत की सबसे शक्तिशाली रियासतों में से एक बन गया। छत्र सिंह एक बुद्धिमान और न्यायप्रिय शासक थे। वह एक कुशल कूटनीतिज्ञ भी थे और वह मुगल साम्राज्य और ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी के साथ अच्छे संबंध बनाए रखने में सक्षम थे। छत्र सिंह की मृत्यु 1753 में हुई। उनके बाद उनके बेटे राजा जालिम सिंह ने गद्दी संभाली। जालिम सिंह एक शक्तिशाली और महत्वाकांक्षी शासक थे और उन्होंने अमोरा के क्षेत्र का विस्तार किया। उन्होंने 1764 में बक्सर की लड़ाई में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, जिसके कारण मुगल साम्राज्य का पतन हुआ। कार्तिकेय पुर सूर्यवंशी राजवंश के वंशज राजा ज़ालिम सिंह की प्रजा आर्थिक,सम्पन्न थी।इस व्यवस्था के उपरान्त राज्य की प्रजा उन्हें मसीहा मानने लगी। राजा साहब अश्वारोहण और शस्त्र–संधान में काफी निपुण थे। उन्होंने एक विशाल सेना खड़ी की जिसका संचालन वह स्वयं करते थे। पड़ोसी राज्य भी राजा जालिम सिंह से बहुत प्रभावित थे।राजा साहब ने पड़ोसी राजाओं को अपने प्रभाव में लेकर उनसे मैत्रिपूर्ण सम्बन्ध स्थापित किया। गौतम वंशीय राजा नगर के यहाँ से मधुर वैवाहिक सम्बन्ध जोड़ा। तथा बस्ती कलहँसों के कुल से भी विवाहेत्तर सम्बन्ध कायम रखते हुए उन्हें अभय प्रदान किया।श्रीनेत्र राजपरिवार से अपना मधुर सम्बन्ध स्थापित किया तथा इस कुल में अपनी बहन का विवाह सम्पन्न कराया,और उन्हें जागीर भी प्रदान किया। महाराजा जालिम सिंह के सूझ-बुझ और सुव्यवस्थित शासन प्रणाली की वजह से अमोढ़ा राज्य उत्तरोत्तर प्रगति कर रहा था,इसी बीच सादत खान,जो अवध के दूसरे नवाब थे,और उनके शहज़ादे शुजाउद्दौला ने 1739-54 में अयोध्या को अपना सैन्य मुख्यालय बनाया,तथा फ़ैज़ाबाद में किले का निर्माण कराया इसी क़िले को अवध की राजधानी बनाई। ये वह दौर था जब अमोढ़ा अपनी बुलंदियों पर था। फ़ैज़ाबाद में सैन्य मुख्यालय और अवध की राजधानी हो जाने की वजह से अमोढ़ा विधर्मी संस्कृति से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सका,क्योंकि नवाब उधर से अपनी तहजीब और रंग ढंग भी लेते आए

थे।ये बात राजा जालिम सिंह को अंदर ही अंदर सालती रहती थी। उधर नवाब शिराजउद्दौला ने भी पड़ोसी राज्य होने की वजह से और अमोढ़ा राज्य की सम्पन्नता,तथा राजा साहब की वीरता से प्रभावित होकर उनसे मित्रता कायम कर लिया, मगर अफ़सोस,कि मुग़लों से बहुत सीमा तक दोस्ती का अर्थ यह था कि नवाब जैसे चाहें वैसे शासन चला सकें।

वास्तव में अमोढ़ा राज्य के स्वामी का स्थान शुजाउद्दौला लेता जा रहा था। यह बात राजा जालिम सिंह जैसा स्वाभिमानी राजा कदापि सहन नहीं कर सकता था।इसी बात को लेकर महाराज और नवाब के बीच कुछ मनमुटाव हो गया था। इसी बीच सन १७६१ में अहमद शाह अब्दाली और मराठों के बीच पानीपत के मैदान में घमासान युद्ध हुआ, इस युद्ध में नवाब शुजाऊद्दौला ने समस्त पड़ोसी हिंदू राजाओं के विचार से अलग जाकर अब्दाली का साथ दिया, नवाब तथा अब्दाली की संयुक्त सेना से मराठों की सेना को बुरी तरह पराजित हुई।इस ख़ुशी में फ़ैज़ाबाद गुलाबवाड़ी में नवाब द्वारा नृत्य-संगीत के रंगारंग प्रोग्राम का आयोजन किया गया,जिसमें उस क्षेत्र के तमाम रजवाड़े आमंत्रित थे,राजा जालिम सिंह जी उस आयोजन में विशिष्ट मेहमान के तौर पर आमंत्रित थे, प्रोग्राम के मध्य में कुछ बातें राजा जालिम सिंह को नागवार गुजरीं, जिससे नवाब और राजाजी के बीच कहासुनी हो गई, नवाब ने अपने सैनिको से महाराज को बन्दी बनाने का आदेश दे दिया,मुग़ल सैनिक राजासाहब को गिरफ़्तार करने आगे बढ़े,तब तक बहुत देर हो चुकी थी, बिजली की चमक बिखेरती राजा जालिम सिंह की तलवार म्यान से बाहर निकल चुकी थी।उनकी तलवार के बेग के सामने नवाब का कोई सैनिक टिक नहीं सका,सभी मुग़ल सैनिकों को छठी का दूध याद दिलाते हुए राजा जालिम सिंह नवाब की घेराबंदी को तिनके की तरह बिखेर कर,घोड़े के साथ सरयू नदी के तट पर पहुँचे।उस समय दोनो पाटों पर बहती नदी को रात्रि में तैर कर पार किया।इस घटना के बाद से पैदा हुआ मन मुटाव सन १७६४ के बक्शर युद्ध में समाप्त हुआ,जब राजा जालिम सिंह के द्वारा अंग्रेजों के विरुद्ध सुजाउद्दौला का साथ दिया गया। दरअसल ईस्टइंडिया कंपनी के रूप में अंग्रेज़ों ने बहुत समय से अवध की दौलत पर आँखें गड़ा रखी थी।अंग्रेजों की दृष्ठि से सबसे अधिक दर्दनाक था शुजाउद्दौला द्वारा बंगाल पर आक्रमण,जिसके बाद उन्होंने कुछ समय तक कलकत्ता पर शासन भी किया था। लेकिन १७५७ में प्लासी तथा १७६४ में बक्सर की लड़ाई में अंग्रेज़ों की जीत के बाद नवाब पूरी तरह मटियामेट हो गए। युद्ध समाप्त होने

के बाद अवध ने अपनी काफ़ी ज़मीन खो दी थी।फिर भी सतही तौर पर ही सही,हमेशा के जानी दुश्मन नवाब शुजाऊद्दौला अंग्रेजों के दोस्त बन गए और ब्रिटिश संसद में,तथा संपूर्ण भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी के प्रमुख मित्र के तौर पर नवाब के तारीफ़ के पुल बाँधे गए।

बक्शर युद्ध के बाद नवाब थोड़ा थोड़ा करके अपनी आज़ादी खोते गए। पहले चुनार का किला और फिर बनारस और ग़ाज़ीपुर के जिले और फिर इलाहाबाद का किला अंग्रेजों को दे दिया।

9 सितम्बर 1772 में सआदत खान को अवध सूबे का राज्यपाल नियुक्त किया गया जिसमे गोरखपुर का फौजदारी भी था। इसके ठीक एक वर्ष बाद सन १७७३ में नवाब ने लखनऊ में ब्रिटिश रेज़िडेंट पद स्वीकार करने का आत्मघाती कदम उठाया,इसकी बदौलत विदेश नीति पर सारा नियंत्रण ईस्ट इंडिया कम्पनी का हो गया तथा अवध का वास्तविक शासक रेज़िडेंट ही हो गया।

कहते हैं राजा अमोढ़ा और काशी नरेश के बीच बहुत अच्छे सम्बन्ध थे।,तत्कालीन काशी नरेश राजा चेत सिंह और जनरल वारेन हेस्टिंग्स में ठन गयी।जनरल ने राजा पर अंधाधुंध टैक्स लाद दिया। दरअसल अमोढ़ा के साथ काशी भी सन् 1775 तक अवध राज्य के अधीन था लेकिन नवाब शुजाउद्दौला की मृत्य के बाद काशी नरेश तथा उनके साथ कई राजाओं ने स्वयं को अवध की सत्ता से अलग कर लिया। उन राजाओं में अमोढ़ा राजा जालिम सिंह भी थे। काशी नरेश चेतसिंह,अमोढ़ा नरेश राजा जालिम सिंह तथा अन्य कई राजाओं से वारेन हैसटिंग्स ने संधि कर इन सभी राज्यों को कंपनी के अधीनता में ले लिया।और इन राज्यों से कम्पनी ने स्वयं लगान लेना शुरू कर दिया।

सन् 1780 आते-आते हेस्टिंग्स ने काशी नरेश पर 50 लाख रुपए जुर्माना थोप दिया।इस जुर्माने को वसूलने जुलाई 1780 में वारेन हेस्टिंग्स बनारस आ धमका।वर्तमान काशी राज परिवार जो राजा चेत सिंह का मंत्री हुआ करता था,उसकी ग़द्दारी से अंग्रेजों ने चेतसिंह को बंदी बना लिया,और राजा चेत सिंह को काशी राज्य छोड़कर पलायन करना पड़ा। इस घटना और अपने मित्र राजा चेत सिंह के अपमान से तथा अंग्रेजों की बर्बरता से क्रोधित महाराजा जालिम सिंह ने अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह कर दिया,और स्वतंत्रता संग्राम में मजबूत संकल्प के साथ कूद पड़े।राजा साहब से श्रीनेत राजा सत्तासी,गौतम

राजा नगर और राजा बहराइच भी बहुत प्रभावित थे और अपने अपने राज्यों में उन्होंने भी अंग्रेजों को नाकों चने चबवाना शुरू कर दिया। अमोढ़ा राज्य के भीषण विरोध के बाद वारेंन हेस्टिंग्स के कान खड़े हो गए थे।वह अपनी सेना अमोढ़ा की तरफ़ कूच करने ही वाला था,मगर उस समय पश्चिम में मराठाओं से और दक्षिण में टीपू सुल्तान के साथ भीषण युद्ध में व्यस्त होने के कारण वह अपनी सेना अमोढ़ा की तरफ नहीं भेज सका। तभी ब्रिटिश संसद ने पिट्स इंडिया एक्ट पारित कर दिया ,जिसमें स्पष्ट कर दिया गया था कि भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी देशी रियासतों के प्रति अहस्तक्षेप का रास्ता अपनाए। यह 1784 का दौर था।इस क़ानून के बाद सन 1785 में वारेन हेस्टिंग्स ब्रिटेन वापस बुला लिया गया। इस मौक़े का लाभ उठाकर राजा जालिम सिंह ने अपना छापामार युद्ध जारी रखा,और समय समय पर घात लगाकर अंग्रेजों को छकाते रहे।उनके छापामार युद्ध से अंग्रेज अफ़सर और सिपाही इतना घबराए हुए थे,कि उन्होंने अमोढ़ा राज्य की तरफ़ देखना ही छोड़ दिया था। अंग्रेजों की विशाल सैन्य शक्ति के सामने उनकी सेना बहुत छोटी थी तथा संसाधन भी बहुत सीमित थे। इसकी परवाह किए बिना उन्होंने अमोढ़ा राज्य के प्रत्येक क्षत्रिय परिवारों के एक सदस्य को अपनी सेना में भर्ती होने का आह्वान किया और उन्हें युद्ध कला का अभ्यास कराया।उन्होंने अपनी सेना में पठानो को भी भर्ती किया और अपनी सेना की अग्रिम पंक्ति में जगह दिया,यह उनके व्यक्तित्व का ही कमाल था कि क्षत्रिय सैनिकों की तरह पठान सैनिक भी उनके लिए सदैव जान देने को तैयार रहते थे। १७८३ तक उन्होंने आसपास के क्षत्रिय और पठानो तथा सन्यासी आंदोलन के घुमक्कडो जिसमें मदारी और बरहना जाती के लोग थे अपने साथ मिलाकर 11000 सैनिकों की सेना तैयार कर ली थी। उनके रुतबे का जनसाधारण पर बड़ा असर था,अंग्रेज इसी लिए परेशान रहते थे।अंग्रेज़ों की विशाल सैन्य शक्ति के सामने उन्होंने गुरिल्ला युद्ध अपनाया।छिट-पुट संघर्ष में अंग्रेज कई बार परास्त हुए।इस तरह राजा जालिम सिंह १७८५ तक अंग्रेजो से लगातार लड़ते रहे। फिर वह मनहूस दौर भी आया,अमोढ़ा राज्य द्वारा मुग़लों की अधीनता अस्वीकार कर देने की वजह से मृतक नवाब शिराजुद्दौला का शहज़ादा आसिफुद्दौला राजा जालिम सिंह से खार खाए बैठा था।उसने मेजर क्राऊफ़ोर्ड को 15 जनवरी 1786 को एक पत्र लिखकर राजा अमोढ़ा,राजा सत्तासी,(गोरखपुर) राजा बहराइच को सबक़ सिखाने के लिए एक बड़े सैनिक रेजिमेंट को जल्द से जल्द अमोढ़ा भेजने की माँग की युद्ध के उपरांत जालम सिंह भूमिगत हो गए।

अमोडा 5 मार्च 1858, भारतीय विद्रोह 1857-58

नवाब सिराजुद्दौला फ ने मेजर क्रॉफर्ड को लिखा है कि जालिम सिंह और दूसरे जमींदार अमोदा, बहराइच और गोरखपुर में उत्पात मचा रहे हैं। इसलिए मेजर से अनुरोध है कि सूचना मिलते ही तुरंत कार्रवाई की जाए। लखनऊ और अमोरा भारतीय विद्रोह के दौरान राहत बलों के लिए दो रणनीतिक लक्ष्य बन गए। पर्ल से हॉवित्जर और तोपों के साथ समर्थित नाविकों और मरीन की एक नौसेना ब्रिगेड ने अमोरा पर चढ़ाई की। कार्वेट के कप्तान कैप्टन एस. सोथबी थे। अमोरा पर चढ़ाई में किलों का विनाश और विद्रोही बलों के साथ झड़पें शामिल थीं, 5 मार्च को, जब ब्रिटिश सेना लगभग 1,800 पुरुषों तक बढ़ गई, तो उन पर विद्रोहियों की सेना ने हमला किया, जिनकी संख्या शायद 14,000 थी। उस दिन एक भीषण युद्ध में विद्रोहियों को पेशेवर बंगाल यौमनरी, गोरखाओं और सैन्य पुलिस के हाथों भारी नुकसान उठाना पड़ा। विद्रोहियों को व्यापक रूप से पराजित किया गया और उन्हें भागना पड़ा। 5 मार्च 1858 को सूर्यवंशी क्षत्रियों का अमोड़ा का किला ध्वस्त कर दिया गया। अमोरा का सूर्यवंशी राज्य 1859 में समाप्त हो गया, जब इसे ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी ने अपने अधीन कर लिया। हालाँकि, छत्र सिंह के वंशज अभी भी उत्तर प्रदेश के बस्ती जिले में रहते हैं, और वे अपने सूर्यवंशी क्षत्रिय पूर्वजों के मूल्यों को कायम रखते हैं।

आगे अमोड़ा राज दो शाखाएं निकली जिसकी एक शाखा फैजाबाद व दूसरी शाखा बाराबंकी लखनऊ से सन्नीकट हरहा स्टेट की स्थापना करी।

हरहा राज।

इस घराने के पूर्वज कत्यूरी राजवंश के तिलक देव वंसज कान्ह देव के वंसज थे जो अमोढ़ा राज्य बस्ती से आकर विश्राम सिंह ने इस तालुके की स्थापना की राजा विश्राम सिंह, राजा असकरन सिंह, राजा करन राय सिंह, राजा जगत जी सिंह, राजा मलूक चंद, राजा पहाड़ सिंह, राजा लक्ष्मी नारायण सिंह पांच भाई थे गुलाल राय(रानी मऊ), हिम्मत राय (नैपुरवा) हरिवंश सिंह(करोजी), भीमसा(पुरन सराही), लोकशाह (मझेला), राजा नारायण सिंह राजा क्षत्रपाल सिंह राजा शिव सिंह, जय सिंह (मगरौदा अकबर पुर)राजा अजित सिंह राजा दाल जीत सिंह राजा महीपति सिंह साहि पाल सिंह तुली पुर गए राजा पृथिवी पाल सिंह, हिन्दू सिंह भवानी पुर राजा क्षत्रपति सिंह, राजा रघुराज बहादुर सिंह राजा ब्रजेन्द्र बहादुर सिंह राजीव कुमार सिंह आदि हुए।

बाराबंकी में सूर्यवंशी (सूरजबंसी) वंश का जिले में उच्च स्थान है। (अवध गजेटियर) इस वंश के मुखिया टिकैतनगर से 2 मील पश्चिम में दरियाबाद परगना के एक गांव हरहा स्टेट के राजा है। दरियाबाद में उनके पास 48 गांव, 15 महल और 5 पट्टियां और बाराबंकी में एक गांव और एक महल था और वह 64,530 रुपये का राजस्व देते थे। राजा की उपाधि 1877 में वंशानुगत घोषित की गई थी। राजा अयोध्या के श्री रामचंद्र के वंशज होने पर गर्व करते है वो उत्तराखंड के कार्तिकेपुर कत्यूरी राजवंश के वंशज थे जिन्हें अवध

भाषा में सूरजबंसी कहते हैं, शालीवाहनदेव जो सूर्यवंशी कार्तिकेपुर कत्यूरी राजवंश के मूलपुरुष थे, जिन्होंने चीन और तिब्बत से बर्बर लोगों के आक्रमण को रोकने के लिए और अपनी सीमाएं बढ़ाने के लिए अयोध्या छोड़ दिया था। कुमायूं क्षेत्र पर सूर्यवंशी राजवंश का शासन था सूर्यवंशी क्षत्रिय जो इक्ष्वाकु के वंशज थे जिन्हें स्थानीय रूप से कत्यूरी के नाम से जाना जाता था। जिसकी राजधानी कत्यूर घाटी में कार्तिकेयपुर में था। हालांकि कार्तिकेपुर राजवंश का नाम देवता कार्तिकेय के नाम से लिया गया है, जो कत्यूर घाटी (अल्मोड़ा जिले) में बैजनाथ के पास स्थित है। यह वही कार्तिपुरा था जो गुप्त सम्राट समुद्रगुप्त द्वारा लगभग 350 ई. में जीते गए राज्यों की सूची में आता है और कार्तिकेयपुर के सूर्यवंशी राजा को चंद्रगुप्त द्वितीय ने (लगभग 375 ई. में) मार डाला था ताकि अपने भाई की हार का बदला ले सके और अपनी भाभी को कैद से छुड़ा सके (जैसा कि राजशेखर की काव्यमीमांसा में उल्लेख किया गया है)। कमज़ोर शासकों के कारण बारहवीं शताब्दी में कत्यूरी साम्राज्य बिखर गया और इसकी शाखाएँ स्वतंत्र रियासतों में बदल गईं जैसे डोटी (नेपाल में काली के पार), सीरा (शेरा या शिरा), शोर और गंगोली। एक अन्य शाखा असकोट में बस गई, तीसरी बारहमंडल में, चौथी शाखा ने अभी भी कत्यूर और दानपुर पर कब्जा कर रखा था और पांचवीं ने पाली में कई स्टेट स्थापित कर ली थीं, जिनमें से प्रमुख द्वारहाट और लखनपुर और अस्कोट थे। स्थानीय परंपरा के अनुसार, बिश्राम सिंह के पूर्वज (1376-1408 ई.) अस्कोट से आए और 1376 में तैमूर की सरकार को उनसे बकाया राजस्व का भुगतान करके धुंधौलिया राजपूतों से फैजाबाद में जागीर हासिल की। उन्होंने पुरा मरना के डीलर दंदास साह की सेवा ली, जिसे अब जलालुद्दीन नगर के नाम से जाना जाता है और अंततः अपने मालिक की संपत्ति के उत्तराधिकारी बने। किसी भी मामले में, कार्तिकेयपूर सूर्यवंशीयो ने (सूरजबंसी) राजपूतों ने बस्ती जिले में अमोरा नामक जागीर के रूप में पैर जमाए। वहाँ से, 1378 में विश्राम सिंह आए, जो इस घराने के पूर्वज थे जिन्होंने दुनौलिया जाति से छीनी गई जमीनों से त'अल्लूगा की स्थापना की। उनकी मृत्यु के बाद। 1408 में, उनके उत्तराधिकारियों की एक पंक्ति ने उत्तराधिकारियों का पद संभाला जो क्रमशः राजा रघुराज मान (1408-44 ई.), राजा असकरन सिंह (1445-70 ई.), राजा करण राय (1471-1505 ई.), राजा जगतजी सिंह (1505-32 ई.), राजा मलूक चंद (1533-69 ई.), राजा पहाड़ सिंह (1570-1604 ई.) और राजा लक्ष्मी नारायण सिंह (1605-40 ई.) थे। बाद में राजा ने

अपने भाई गुलर साह को बेदखल कर दिया और उसे रानीमऊ की जागीर आवंटित कर दी। यह संपत्ति लक्ष्मी नारायण के वंशजों के हाथों में रही, जो राजा नारायण सिंह (1641-69 ई.), राजा छत्रपाल सिंह थे। (1670-1702 ई.), राजा शिव सिंह (1703-30 ई.), राजा अजीत सिंह (1731-66 ई.), राजा दलजीत सिंह (1767-1805 ई.), राजा महीपत सिंह (1806-1824 ई.), राजा पिरथी सिंह (1825-33 ई.) और राजा छत्रपाल सिंह (1833-59 ई.) राजा छत्रपत सिंह एक साधारण व्यक्ति थे, लेकिन उनकी रानी रतन कुँवर ने 1857 में अपने क्षेत्र में अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। उन्होंने अपने नायब ठाकुर राम सिंह की सहायता ली तथा बरकतहा के ठाकुरों, रानीमऊ के ता'अल्लूकदार, सिकरौरा के जमींदार अजब सिंह तथा कमियार के ता'अल्लूकदार शेर बहादुर सिंह से सहायता प्राप्त की। गोरा बाग का युद्ध ठाकुर राम सिंह ने लड़ा जिसमें वे पराजित हुए। इससे पहले उन्होंने घने जंगल में मांझा नामक स्थान पर घात लगाकर कई अंग्रेज सैनिकों को मार गिराया। सिकरौरा के ठाकुर अजब सिंह तथा उनके सहायक अल्लाह बख्श बरकतहा (कायमगंज) के पास ब्रिटिश सेना से लड़ते हुए मारे गए। पिता और पुत्र दोनों मानसिक रूप से अक्षम थे तथा संपत्ति लंबे समय तक कोर्ट ऑफ वार्ड्स के अधीन रही। हालांकि, बेटे नरेंद्र बहादुर सिंह (1859-97 ई.) को सरकार से सनद मिली। उनके बाद उनके बेटे राजा रघुराज बहादुर सिंह ने गद्दी संभाली। उनके दो बेटों राजा प्रताप बहादुर सिंह तथा कुंवर राजेंद्र बहादुर सिंह के बीच संपत्ति का बंटवारा हुआ। राजा प्रताप बहादुर सिंह के बाद, ता'अल्लुगा का उत्तराधिकार उनके बेटे बृजेंद्र बहादुर सिंह और पोते कुंवर राजीव कुमार सिंह और कुंवर संजीव कुमार सिंह को मिला। परिवार का निवास रानी कटरा में एक बढ़िया घर है, जो हरहा गाँव के पास है। राजीव कुमार सिंह का लखनऊ के नरही में भी निवास है। ता'अल्लुगा का दस आना हिस्सा कुंवर राजेंद्र बहादुर सिंह को मिला। जिनके बेटे राघवेंद्र बहादुर सिंह का विवाह नेपाल के राणा बालकृष्ण शमशेर जंग बहादुर की बेटी अरुणा कुमारी से हुआ था। उनके बेटे और उत्तराधिकारी कुंवर विजय बहादुर सिंह हैं, जिनका विवाह मध्य प्रदेश के जोबट राज के राणा भीम सिंह राठौर की बेटी शकुंतला देवी से हुआ है। उनकी तीन संतानें हैं, दो बेटियाँ शैलुका कुमारी और संगीता सिंह; पूर्व की शादी ठिकाना तारी, जिला रीवा के कुंवर धर्मेंद्र सिंह से हुई है; और एक बेटा कुंवर वीरभद्र सिंह का विवाह राजकुमारी मीनाक्षी सिंह से

हुआ है, जो बैंती, प्रतापगढ़ के राजा नरेंद्र सिंह की बेटी हैं। कुंवर विजय बहादुर सिंह अपने पुत्र कुंवर वीरभद्र सिंह के साथ हरहा हाउस, लालबाग, लखनऊ में रहते हैं।

राजा नरेन्द्र बहादुर सिंह की रियासत कालीन चित्र।

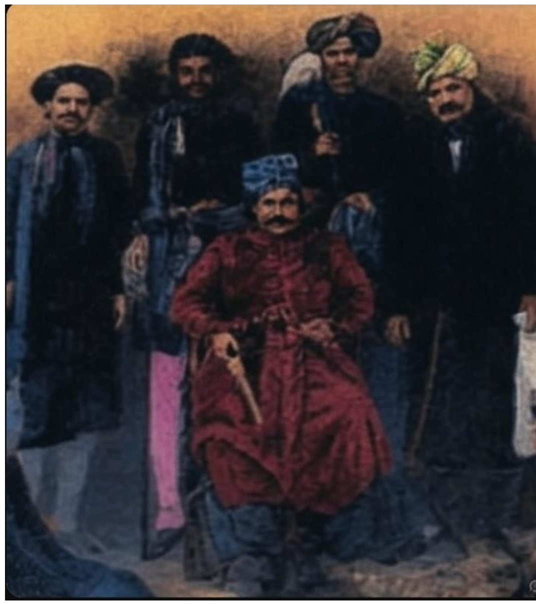

इसका बाद राजा ब्रजेन्द्र बहादुर सिंह राजीव कुमार सिंह हरहा स्टेट के राजा हुए। सूर्यवंशी राजघराने में शुमार 37 गांव के क्षत्रियों ने उत्तराधिकारी के रूप में कुंवर रितेश सिंह का राजतिलक किया। यह रस्म कुलदेवी की मंदिर में शाही गद्दी पर बैठा कर की गई।राजा राजीव के दादा राजा प्रताप बहादुर सिंह स्वतंत्रता संग्राम सेनानी थे। उन्होंने तमाम स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों की जमकर मदद भी मदद की। राजा राजीव कुमार सिंह के दादा राजा प्रताप बहादुर सिंह स्वतंत्रता सेनानी थे और जंगे आजादी उन्होंने तमाम स्वतंत्रता सेनानियों की ना सिर्फ मदद की बल्कि वह नेपाल से चोरी छुपे असलहे मंगवा कर सेनानियों को दिया करते थे। बताते हैं कि नेताजी सुभाष चंद्र बोस भी एक बार राजा प्रताप बहादुर के महल में गिरफ्तारी से बचने के लिए कुछ दिनों तक छुपे रहे। बाद में राजा प्रताप बहादुर सिंह ने नेताजी को सुरक्षा के साथ काफी धन दौलत देकर विदा किया था। 23 नवंबर 1938 को नेताजी सुभाष चंद्र बोस हड़हा आए थे। 24 नवंबर उन्होंने यहां हजारों लोगों को संबोधित किया था। डॉ राम मनोहर लोहिया और आचार्य नरेंद्र देव के

नेतृत्व में आयोजित देश के पहले पांच दिवसीय समाजवादी प्रशिक्षण शिविर में सैकड़ों लोगों ने हिस्सा लिया था। नेताजी ने यहां एक कृषि यंत्र निर्माण शाला यानि कि टेक्निकल स्कूल का उद्घाटन भी किया था। शिलान्यास के बाद नेताजी ने कहा था कि इस देश को तकनीकी और टेक्निकल शिक्षा की जरूरत है। वर्ष 1945 में जब सुभाष चंद्र बोस के निधन की झूठी खबर फैली तो राजा प्रताप बहादुर में उसी प्रशिक्षण संस्थान में सुभाष बाबू की एक प्रतिमा स्थापित कराई जो अब भी उपस्थित है। हड़हा स्टेट सूर्यवंशी राजघरानों में शुमार किया जाता है। परम्परा है कि ये राजा शोक नहीं मानते, इसलिए कुल देवी के मंदिर में शाही गद्दी पर बैठा कर परम्परा के तहत 37 गांव के सूर्यवंशी क्षत्रियों की मौजूदगी में पुरोहितों द्वारा मंत्रोचार के मध्य राजा राजीव कुमार सिंह के उत्तराधिकारी के रूप में कुंवर रितेश सिंह का राजतिलक किया गया। इस प्रकार रितेश सिंह राजा साहब के उत्तराधिकार बने।

बस्ती और अयोध्या के सूर्यवंशी क्षत्रिय और रामंदिर का युद्ध।।

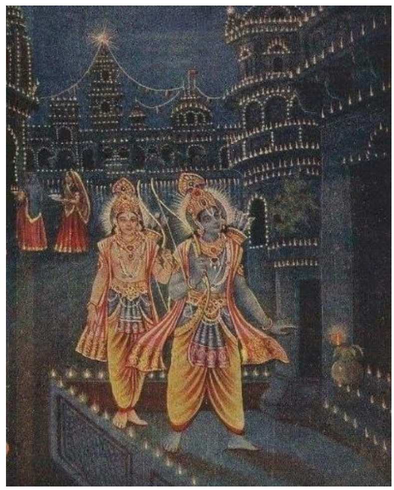

भगवान राम के वंशज उत्तर प्रदेश के अयोध्या और बस्ती जिलों के 120 से अधिक गांवों में फैले हुए हैं, सूर्यवंशी क्षत्रियों ने शपथ ली थी कि वे राम जन्मभूमि की मुक्ति तक पगड़ी (पगड़ी) नहीं पहनेंगे, चमड़े के जूते नहीं पहनेंगे या छाते का उपयोग नहीं करेंगे जब तक उसी स्थान पर राम मंदिर का निर्माण नहीं हो जाता। सूर्यवंशी क्षत्रियों ने मुगल सेना के खिलाफ आक्रमण शुरू करने का फैसला करने से ठीक पहले शपथ ली थी। उनके लगभग 90,000 पूर्वजों ने मुगल सम्राट बाबर के खिलाफ युद्ध छेड़ा था, जिसके कमांडर मीर बाक़ी ने राम जन्मभूमि माने जाने वाले स्थल पर भगवान राम के एक प्राचीन मंदिर को ध्वस्त कर दिया और एक मस्जिद का निर्माण किया, जिसे बाबरी मस्जिद के नाम से जाना गया। पांच सौ साल, एक मस्जिद विध्वंस और एक सुप्रीम कोर्ट के फैसले के बाद, अब अयोध्या राम मंदिर के उद्घाटन के लिए मंच तैयार है मान्यता है कि मुगल काल और ब्रिटिश शासन के बीच राम जन्मभूमि की मुक्ति के लिए कुल 76 युद्ध लड़े गए थे। इनमें से 16वीं शताब्दी में 30वें आक्रमण के दौरान गजराज सिंह की वीरगति तक सूर्यवंशी क्षत्रियों ने मीर बाकी की सेना से 29 बार युद्ध लड़ा था। आखिरकार, युद्ध में सबसे आगे चल रहे गजराज सिंह और राम अवतार के घरों को मुगलों ने तोप से गिरा

दिया था। प्राण प्रतिष्ठा से पहले सूर्यवंशी क्षत्रिय सूर्य कुंड पर एकत्र होंगे, वही स्थान जहां उनके पूर्वजों ने 500 साल पहले अपने कुलदेवता को छत्र चढ़ाने और पगड़ी पहनने की प्रतिज्ञा ली थी। इस तरह उनका 500 साल पुराना संघर्ष समाप्त हुआ और उनके पूर्वजों ने राम मंदिर के लिए जो प्रतिज्ञा की थी वह पूरी होगी। अयोध्या-फैजाबाद के सूर्यवंशी सूर्यवंशी कार्तिकेयपुर-कत्यूरी राजा अभय पाल देव के वंशज हैं। अभय पाल देव के बाद अभय पाल के दो पुत्र बड़ी सेना के साथ अवध क्षेत्र में आये थे और अमोढ़ा और महुली/महसो की स्थापना की। वहां से तिलकदेव के एक वंशज लालजी सिंह फैजाबाद को आए।

राम मंदिर और क्षत्रियों का संघर्ष।

बड़े-बड़े विद्वान वेदपाठी ब्राह्मण प्रातःकाल भगवान् की मंगला आरती के समय श्र। सूक्त और पुरुष सूक्त का सत्वर पाठ नित्य सुनाया करतेथे मन्दिरके पश्चिम ओर अतिथिशाला थी जिसमें त्राह्वाण साधु अतिथि अभ्यागतों के उचित सत्कार होने का सर्वोकृष्ट प्रबन्ध था एक पाठशाला भी थी जिसमें ऋत्विज ब्राह्वाण तैयार किये जाते थे जो अष्टांग योग में निपुण वेद शास्त्रों में पारंगत होकर देश देशान्तरों में घूम घूम कर आये वैदिक संस्कृत धर्म प्रचार करते थे । कसौटी के ८४ प्रस्तर स्तम्भों पर जन्मभूमि का भव्य श्रीराम मन्दिर बना हुआ। था ।

क्षत्रियों की प्रतिक्रिया।

बात की बात में श्रीराम मन्दिर विध्वंश किये जाने की खबर बिजली को तरह भारतवर्ष भर में फैल गई। फैजाबाद जिले में स्थित भीटी स्टेट के राजा महताबसिंह सैन्य के साथ तीर्थयात्रा के लिये जा रहे थे। उन्होंने जब यह समाचार सुना तो अपनी सेना को रोक अञ्जना के बाग में पड़ाव डाल दिया और रात ही रात सलाहकार भेजकर जिले के आस पास रहने बाले समस्त क्षत्रियों को यह समाचार दे दिया। प्रातःकाल सूर्य की किरण फैलने के पूर्व ही दल के दल सूर्यवंशी क्षत्रियो ने आकर चारों ओर से जन्मभूमि को घेर लिया। एकाएक क्षत्रियो की इतनी जबरदस्त तैयारी देखकर मोरयाँकोखाँ ताशकन्दी के होश उड़ गये। चार लाख मुगल सैनिकों ने बड़े जोरों से अल्ला हो अकबर का नारा लगाया और म्यान से तलवारें खींचकर मंदिर गिराने वालों की रक्षा के लिये तत्पर हो गये सूर्यवंशी क्षत्रियों ने भी एक बार 'बम महादेव' का भयंकर सिंहनाद किया और भूखे बाघ की भांति

मुगल सेना पर टूट पड़े सारी मुगल सेना में चीख पुकार मच गई, १५ दिनों तक रात दिन अनवरत रूप से भयंकर संग्राम में हिन्दुओं और मुसलमानों की लाशों के ढेर लग गये। मुगल सेना के पास बहुत घुड़ सवार सैनिक और चार लम्बी मार की भयंकर तोपें थी जिनके गोली की मार से हिन्दू सेना तहस नहस हो गई उधर हिन्दुओं के हाथियों के सवारों के भयंकर आक्रमणों ने मुसलमानों की बखिया विखेर दी। पन्द्रहवें दिन क्षत्रियो की हार हो गई और तोपों की मार से मन्दिर की दीवारें विध्वस्त कर दी गई इस संग्राम में मुगल सेना की ओर से ४ लाख सैनिकों ने तथा सूर्यवंशी क्षत्रियों की ओर से एक लाख चौहत्तर हजार हजार सैनिकों ने भाग लिया जिसमें हिन्दू सैनिकों में से कोई जीवित नहीं बचा और मुगल सेना के ४ लाख में से केवल तीनहजार एक सौ पैंतालिस सैनिक जीवित बच्चे। इस युद्ध में भीटी के राजा महताबसिंह, इसवर के राजा रणविजय सिंह, मकरहीके राजा संग्राम सिंह आदि मारे गये। यह ध्यान रखना आवश्यक है कि श्रीराम-जन्मभूमि विध्वंश किये जाने के समय मुगल सम्राट बाबर ने समस्त, भारत में एक फरमान निकालकर हिन्दुओं के अयोध्या न जाने का जबरदस्त प्रतिबन्ध लगा दिया था। मन्दिर के विध्वंस हो आने पर उसी के मसाले से मस्जिद का निर्माण प्रारंभ हुआ, ब्रिटिश इतिहासकार वेत्ता कनिंघम अपनेलखनऊ गजेटियर में २६ वें तथा ३ पृष्ठ पर लिखता है 'जन्मभूमि के श्रीराम मन्दिर को बाबर के वजीर मोरबाँकी द्वारा गिराये जाने के अवसर पर क्षत्रियों ने अपनी जान की बाजी लगा दी थी और एक लाख छिहत्तर हजार हिन्दुओंकी लाशें गिर जाने के बाद हो बाबर का वजीर मीरबाँकी खाँ ताशकन्दी मंदिर को गिराने में सफल हो सका था। हैमिल्टन ने तो बाराबंकी गजेटियर में यहाँ तक लिखा है कि जलाल शाह ने हिन्दुओं के खून का गारा बनाकर उसपर लखोरी ईटों की नीव मसजिद बनाने के लिये दी थी। इस संग्राम में सबसे भयंकर युद्ध करने वाले बीर देवीदीन पांडे थे यह बीर सूर्यवंशीय क्षत्रियों का पुरोहित अयोध्यास्त सुर्यकुण्ड के समीपके ग्राम सनेथू का रहने वाला था। समस्त सूर्यवंशी क्षत्रिय इसके प्रभाव से प्रभावित थे। दस सहस्त्र सूर्यवंशी क्षत्रियों की विशाल सेना लेकर बड़े बिक्रम के साथ इसने बाबरके वजीर मीरवांकी का सामना किया था एक मुस्लिम सैनिक के पके हुए लखौड़ी ईट के प्रहार से इसकी खोपड़ी चकनाचूर हो गई तो इसने अपने पगड़ीसे उसे कसकर बांध लिया और अपने घोड़े सहित मीरबाकी के हाथों पर आक्रमण किया मीरबांकी हाथी के हौदे में छिपकर बच गया किन्तु पांडे को तलवार ने हाथी सहित महावत का काम तमाम कर दिया इसीबीच में मीरबांकी हौदेमेंसे बन्दूक

भरकर पांडेके ऊपर गोली चलादी जिससे पांडे की उसी क्षण मृत्यु होगई तुजुक बाबरी में स्वयं बाबर लिखता है कि अकेले देबीदीन पांडे ने सात सौ सैनिकों का बध किया था। अब मस्जिद बनने लगी तो जितनी दीबार दिनभर में तैयार होती थी बह शामको अपने आप गिर पड़ती थी। मीरबांकी ने दीवार के चारों ओर सैनिकों का पहरा लगाकर आधी-आधी मोल तक चारों ओर किसी के न आने की रोक लगा दी किन्तु दीवार का गिरना बंद नहीं हुआ दोनों सिद्ध फकीरों की सिद्धाई खाने क्षति हो गई। हैरान होकर मीरबाकी ने सारा समाचार बाबर के पास लिख भेजा, बाबर ने उत्तर दिया यदि ऐसा है तो काम बद करके वापस चले आओ किन्तु जलालशाह ने फजल अब्यासमे सलाह की तो फजल अब्यास ने उत्तर दिया कि इस पाक सरजमीन पर मसजिद बन गई तो हिन्दुस्तान में इस्लामकी जड़ जम आयगी। फलतः अलालशाहने बाबरको पत्र लिखा कि काम बंद नहीं किया जा सकता आप खुद तशरीफ लाइये। इन दोनों फकीरों के प्रभाव से बाबर प्रभावित था। अतः यह पुनः अयोध्या आया और अयोध्या के तत्कालीन विशिष्ट सन्त महात्माओं को बुलाकर कहा कि आप लोग राय दें कि मसजिद किस तरह से बने शाह अपनी इठ नहीं छोड़ते हैं। इस पर महात्माओंने उत्तर दिया कि मसजिद के नामसे इसे हनुमानजी बनने नहीं देंगे इसमें कुछ परिवर्तन करिये। इसके ऊपर सीतापाक स्थान लिखिये इसे मसजिद का रूप न दीजिये तब यह बन सकती है। बाबर ने पंडितों की सारी शर्तें स्वीकार करली और उसीके अनुसार मीनारें गिरा दी गयीं। सदर द्वार में एक चन्दन की लकड़ी लगा दी गयी। बीचोबीच दो गोलाकार चिह्न लगाकर उसमें मुड़िया और फारसी भाषा में श्रीसीतापाक स्थान लिख दिया गया। उत्तर की ओर स्थित्ति श्रीकौशिल्याजी की छठी पूजन स्थान को जो खोद डाला गया था पुनः बनवा दिया गया, चारों ओर जो मन्दिर की परिक्रमा बनी हुई थो उसे उसी प्रकार रहने दिया गया हिन्दू नित्य जब चाहें तब उसमें उनके भजन पाठ आदि कर लेने की स्वतन्त्रता प्रदान की गयी और मुसलमानों को केवल शुकवार को जुमे की नमाज पढ़ने के लिये दो घण्टे मात्र आज्ञा प्रदान की गई। इस प्रकार कूटनीति से बाबर ने दुखी हिन्दुओंके आंसू पोंछे और जन्मभूमिका श्रीराम मंदिर गिराकर मसजिद बनाने में सफल हो सका। आगे क्षत्रिय शान्त नहीं बैठे इस बार के स्वर्गीय राजा रणविजयसिंह को २० वर्षीय अत्यन्त सुन्दरी नवयुवती क्षत्राणि महारानी जयराज कुमारी ने अपनी तीन हजार श्री सैनिकों के साथ जन्मभूमि पर पुनः अधिकार करने के लिये शाही सेना से गौरिल्ला लड़ाई प्रारम्भ कर दी। रानी के गुरू

स्वामी महेश्वरानन्द नाम के एक सन्यासी थे जो गाँव-गाँव में घूमकर जन्मभूमि के उद्धारराथ हिन्दुओं को तैयार करते थे उन्होंने महुली के तत्कालीन राजा पृथ्वी पाल के पास जाकर सहायता की गुहार लगाई और कहा महराज आप रघुनंदन श्री राम के वंशज है आज सूर्यवंश पर संकट आन पड़ी है अतः आप सेना की एक टुकड़ी मुगलिया सेना से मुकाबले के लिए भेजे अतः राजा पृथ्वी पाल ने क्षत्रिय सेना के एक टुकड़ी जिसमें से ५०० घुड़सवार व ५००० की पैदल सेना शस्त्रों सहित महुली बस्ती से अयोध्या को भेजी जो बाबर से लेकर हुमांयू के समय तक बराबर यह दल शाही सेना से टक्करें लेता रहा व रामजन्भूमि की सुरक्षा करता रहा । हुमांयू के समय से एक बार रानी ने जिनका नाम जयराजकुमारी था। जबरदस्त आक्रमण करके पुनः जन्मभूमि पर अधिकार कर लिया। किन्तु तीसरे ही दिन शाही हुकुम आगई और रानी के हाथ से जन्म भूमि छीन ली। अकबर के समय में इस दल ने जन्मभूमि उद्धाराथ पर बारबार आक्रमण किया। आखिरी हमले में शाहीसेना काट डाली गई सारी छावनियों फूक दी गई और जन्मभूमि पर पुनः हिन्दुओं का अधिकार हो गया, इस युद्ध में अपने गुरु महेश्वरानन्दजी के साथ रानी बीरगति को प्राप्त हुई। हिन्दुओं ने मसजिद की चहार दीवारी गिरा कर बीचोबीच एक चबूतरा बनाकर उसपर भगवान की मूर्ति स्थापित कर दी, राजा बीरबल और टोडरमल की सलाह से अकबर ने उसका कोई भी बिरोध नहीं किया बल्कि मुसलमानों को अकबर ने यह सख्त घोषणा करदी कि हिन्दुओंके इस चबूतरे और इस बने हुये घास की पट्टी मन्दिर को तथा पूजा पाठ में कोई किसी तरह का विघ्न उपस्थित न करें अकबर के बाद जहांगीर और शाहजहां के राजत्व-काल तक शांत रही थी। छः दिसम्बर १९९२ को एक भारी भीड़ (कारसेवक) ने अयोध्या स्थित बाबरी मस्जिद को तोड़ दिया और वहीं पर एक प्रतीकात्मक राममन्दिर का निर्माण कर दिया। इसके बाद 2019 में, भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने राम जन्मभूमि पर फैसला सुनाया, जिसमें कहा गया था कि यह भूमि हिंदुओं की है और इस पर राम मंदिर का निर्माण कर सकते हैं। मुसलमानों को मस्जिद बनाने के लिए ज़मीन का एक अलग टुकड़ा दिया जाएगा। अदालत ने साक्ष्य के रूप में भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण (एएसआई) की एक रिपोर्ट का हवाला दिया, जिसमें ध्वस्त की गई बाबरी मस्जिद के नीचे एक गैर-इस्लामिक संरचना की मौजूदगी का सुझाव देने वाले सबूत दिए गए थे।

राम मंदिर के निर्माण की शुरुआत के लिए *भूमिपूजन* 5 अगस्त 2020 को किया गया था। मंदिर की देखरेख श्री राम जन्मभूमि तीर्थ क्षेत्र ट्रस्ट द्वारा की जा रही है। मंदिर का उद्घाटन 22 जनवरी 2024 को पूरा किया गया। मंदिर के उद्घाटन के दौरान सूर्यवंशी क्षत्रियो का प्रण पूरा हुआ और इन्होंने अपने आराध्य व पूर्वज भगवान राम के समक्ष पुनः पग (साफा) व छतरी धारण किया।

महुली का युद्ध

आदिकवि पीताम्बर भट्ट का परिचय :- पीताम्बर के पूर्वज अनीराम कुमायूं से महसों के सूर्यवंशी राजा के साथ आये थे।उस समय महसो राजधानी नहीं थी अपितु महुली थी। बाद में पीताम्बर की सलाह से तत्कालीन राजा को महसों में किला व राजधानी बनाने का सलाह दिया था। उनके आश्रयदाता का नाम जसवन्त पाल था।पीताम्बर के पितामह खेमचन्द और प्रपितामह अनीराम बहुत प्रभावशाली व सुकवि थे। उनकी 3 रचनाए मिलती हैं।

सन् १३०५ ई० में हिमालय में स्थित (कुमायूँ) आस्कोट राजवंश के दो राजकुमार अलख देव और तिलक देव अपने साथ एक बड़ी सेना लेकर बस्ती जनपद के महुली स्थान में आये। वे सूर्यवंशी क्षत्रिय थे। अलख देव ने महुली में अपना राज्य स्थापित कर दुर्ग बनवाया। महुली पर गौड़ वंश के राजा ने चढाई की। उसने किले पर अधिकार कर तत्कालीन नरेश बख्तावर पाल और उनके पुत्र राजकुमार जसवन्त पाल को महुली दुर्ग से बाहर कर दिया। राजकुमार जसवन्त पाल ने गौड़ राजा को युद्ध के लिये ललकारा, भयंकर घमासान युद्ध हुआ। उसमें गौड़ राजा मारा गया और युवराज जसवन्त पाल ने

महुली गढ़ को अपने अधिकार में कर लिया। इसी युद्ध का वर्णन कवि पीताम्बर ने ‘जंगनामा’ में किया है। इस रचना का प्रथम दोहा है-

महुली गढ़ लंका भयो रावण है गो गौड़।

रघुबर है जसवन्त ने दियो गर्व सब तोड़ ।।

ब्रहमभट्ट बलदेव बदली का परिचयः- यह राजकवि पीताम्बर के लड़के तथा भवानी बक्श के अनुज थे। सभी कवियों में राजश्रयी परम्परा का लक्षण दिखाई पड़ता है। यह भी राजा जसवन्त के आश्रयी थे। ये अधिकांशतः फुटकर रचना करते तथा अपने आश्रय दाताओं को सुनाकर उनका मनोविनोद कर इनाम पाया करते थे। उनकी रचनायें उनके वंशज हनुमंत के संकलन में संकलित मिलती है। वे श्रृंगार और नीति के कवि थे। उन्होंने मनहरण, कवित्त, दोहा और सवैया छन्द लिखें हैं। भाषा टकसाली ब्रज तथा फारसी मिश्रित पाया गया है। कथनों में समत्कार अधिक दिखलाई पड़ता है। उनके कुछ दोहे इस प्रकार हैं-

मानी नृप जसवन्त को, बलदी महसों गांव।

कवि कोविद बुध जनन को, देता सुख की छांव।।

सूर्यवंश क्षत्रिय सुभट श्री जसवन्त सुजान।

पालक हैं सद्धर्म को घालक हैं अभिमान।।

आवत हंसता है यहां प्रमुदित ऋतु बसन्त।

मिलत सदा सुख प्रजा को तिय को मिलवत कंत।।

इस दोहे में महुली गढ़ को लंका कहा गया है, इसलिये महुली गढ़ के सूर्यवंशी नरेश ने निवास करना ठीक न समझ कर कविवर की प्रेरणा से महसों में अपनी राजधानी स्थापित की। यह कार्य युद्धविजयी महाराज जसवन्त पाल द्वारा सम्पन्न हुआ। यह घटना प्रायः तीन सौ साल पहले घटित कही जा सकती है।

जंगनामा की (यथोपलब्ध’ प्रतिलिपि)

जगनामा महुली राज का- जिस समय गौड़ राजा ने चढ़ाई की थी और यहाँ परास्त हुआ था। महाराज जसवंत पाल के हाथों उसी समय महसों गद्दी स्थापित हुई थी।

सुमिरो गुरू गणेश को ब्रह्मा विशुन महेश । तैंतीस कोटि देवता गावें श्री जसवंत नरेश।।
श्री जसवंत नरेश गौन पूरब कहँ कीन्हा। घरी महति ठानि दान विप्रन कहँ दीन्हा।।
तीन सुभट भट संग लड़त नहिं मानत संका। सूर्य वंश प्रताप चढ्यौ दै जस को डंका।।
नगर नेवारी जाय के सुभ दिन कियौ पयान । धरी दोय के बीज में लियौ सिकटहै आन।।
लियौ सिकटहै आन खबरि हरिकारन पाई। रामसिंह महाराज फौज सिर ऊपर आई ।।
उठि राजा रिसिआइ अनुज अचलेस बुलावा। कीजै कौन उपाय शत्रु सिर ऊपर आवा।।
बोले मोगल पठान नाथ एक सुनहु समाजा। पहर दोय के बीच जाहु गोरखपुर राजा।।
गोरखपुर में जाइ फौज कछु मद्द पाई । महुली थाना राखि शत्रु से करहु लड़ाई ।।
भै राजा असवार बेगि महुली चलि आयें। बैठि कोट के बीच सुभट सब लोग बुलाये ।।
बोले बखत बिलन्द पाल का कागज लीजै। हैसर चलिये आप कोट खाली करि दीजै।।
सुनि महीप को बचन मंत्र जनु बिसहर जागा। सूर्यवंश के बोल कहर कैवर सम लागा।।
सुनि बखतावर पाल शत्रु से कह समुझाई । बेगि सिकटहै छाडि जीव लै जाइ पराई।।
दच्छिन पच्छिम भूप सकल मोहि जानत राजा | भुवाल जसवंत आय मेरे मुख बाजा।।
राज तिलोई लूटमार सूबन कहँ दीन्हा। गढ़ अम्मेठी मार खड़ी असवारी लीन्हा।।
दो फौजें करि कै परो वही सिकटहै घेरि। जौ न धरौं जसवंत को तो न गहौं समसेर ।।

छन्द

बोले बखतावर पाल नाथ एक सुनहु सलाई।है बागी जसवंत जानि जन करहु लड़ाई।।
हस्तन कुली अमीर जानि जन बिछत कीन्हा ।आधी फौज जुटाव भागि गोरखपुर लीन्हा।।
और फजुल्लह खान संग ले बल्लभ राजा। आठ दिवस मै मार जीव आपन लै भाजा।।
ता ऊपर अफरासेव खान संग लिये नेवाती वीर। बढ़त अनी चटकत तुपक नेक न धरिये धीर ।।

सह पावक जरि धीव राज वैसे जरि जाई। मोहू देहू निकारि वाहवाही को भाई।।
लंका छाड़ि विभीषणा जस गयो राम के पास । देखि चरणा जसवंत को छूटि गई सब त्रास।।

बजी बम्ब घनघोर नीसान बाजा। चढ़े कोथ रन पै बली राव राजा ।।
चढ सेख सैयद औ मोगल पठाना। चढ़े सोमवंशी महा मरदाना।।
चढ़े बैंस डूगर बखतु पँवारा । लिये सांग करै में करै मार मारा ।।
करी दया औ बखत सिंह बंका। घेरी फौज भीतर करै नाहिं संका।।
करना ओ मया राम दो बीर राजें। जैसे लंक अंगद हनुमान गाजै ।।
श्रीमान् अनंता अचल वीर जंगी । उपरै टूटि रन पै ज्यों दीपक पतंगी।।
सुखानन्द गोहलौत सुखी सुदीक्की। जहां तेग चमकै करै मार बक्की।।
चन्दन हिरावन बली बागराऊ। चले वीर तीनों बराबर जुझाऊ।।
रोज राज बक्सर झिलिम ओ टिकोरा। दो वीर बनि के किये अति जोरा।।
तीर बान कम्मान ढालै ढलक्कै। देखत सूर सम्मुख है गाढ़े बलक्कै ।।
चढे कोय रन को महाधीर पेले । लिये तेग कर में किते खेल खेले।।
भये सूर सनमुख लिये कर जुनब्बी । अचल सिंह बाबू कुदावै अरब्बी।।
गोपाल भगवत दिग्गज पहाड़ा। वली खान नसरत वो दल को सिंगारा ।।
कहै राम राजा कितो जीव दीजै। की सुत सहित जसवंत बॉधि लीजै।।
धरी लाज मन में करी नाहि त्रासा। चढे नादनी गौड देखै तमासा।।
बजत बम्ब चहुँ ओर सों राम सिंह नर धीर। खबरिलाल जसवंत को बभकि उठे सब वीर ।।
बभकि उठे सब वीर भीम अर्जुन ते गाढे। देखि गौड़ को गोल चित्त चौगुन है बाढ़े ।।
कहै लाल जसवंत वचन एकै मै भाखों। गहि कृपान के बीच शत्रु की खाक न राखों।।
लाल लाज मन में धरी चढ़ी नूर मुख रंग। श्री जसवंत प्रताप सों को अस जीतै जंग ।।
छन्द
रघुवंसनन्दन सूर्यवंश है हो । तो राउर गरूरी गरद में मिलैहो ।।
बोले फतहपाल सिवपूत पत्ता। होय हो तखत के तखत तखत्ता।।

बनी ठाठ है वर तुरकी ओ ताजी। चढे कोप रन पै फतेपाल गाजी।।

चढ़े वीर वरगाह कर लै बरच्छी। है नै कोपि कै फूटि निकसै तिरच्छी ।।

चढ़े लाल गुरूदत्त अरिदल दहैया। चढ़े लाल संग्राम सो वीर भैया ।।

चढ़े अचल गैजर जगरनाथ गाजी। चढ़े वीर कुँवर सबै फौज साजी।।

चढे केसरी सिंह दल को सिंगारा। लियै संग सावंत सबै सरदारा।।

तखत पाल खुसिपाल दो वीर भारी। तरी से उतरि के तमकि तेग मारी ।।

बहादुर बली धीर सावंत गंभीरा। तहैनै तेग जापर हँसै खय बीरा।।

गजराज लच्छन जो भैया कहावै। उमड़ि अनी देखे तो बागे उठावै ।।

बाबू दिली पाल अजमेर पाला। जबै बाग तोलै करे मुडंमाला।।

चढे मीर सैयद रहीम खाँ पठाना। चढे सेख सैयद जगत लोह जाना।

राउत बिसम्भर महावीर गाजी। बढ़े मोर्चा अपनी राख बाजी।।

चढे कौम छतिरी जो रन के लडैया। कहाँ लौ गनौं वीर बाबू ओ भैया।।

बरनौ चौदह कोस को श्री जसवंत को वीर। एक से एक सावत है महा महा रणधीर।।

मंत्री मति को हीन अरूझै श्री जसवंत सो वोलन लागे छीन वायें काग अरू दाहिने ।।

उमडी फौजे गौड़ की लियो सुभट अनमोल। बजत बम्ब जसवंत की जुटी दूहूँ ओर गोल ।।

जुटी गोल दोऊ भई धारधारा। लगे लाल जसवत सो हनि मारा ।।

सूर्यवंश गाजी महावीर गाढ़े। तुरी से उतरि कै भये भूमि ठाढे ।।

चमक बरच्छी लिये हाथ भल्ला। हुये सूर सनमुख कियै गौड हल्ला।।

सौचौ सार सौ सार चहु चक्र जाना। उमड़े लाल जसवंत कर सौ कमाना ।।

भभकै बली गौड़ तरवार झारै। जैसे सिंह गजजुत्थ पै घाव मारै।।

अनंतू घना वीर जोधा कहावै। उटै रूठे फिर फिर बरच्छी लगावै।।

बली लाल जसवंत के गहै बागा। हनै तेग जापर रहै नाहिं लागा ।।

केते सूर सन्मुख तुरी पै लटक्कै। मरे लाज मारे अनी पै झपक्कै ।।

जस लंक अंगद दुहू पाव रोपा। तैसे जुद्ध कारन फतेपाल कोपा।।

फतेपाल गाजी महा जुत्थ मेले। जैसे गज रन पर जुटे हैं बघेले ।।

पहिलै हय तै उतरि कै भया श्री गजराज। तमगि तेग अरि पै हन्यो ज्यों कुलंग पै बाज ।।

चली तीर तर तर तुपक और गोली ।गयी भूलि के फारसी मोगल बोली ।।

बली गौड़ मैदान लरि कै अधाने। भये लाल जसवंत के मंदु बाने ।।

हँसी जोगिनी चारू मंगल जो गावै । हँसै भूत बैताल डमरू बजावै ।।

भई गौड देवसै भई रात भारी । लई जीतपत्री बली गौड मारी ।।

बली लाल जसवंत देवन के देवा। छुटी बन्द सबकी करै भूप सेवा।।

दोहा

कोप्यो सब सरूवाइ रामसिंह के धाक सों। जूझयो महुली जाइ श्री जसवंत प्रताप कर।।

महुली गढ़ लंका भयो रावण है गो गौड़। रघुवर है जसवंत ने दियो गर्व सब तोड़।।

गोली लाग्यौ काल की गयौ गौड़ मुख मोर फतेलाल जसवंत को खबर भई चहुँ ओर ।।

रघुवंसनन्दन जगतबन्दन चापि के कैवर लियौ ।जुटे जु सायक अरुन धायक प्रान शत्रुन के लियौ।

जसवंत हाथ कमान सोहत बधिक छौना व्याल के । रहि खेत मध्य रनभूमि ऊपर सुभट राजा राम के

जोरि लोह खान निसरत खेल चाँचरि खेलही। जैसे पतंगी अग्नि भीतर रामसिंह नृप धाइया।।

बाबू दलीप दिग्गज कहर के बरखाइया। गयी छूट दस्तक छूटि पुस्तक हाथ मल हाकिम रहे ।।

प्रभु अंस गाजी जयति जय सरूवार जय महुली धनी ।बख्तावर पाल को तब बरी कूजा को ऊयो दान।।

महुली राजा और को सूरजवंश समान।।

कवि ने महाराज जसवन्त पाल के वीरत्व पूर्ण कार्य एव विजय' को व्यक्त करने से पूर्व तुति पूर्ण अभिव्यक्ति करता है 'में अपने गुरु गणेश जी की एवं ब्रहमा, विष्णु शंकर जी की स्तुति करता हूं कि तैतीशों करोड़ देवता का महाराज जसवन्त जी गुण गान करे। महाराज जसवन्त शुभ-मुहुर्त की जानकारी कर ब्राह्मणों को दान-दक्षिणा देकर राज्य विस्तार हेतु पूर्व दिशा की ओर आगे बढ़े, अपने साथ तीन कुशल बहादुर योद्धाओं । सैनिक समेत निर्भिक लडते हुए आगे बढ़ते गये। उस समय राजा की स्थिति ऐसी थी जैसे सूर्यवंश के प्रताप का डंका बज गया। शुभ दिन विचार कर नेवारी नगर के लिए अपने ऊपर चढाई का संदेश पाये इस कुसंदेश को सुनकर महाराज जसवंत की क्रोध अग्नि जल उटी तुरन्त अपने छोटे भाई को बुलाये और उनसे कहे कि- अब कौन सा उपाय किया जाए शत्रु (गोड) सिर पर आ गया है। उसी समय मुगल पठान बोल उठे कि "हे नाथ! हे सैनिको! दोपहर (छ: घण्टे) के अन्दर गोरखपुर के राजा के पास चले जायें वहां से सेना की कुछ सहायता मिल जायेगी। महुली स्थान सुरक्षित करने के लिए शत्रु (गोड़ राजा) से लड़ाई कीजिए। महाराज आप शीघ्र ही फौज सवारी संसाधनसहित महुली चले आये और राजकोट को अन्दर अपनी फौज व समस्त बहादुर लोगों को बुलवाकर शत्रु (गोड) राजा से मुकाबला करने हेतु विचार विमर्श कर लिया जाय। इसी मध्य शत्रु की ओर से जो तत्कालीन किले के राज्याधिकारी बिलन्द पाल के अधिकार पत्र को ले लेने की बात कही गई और यह भी कहलवाया गया कि आप किले को छोडकर हैंसर चले जाये यहां रहने का अधिकार नहीं है। शत्रु पक्ष की चुनौती पूर्ण बात को सनकर महाराज जसवन्त पाल अन्दर से कोधाग्नि में तमक उठे उन राजा जसवन्त पाल की सिथति ऐसी हुई मानों कोई विषेला सर्प फन फैला दिया हो, साथ ही साथ शत्रु की उक्त बात फन युक्त बाण जैसी भयंकर लगी। गौड़ राजा बख्तावर पाल को कहलवाता है कि मेरे शत्रु जसवन्त पाल को समझा दीजिए और कह दीजिए कि वे सिकटहा छोड़कर अपना जी लेकर यहां से भाग जावे क्योकि दक्षिण, पश्चिम के समस्त राजा मुझे राजा जानते है। कुत्सित जसवन्त राजा मुझसे लड़ने आ गया है। तिलोई राजा को लूट मार क वह धन दौलत लोक बाग सूबों में में दे दिये अमेठी गढ़ को धराशायी कर असवारी (बाहन) छीन लिया। फौज की दो टुकड़ी लगाकर सिकटहा को घेर लिया और गौड राजा कहा कि- "यदि जसवन्त को पकड़वा नहीं लेता तो हाथ में तलवार नहीं धारण करूंगा।'

गौड़ राजा के उक्त संकल्प को सुनकर बख्तावर पाल प्रति पक्षी (गौड़) राजा से कहे कि नाथ एक सुझाव सुनिये- जसवन्त आप का दुश्मन है उसे बागी समझ कर युद्ध कीजिए क्योंकि अपने हाथ से ही सेवक, अमीर आदि जनों को छिन्न भिन्न करता है। इस भयंकर युद्ध स्थिति को परखकर गौड राजा का भाई अपने बड़े भाई राम सिंह को समझाया कि जसवन्त पाल तो गोरखपुर को निकल गया किन्तु उसके बाद अफरासेव खान अपने साथ वीर योद्धा नेवाती आदि को लेकर चढ़ाई कर दिया है सेना के साहस तोप बन्दूक की कार्यवाही को देखकर बड़े-बड़े अपना धैर्य गवां चुके है। जसवन्त पाल की युद्ध में धीव (नीच जाति) का राज्य जल जायेगा (सर्वनाश) हो जायेगा। मुझे निकाल दीजिए अब कोई वाहवाही नहीं चाहिए। युद्ध करने का संकेत किया, जिस तरह से लंका छोडकर विभीषण राम जी के पास चला गया ठीक उसी प्रकार गौड राजा का भाई अपने भाई का संग छोड़कर महाराज जसवन्त के चरण दर्शन कर निर्भय हो गया।

कवि की कृति के आधार पर महाराज जसवन्त पाल की सैनिक कार्यवाही का दृश्य- गृह में योद्धाओं की उत्साह वर्धक ध्वनि बजने लगी नगाडे व बिगुल बजने लगे, कोधित होकर छोटे-बड़े राजा गौड राजा की फौज पर धावा बोल दिये साथ-साथ सा सैयद मुगल पठान और बड़े-बड़े चन्द्रवंशी वीर युद्ध करने के लिए चढ़ गये । बैंस ड्रगर (टीले पर चढकर) पवार/परमार सेनिक हाथ में हथियार लेकर दुश्मन की सेना का मारकाट करने लगे। युद्ध कुशल बखत सिंह और दया जो कि बड़े बहादुर योद्धा रहे दुशमन गोड की फौज को निर्धाक घेर लिए करना और मयाराम दो वीर सैनिक जैसे लंका के रणांगन में अंगद और हनुमानजी की जो भूमिका थी वही महुली में करना और गयाराग की थी। बड़े-बड़े मान्य बहादुर बलवान सैनिकों की युद्धाग्नि में शत्रु गौड राजा की सेना वैसे ही नष्ट भष्ट होती रही जैसे दीपक के लव पर अपने आप पताग गिरकर स्वयं जाल जाते है यही स्थिति गोड फौज की हो रही थी। सुखानन्द गोहलौत, सुखी सुद्दी की तलवारे जब निकलती है तो शत्रु पक्ष की सेना में मार काट की आवाज सुनाई पड़ने लगता है। हिरावन, बलशाली बागराऊ, तीन बराबर के जुझारू बलवान युद्ध भूमि की ओर निकल पड़ते है। रोज राज बक्सर के झिलमिल और टिकोरा ये दो वीर सैनिक घोर युद्ध किये। सैनिकों के तीर-धनु, ढाल आदि को देखकर प्रति पक्षी (शत्रु के बड़े से बड़े योद्धा) अपना शैर्यवान सेनिक क्रोधावेश में तलवार प्रतिपक्षी पर जब धावा बोलते थे तो वे तलवार चलाने में कही को नहीं थे। एक से एक बहादुर सैनिक हाथ में अस्त्र शस्त्र लिए हुए निकल पड़े

अचल सिंह बाद अपने अरबी घोड़े पर सवार होकर युद्ध भूमि में निकल पडे गोपाल भगवत दिग्गज पहाडा, और नली खान नसरत ये दोनों वीर सेना के श्रृंगार थे। इतनी बड़ी सैन्य शक्ति को देखकर गौड राजा (राम सिंह) अपने सैनिकों को ललकारते हुए कहता है कि- "अरे सैनिकों या तो जान दे दो अथवा पुत्र सहित जसवन्त को बांध लो।

बहादुर सैनिको मेरी लाज रक्खे जसवन्त व उनकी सेना का लेश मात्र भय न समझे युद्ध में आगे बढ़े। सम्पूर्ण सेना हुंकार भरती हुई एवं गर्जना करती हुई चढाई कर दे, ताकि गौड राज की युद्ध -खेल दुश्मन (राजा जसवन्त) एवं उनकी फौज देख सके। युद्ध मैदान में गोड राजा की सैन्य कार्यवाही प्रारम्भ हो गयी, चतुर्दिक युद्ध बाजे बजने लगे हुंकार होने लगी ऐसे रहे युद्ध में गौड राजा राम सिंह के सेना की चढायी की खबर महाराज जसवन्त पाल को हुई, परिणाम स्वरूप जसवन्त पाल की फौज भभक उठी, सम्पूर्ण वीर सैनिक ऊबल उठे अर्जुन और भीम जैसे नीर गौड राजा एवं सैनिकों को घेर लिए जिससे महाराज जसवन्त की फौज में चौगुना साहस बढ़ गया तत्काल महाराज जसवन्त पाल अपने सेनिकों में साहस भरते हुए बोल उठे- "मेरे बहादुर सैनिको! दुश्मन सैनिकों को तलवार की धार के नीचे कर दें, इनकी इज्जत खाक कर दें।" महाराज जसवन्त की सैन्य मुख पर युद्ध का रंग चढ गया और अन्दर से लाज लग गई। सैनिकों के चीरत्व भाव को देखकर कवि कह उठता है कि श्री जसवन्त के प्रताप का मुकाबला कोन कर सकता है? अर्थात् कोई नहीं इनका युद्ध में कोई नहीं जीत सकता।

छन्द

रघवंश नन्दन सूर्यवंश हवे हो। तो राउर गरुरी गम में मिलेहो।।

परतुत काव्यांश में बहादुर योद्धा फतेह पाल अपने राजा जसवन्त पाल को उनकी वीरता का अवबोध कराते हुए कहता है – "हे महाराज! आ। यदि सूर्यवंश रघुबर नन्दन हो, तो उस गोड राजा की गरुरी (अभिमान) को मिटा देंगे। आप विजयी राजा के राजा हो, गद्दी नसीन हो, इसी वीरत्व भाव से क्रोधावेश में बहादुर पालो ने युद्ध स्थला में चढ़ाई की तथा पूरी फौज तुर्की, ताजी घोड़ो पर सवार होकर निकल पड़े, बरगाह के बहादुर सैनिक हाथ में बरछी लिए ऊपर उठाये हुए युद्ध भूमि की तरफ आगे बढ़ रहे है सेना के साथ अपनी सेना सुसज्जित कर तथा वीर कुवर लोग एवं जो जहा अपने बहादुर राजा की आन में व फौज के अंगार केसरी सिंह अपने संग बड़े से बडे घराने के वीरों को साथ लिए हुए युद्ध

भूगि में ऊतर पडे। तखत पाल व सुखिपाल जो बड़े बलशाली योद्धा अपनी सवारी छोडकर कोधावेश में तलवार भांजने लगता है। अनेक बहादुर बलवान धैर्यवान उच्च शीय, गम्भीर, पान खाने के शौकीन जो गेया कहलाते है जिनके अन्दर शत्रु को तहस—नहस कर डालने का भाव प्रकट हो रहा है। हंसते से उमडते हुए युद्ध भूमि की तरफ बढ़ रहे है। इस स्थिति को देखकर शत्रु (गोड) सेना की आवाज बन्द हो जाती है। महाराज जसवन्त पाल की सैन्य में बाबू दिली पाल, अजमेर पाल जो बडे साहसिक है, अपनी तलवार से नर मुंड का समूह बिछा देत है। मीर सैयद रहीम खां जो पठान जाति के सैनिक चढाई कर देते है। शेख, सैयद ऐसे बहादुर रहे कि संसार इन लडाकुओं का लोहा मानता है। साउत विसम्भर महा बली गाजी मोर्चा पर अपनी बाजी लगा दिये। युद्ध भूमि में विशेष रूप से लडने वाले क्षत्रिय लोग निकल पड़े। जसवन्त पाल के पक्ष में विविध प्रकार के लडाकुओं क वर्णन करते हुए कवि कहता है कि ‘‘लडाई लड़ने के लिए इतने बाबू साहब निकल पड़े कि उनकी गणना कहां तक की जाय चौदह कोस के परिक्षेत्र में श्री जसवन्त पाल के समान वीर कोई नहीं है। जिनकी सेना में एक से एक महाबली योद्धाहै।’’ शत्रु पक्ष (गौड़) का मंत्री बुद्धि हन है जो कि श्री जसवन्त पाल जी से उलझे। जब दोनों तरफ की सेना युद्ध के लिए निकलती है तो प्रतिपक्ष (गौड़) में अशुभसूचक संकेत दिखने लगते है, प्रतिपक्षी (गोड) सेना के बाये तरफ से घृणास्पद शब्द निकलते है एवं दायें तरफ से कौवे बोलने लगते है ।

गौड राजा की सेना जिसमें एक से एक महाबली योद्धा है उत्साहित होकर युद्ध के लिए निकल पड़ा । मुकाबले में महाबली जसवन्त पाल की फौज नगाडे आदि युद्ध बाह्य के साथ निकल पड़ी तुरन्त ये सेनाएं एक दूसरे पर मार-काट करने लगी। सूर्यवंश के महान योद्धा अपने सवारी से उतर कर युद्ध-भूमि में अदम्य साहस के साथ उतर पड़े जो अपने हाथों में तलवार भाला देखकर, गौड राजा की सेना में हाय का कोलाहल होने लगा इसी मध्य वीर जसवन्त पाल हाथ में धनुष-बाण लिए हुए एवं सैनिक तलवार एवं लोह निर्मित चक्राकार शस्त्र लिए हुए निकल पड़े | महाराज जसवंत पाल एवं उनके बहादुर लड़ाकुओं को देखकर, गौड राजा भभक पड़ता है और अपनी तलवार घुमाने फिराने लगता है| उस समय की स्थिति ऐसी थी जैसे सिंह हाथियों के समूह पर प्रहार करें जिसका कोई असर पड़ने वाला नहीं था| प्रतिपक्षी (गौड) के एक से एक बलशाली युद्ध उठते है और क्रोधातुर होकर बार-बार बरछी लहराते है| जिसका कोई असर महाबली जसवन्त पाल व सैनिको

पर नहीं पड़ता | प्रति पक्षी (गौड) सेना के कितने सूरवीर घोडियो पर लटककर अपनी लाज बचाने में नाकाम झपटते है| जैसे लंका में राम-रावण युद्ध में जो भूमिका अगंद की थी, वहीँ भूमिका महुली में जसवन्त पाल और गौड सेना के समक्ष अपना अटल पावं जमा दिये |बहादुर सैनिक फतेपाल शत्रु (गौड) कि सेना के मध्य में टूट पड़े जैसे कि हाथियों के समूह में सिंह | महाराज जसवन्त के तलवार वैसे चलाते है जैसे आज पक्षी कुलंग (गुर्ग) पर झपटता है | तीर, तोप, गोलिया तड़ा-तड़ चली है जिसे देखकर गौड राजा के सैनिको की अहंकारी जुबान लुप्त हो गई|अपने को बलशाली समझने वाला गौर राजा युद्ध में लड़कर पराजय का अनुभव कर लिया | इसी स्थिति को देखकर एव समझ कर बहादुर जसवन्त [पाल हंसती सी मंगल गीत गाने लगी, भूत, बैताल ख़ुशी में हसंते और डमरू बजाने लगे कि अब हमे भरपूर खाने को आहार (मांस) मिलेगा | ऐसा थे महाप्रतापी जसवन्त पाल एवं इनके सैनिक का सैन्य कार्य | गौड राजा एवं उसकी बची हुई सेना के लिए रात्रि दीवाली की रात्रि जैसी बहुत बड़ी लगी (दुःख की रात युग के समान हो जाती है)| महाराज जसवन्त पाल का विजय पत्र जारी हो गया | महाबली पाल जसवन्त देवो के देव सारे बंदी सैनिक सामंत आदि मुक्त हो गये और राजा जसवंत पाल का स्वागत सम्मान करने लगे |

काव्यांश दोहा-

कोप्यों सब सरुबाइ राम सिहे के घाक सों| जुझयो जाइ श्री जसवन्त प्रताप कर |

सरजूपार- (बस्ती गोरखपुर आदि) क्षेत्रो के पक्ष-विपक्ष के सब लोग गौड राजा रामसिंह के अन्याय एवं कार्य व् प्रभाव से कुपित हो गये और मुखर हो गये कि- लंका में रावण की तरह सबको राम जैसे श्री जसवन्त से जुझवा दिया | महुली में गौड राजा राम सिंह और सुर्यवंश नरेश कि स्थिति लंका में रावण और श्री राम जी की युद्ध जैसे थी| महाराज जसवन्त जी ने राम के समान अहंकारी रावण जैसे गौड राजा के मुख में लगी वहीँ गौड राजा (रामसिंह) जसवन्त पाल कि गोली से महुली कि युद्ध भूमि में मारा जाता है जिसकी खबर सर्वत्र फ़ैल जाति है| तत्पश्चात महाराज जसवन्त पाल के प्रति कवि की उकित- रघुवंश नंदन संसार में वन्दनीय शत्रु के प्राण को हरने वाले फण युक्त बाण कांख में दावे खडत्र है | समर भूमि में महाराज जसवन्त हके हाथ में धनुष वैसे लग रहा है जैसे बधिक के हाथ में सर्प का बच्चा शोभा देता है | महुली कि युद्ध भूमि के मध्य एक से एक

महाबली सेना गौड (राम सिंह) सहित मारी गई | जैसे लोहे कि धधकती खान से एक एक चिनगारिया उठती है पुन: उसी में गिरकर समाप्त हो जाती है ठीक उस तरह महाराज जसवन्त की युध्दाग्नी में गौड सैन्य रूपी पतंगे दौड-दौड क्र युक्त करने तथा गुलामी युक्त करने वाले सबको शांति प्रदान करने वाले प्रभु स्वं महुली के धनी सरजू पार (बस्ती गोरखपुर आदि) का जय करने वाले महाराज जसवन्त पाल की जय तथा महाराज जी पिता श्री बखतावर पाल रूपी गुलाब पुष्प का उदय वाले सुर्यवंश महुली राजा जसवन्त पाल के समान राजा कोई नही है।

महुली राज्य के सम्बन्ध में 'जंगनामा' की रचना तीन सौ साल पहले बस्ती जनपद के महसों के निवासी पं0 ब्रह्मभट्ट पीताम्बर ने की थी। पीताम्बर एक श्रेष्ठ कवि थे उनकी रचना पढने से पता चलता है कि वे अत्यन्त प्रौढ ब्रजभाषा मिश्रित अवधी भाषा में विभिन्न छन्दों में काव्यरचना करने में समर्थ थे।।

महाकवि रंगपालजी की लोक रचनाएं।

रंगपाल

नाम से विख्यात महाकवि रंग नारायण पाल जूदेव वीरेश पाल का जन्म सन्तकबीर नगर (उत्तर प्रदेश) के नगर पंचायत हरिहरपुर में फागुन कृष्ण 10 संवत 1921 विक्रमी को सूर्यवंशी क्षत्रिय परिवार में हुआ था। 'बस्ती जनपद के छन्दकारों का सहित्यिक योगदान' के भाग 1 में शोधकर्ता डा. मुनिलाल उपाध्याय 'सरस' ने पृ. 59 से 90 तक 32 पृष्ठों में विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किया गया है। इसे उन्होने द्वितीय चरण के प्रथम कवि के रुप में चयनित किया है। युवा मन, साहित्यिक परिवेश, बचपन से ही तमाम कवियों व कलाकारों के बीच रहते-रहते उनके फाग में भाषा सौंदर्य श्रृंगार पूरी तरह रच-बस गया था। महाकवि रंगपाल लोकगीतों, फागों व विविध साहित्यिक रचनाओं में आज भी अविस्मरणीय हैं। दुनिया भर में अपने फाग गीतों से धूम मचाने वाले महाकवि रंगपाल अमर हैं।

डा. मुनिलाल उपाध्याय सरस :-

"रंगपालजी ब्रज भाषा के प्राण थे। श्रंगार रस के सहृदयी कवि और वीर रस के भूषण थे। उन्होंने अपने सेवाओं से बस्ती जनपद छन्द परम्परा को गौरव प्रदान किया। उनके छन्दों

में शिल्प की चारुता एवं कथ्य की गहराई थी। साहित्यिक छन्दों की पृष्ठभूमि पर लिखे गये फाग उनके गीत संगीत के प्राण हैं। रीतिकालीन परम्परा के समर्थक और पोषक रंगपालजी की रचनाओं में रीतिबद्ध श्रृंगार और श्रृंगारबद्ध मधुरा भक्ति का प्रयोग उत्तमोत्तम था। उनकी रचना भारतेन्दु जी के समकक्ष है। रंगपालजी का युगान्तकारी व्यक्तित्व साहित्य के अंग-उपांगों को सदैव नयी चेतना देगा ऐसा विश्वास है।"

हालांकि आज रंगपाल की धरती पर ही अब फाग विलुप्त हो रहा है। इक्का-दुक्का जगह ही लोग फाग गाते हैं। महाकवि के जन्म स्थली पर संगोष्ठी के साथ फाग व चैता का रंग छाया रहा। एक झूमर फाग में महाकवि रंगपाल ने श्रीकृष्ण व राधा के उन्मुक्त रंग खेलने का मनोहारी चित्रण कुछ इस तरह किया है-

सखि आज अनोखे फाग खेलत लाल लली।

बाजत बाजन विविध राग,गावत सुर जोरी।।

खेलत रंग गुलाल-अबीर को झेलत गोरी।

सखी फागुन बीति जाला, नहीं आये नंदलाला।

प्रेम बढ़ाय फंसाय लियो।

रंगपाल जी के लोकगीत उत्तर भारत के लाखों नर-नारियों के अन्तरात्मा में गूंज रहे थे। फाग गीतों में जो साहित्यिक बिम्ब उभरे हैं वह अन्यत्र दुर्लभ हैं। वियोग श्रृंगार का उनके एक उदाहरण में सर्वोत्कृष्टता देखी जा सकती है।

ऋतुपति गयो आय हाय गुंजन लागे भौंरा।

भयो पपीहा यह बैरी, नहि नेक चुपाय।

लेन चाहत विरहिनि कैजिमरा पिय पिय शोर मचाय।

हाय गुंजन लागे भौंरा।

टेसू कचनार अनरवा रहे विकसाय।

विरहि करेज रेज बैरी मधु दिये नेजन लटकाय।

हाय गुंजन लागे भौंरा।

अजहुं आवत नहीं दैया, मधुबन रहे छाय।

रंगपाल निरमोही बालम, दीनी सुधि बिसराय।

हाय गुंजन लागे भौंरा।

रंगपालजी द्वारा लिख हुआ मलगाई फाग गीत हज़ारों घरों में फाग गायकों द्वारा गाया जाता है। एक उदाहरण प्रस्तुत है-

यहि द्वारे मंगलचार होरी-होरी है।

राज प्रजा नरनारि सब घर

सुख सम्पत्ति बढ़े अपार।

होरी-होरी है।

बरस-बरस को दिन मन भायो,

हिलि-मिलि सब खेलहुयार।

होरी-होरी है।

रंगपाल असीस देत यह

सब मगन रहे फगुहार।

होरी-होरी है।

यहि द्वारे मंगलचार

होरी-होरी है।

रंगपाल जी भक्ति भावना उनके 'शान्त रसार्णव' ग्रन्थ में सूर-तुलसी तथा मीरा को भी मात देती है-

बोलिये जो नहिं भावत तो एक वारहि आंखि मिलाई तो देखो।

जो नहि हो तो सहाय कोऊ लखि दीन दशा पछताय तो देखो।

रंग जू पाल पिछानतो नाहिं कछु कहि धीर धराइ तो देखो।

छोरि विपत्ति तो लेतो नहिं, भलाबुन्द दुह आंसू गिराय तो देखो।।

देखत काहि सोहाय भला अरु को दृग जोरि कै नय सुख जोवै।

कौन सुनै-गुनै पाछिलिहि प्रीतिहि यातेन काहूय जाय कै रोवै।

रंग जू पाल पड़े सो सहै औ रह्यो सह्यो भ्रम काहू पै खोवै।

वर्षा गीत 'रंग महोदधि' नामक पाण्डुलिपि में संकलित है, जिसमें मनभावन छटा झलकती है-

मुदित मुरैलिन के कूकत कलापी आज,

तैसे ही पपीहा पुंज पीकहि पुरारै री।

लपटि तरुन लोनी लतिका लवंगन की ,

चहुं दिशि उमगि मिले हैं नदी नारे री।

रंगपाल एरी बरसा की य बहार माहि,

आये नहि हाय प्रान प्रीतम हमारे री।

धूरिये धारे धुरदान, चहु धाय-धाय,

गरजि-गरजि करैं हियै में दरारे री।।

इसी क्रम में बसन्त ऋतु का एक चित्रण दर्शनीय है-

भूले-भूले भौंर चहु ओर भावंरे से भरैं,

रंगपाल चमके चकोर समुदाई है।

कुसुमित तरु जू भावन लगे हैं मन,

गावन त्यों कोकिल को गांवन सुहाई है।

सुखप्रद धीरे-धीरे डोलत समार सीरो,
उड़त पराग त्यों सुगंध सरसाई है।
विपिन समाज में दराज नवसाज भ्राज,
आज महाराज ऋतुराज की अवाई है।।

शरद गीत ‘रंग महोदधि’ नामक पाण्डुलिपि में संकलित है इसकी छटा भी निराली है-

अमल अवनि आकाश चन्द्र प्रकाश रास हरि।
कुंद मालती कासकंस कुल विमलक सर सरि।
चंहकित हंस चकोर भंवर धुनि खंजन आवन।
पूजन पितृ सुदेव सुखिन मगधावनि धावन।

अरु उदित अगस्त पयान नृप दीपावलि गृहचित्र तिमि।
घन श्वेत साजहू वरनि के रंगपाल ऋतु सरद इमि।।

वरिज विकास पर मालती सुवास पर,
माते मधु पालिनी के सरस विलास पर।
भनय रंगपाल निम लाई आस पास पर ,
कुसुमित कास पर हंसन हुलास पर।

फैली अलबेली आज सुषमा सरद वारी,
जलज निवास पर अवनि अकास पर।
तारागण भास पर चांदनी सुहास पर,
चन्द्र छवि रास पर राधा वर रास पर।।

श्री राधेश्याम श्रीवास्तव श्याम हरिहरपुरी संत कबीर नगर द्वारा संपादित तथा चैहान पब्लिकेसन सैयद मोदी स्मारक गीताप्रेस गोरखपुर से 'रंगपालके फाग' नामक पुस्तक प्रकाशित हुआ है, जिसमें रंग उमंग भाग 1 व भाग 2 तथा रंग तरंगिणी का अनूठा संकलन किया गया है। इसमें विविध उमंगों में फाग के विविध प्रकारों को श्रेणीबद्ध किया गया है। डा. सरस जी ने अपने शोध ग्रंथ बस्ती के छन्दकार में रंग उमंग के दोनों भागों का प्रकाशन की सूचना दी है। यह हनुमानदास गया प्रसाद बुकसेलर नखास चैक गोरखपुर से प्रकाशित हुआ है। रंगपाल जी के लोकगीत उत्तर भारत के लाखों नर नारियों के अन्र्तात्मा में गूंज रहे थे। फाग गीतों में जो साहित्यिक विम्ब उभरे हैं वह अन्यत्र दुर्लभ हैं।

मंगलाचरण :- फाग गीतों के संयोग और वियोग दोनो पक्षों को उजागिर किया गया है। दोनों के प्रारम्भ में दो-दो दोहों में मंगलाचरण प्रस्तुत किया गया है।

आनन्द मंगल रास रस हसित ललित मुख चंद।

रंगपाल हिय ललित नित , ध्यान युगल सुखचन्द।

रंग उमंग तरंग अंग , रस अमंग सारंग।

रंगपाल बाधा हरण, राधा हरि नव रंग।।

रंग उमंग भाग कुछ छन्द प्रस्तुत है।

ऋतु कन्त बिन हाय, लगो जिय जारने।

बिरहिन बौरी कान आम ये बौरे बौरे।

गुंजत भुंग गात मत्त मधु दौरे मधु दौरे भौरे।

बैरी विषय पपीहा पिय पिय

यह लागी शोर मचाय -बानसो मारने।।1।।

फूले टेसु अनार और कचनार अपारे।

दहके जन चहुं ओर जो निरपूम अंगारे।

बीर समीर सुगंध बगारत,

बिरहांगिनियां थपकाय लगे अब बारने।। 2।।

अमित पराग उड़ात जात लखि चित्त उड़ाई।
करि चहचही चकोर देत् हठि चेत भगाई।
कारी कोइलिया दई मारी,
दिन रतियां कूक सुनाय लगी हिय फारने।।3।।
पीर भीर मैं धीर धरहूं को नहिं आवै।
रहै लोक की लाज चहै जावै मन भावै।
करि योगिनी को भेष भ्रमब अब
सखि रंगपाल वलि जाय पिया कारने।
झूमर फाग के कुछ छन्द प्रस्तुत है। –
अति धूमधाम की आज होरी ह्वै रही।
डारहिं केसर रंग झपट भरि भरि पिचकारी
झमकि अबीर की झोरि झेलि देवै किलकारी।
मेलहिं मूठ गुलाल परसपर ,
क्वउ रहत नहीं कुछ बाज होरी ह्वै रही।।1।।
कहहिं कबीर निशंक झूमि झुकि बांह पसोरी।
उछल विछलि मेड़राय विहंसि देवै करतारी।
नाचत गावत भाव बतावत,
बहु भांति बजावहिं बाज होरी रही।।।2।।
विविध स्वांग रचि हंसि हंसाय देवैं होहकारी।
फूले अंग न समहिं नारि गन गावै गारी।
पुलकित आनंद छाक छके सब,
सजिनिज निज साज समाज होरी ह्वै रही।
ढपटि लपटि मुख चूमि लेहि घूंुघट पर टारी।।

रोरी मलहिं कपोल भजहिं कुमकुमा प्रहारी।
रंगपाल तजि लाज गई भजि ,
मदन को राज होरी ह्वै रही।।4।। अति0।।
चैताली झूमर फाग के कुछ छन्द प्रस्तुत है –
यह कैसी बानि तिहारी अहो प्रीय प्यारी।
बैठी भोहें तानि जानि क्यों होहु अनारी।
आपुते लीजे जानि बिरह दुख कैसो भारी।
लेति बलाय एक तूहि बलि ,
जियरा की जुड़ावन हारी अहो पिय प्यारी।।1।।
केती इत उत करहिं अनैसी झूठी चोरी।
मुख पर चिकनी बात, देहिं पीछे हंसि तारी ।
आगे आगि लगाये कुटिल पुनि ,
बनि जांहि बुझावन हारी अहो पिय प्यारी।।2।।
रंग उमंग भाग 1 के एक उदाहरण में सर्वोत्कृष्टता देखी जा सकती है-
ऋतुपति गयो आय हाय गुंजन लागे भौंरा।
भयो पपीहा यह बैरी, नहि नेक चुपाय।
लेन चाहत विरहिनि कैजिमरा पिय पिय शोर मचाय।
हाय गुंजन लागे भौंरा।
टेसू कचनार अनरवा रहे विकसाय।
विरहि करेज रेज बैरी मधु दिये नेजन लटकाय।
हाय गुंजन लागे भौंरा।
अजहुं आवत नहीं दैया, मधुबन रहे छाय।
रंगपाल निरमोही बालम, दीनी सुधि बिसराय।

हाय गुंजन लागे भौंरा।

रंग उमंग भाग 2 :-

प्रथम भाग की तरह रंग उमंग भाग 2 फाग गीतों की बासंती छटा विखेरता है। वे ना केवल रचयिता अपितु अच्छे गायक भी थे। सारे गीत बड़े ही मधुर हैं। कुछ के बोल इस प्रकार हैं-

हाय बालम बिनु दैया।

पिय बनही से बोलो उनहीं के घूघट खोलो,

कहो कौन की चोरी फगुनवा में गोरी ,

दोउ खेलत राधा श्याम होरी रंग भरी,

सखि आज बंसुरिया बाला, गजब करि डाला,

कहां बालम रैनि बिताये भोर भये आये।।

आदि गीत मनको बरबस हर लेते हैं। रंगपालजी द्वारा लिख हुआ मलगाई फाग गीत हजारों घरों में फाग गायकों द्वारा गाया जाता है। एक उदाहरण प्रस्तुत है-

यहि द्वारे मंगलचार होरी होरी है।

राज प्रजा नरनारि सब घर सुख सम्पत्ति बढ़े अपार।

होरी होरी है।

बरस बरस को दिन मन भायो,

हिलि मिलि सब खेलहुयार।

होरी होरी है।

रंगपाल असीस देत यह सब मगन रहे फगुहार।

होरी होरी है।

यहि द्वारे मंगलचार होरी होरी है।

'रंगपालके फाग' नामक पुस्तक के उमंग भाग 4 एक उदाहरण में सर्वोत्कृष्टता देखी जा सकती है। यह गीत रंगपालके फाग' नामक पुस्तक प्रकाशित हुआ है-

सखि आज अनोखे फाग खेलत लाल लली।

बाजत बाजन विविध राग,गावत सुर जोरी।।

रेलत रंग गुलाल-अबीर को झेलत झोरी।

कुमकुम चोट चलाय परस्पर ,

कुमकुम चोट चलाय परस्पर ,

अति बिहंसहिं युत अनुराग,

बरसहिं सुमन कली ।।1।।

तिहि छल छलिया छैल बरसि रंग करि रस बोरी ।

प्यारी की मुख चूमि मली रोरी बरजोरी ।

तबलौं आतुर छमकि छबीली,

छीनी केसरिया पाग लीनी पकर अली।।2।।

चुनि चूनरि पहिराय दई रोरी अंजन बरजोरी ।

नारि सिंगार बनाया कपोलन मलि देई रोरी ।

तारी दै दै हंसति कहति सब,

बोलहुं किन श्याम सभाग सुनियत रामबली।।3।।

अपनों करि पुनि छोड़ि कहति नन्द किशोरी ,

भूलि न जइयो बीर रंगीली आज की होरी ।

रंगपाल वलि कहहिं देवगन,

धनि धनि युग भाग सुहाग-अली प्रेम पली।।

सखि आज0।।

रंग उमंग भाग 1 व 2 की तरह गीत सुधा निधि में डा. सरसजी ने 200 फाग व होरी गीतों तथा कजली गीतों के प्रकाशन की सूचना दी हैं। यह ग्रंथ प्रथम बार पूना बाद में गोरखपुर से प्रकाशित हुई है। सम्पूर्ण पुस्तक में प्रकृति के परिप्रेक्ष्य में वर्णन का वियोग और संयोग पक्ष अपने में न्यारा है। एक छन्द प्रस्तुत है-

गरजत मंद मंद घन घेरे,

बरसत झर झर सलिलि दामिनी दम कि रही चहुं फेरे।

झिल्ली गन दादुर धुनि पूरित पिय पिय पपिहन टेरे।

मत्त मुरैलिन मध्य मोर नचि कूकत धाम मुड़ेरे।

झूलत मुदित प्रिया अरु प्रीतम, दोउ मणि मंदिर मेरे।

अलि मडराहिं सहस सौरभ लहि देति चंबर अलि फेरे।

रंगपाल बारत रति कामहिं उपमा मिलत न हेरे।

श्री जगदंबिका पाल

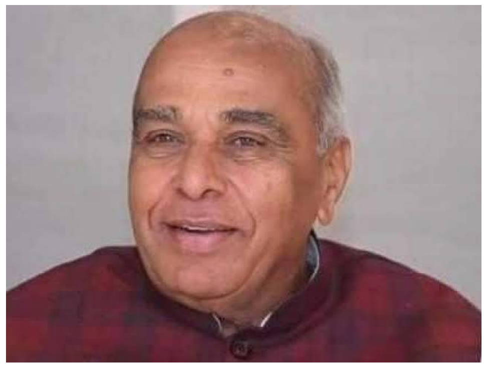

A One Day wonder

जगदंबिका पाल, एक भारतीय राजनेता और वकील हैं। उन्हें उत्तर प्रदेश के एक दिन के मुख्यमंत्री के रूप में भी जाना जाता है। उनका जन्म 21 अक्टूबर, 1950 को उत्तर प्रदेश के बस्ती जिले के गांव भरवालियां में एक सूर्यवंशी क्षत्रिय परिवार में हुआ था। इनके पिता का नाम सूर्यबक्स पाल और माता का नाम मुलराजी देवी है।

जगदम्बिका पाल उत्तर प्रदेश में भारतीय जनता पार्टी के एक नेता हैं। जगदम्बिका पाल 1983 में दो बार उत्तर प्रदेश विधान परिषद के सदस्य थे। ये 1988 में उत्तर प्रदेश के राज्य मंत्री बने। इन्होंने 1993 में उत्तर प्रदेश के बस्ती निर्वाचन क्षेत्र से आई. एन. सी. उम्मीदवार के रूप में विधानसभा चुनाव लड़े और जीत हासिल की। ये अपने प्रतिद्वंद्वी उम्मीदवार भाजपा के विजई सेन को 5345 मतों के बड़े अन्तर से हराया। इन्होंने 1996 में विधानसभा चुनाव में 3165 मतों के अन्तर से प्रतिद्वंद्वी उम्मीदवार बसपा के दयाराम

चैधरी को हराकर फिर से जीत हासिल हुई। जगदम्बिका पाल 2002 में उत्तर प्रदेश के कैबिनेट मंत्री के रूप में कार्यरत रहे। इन्हें 2002 में ही 310: वोट के शेयर के साथ भाजपा के जितेंद्र कुमार को हराकर बस्ती निर्वाचन क्षेत्र में तीसरी बार भी कार्यकाल के लिए चयनित किया गया। ये 2005 में बस्ती के विधानसभा चुनाव में अपने पुराने प्रतिद्वंदी भाजपा के जितेंद्र कुमार से हार गए, इस चुनाव में जितेंद्र कुमार 9780 मतों के अन्तर से एक बड़ी जीत हासिल की थी। इन्हें 2009 में डोमरियागंज निर्वाचन क्षेत्र से आई. एन. सी. उम्मीदवार के रूप में 15वीं लोकसभा के लिए चुना गया। इन्होंने भाजपा के जय प्रताप सिंह को 76,566 मतों के अन्तर से हराया था। आगे इन्होंने 2014 में डोमरियागंज निर्वाचन क्षेत्र में बसपा के मुहम्मद मुकीम को हराया, और भाजपा के उम्मीदवार के रूप में दुबारा से चुने गए। चैथी बार भी बीजेपी ने जगदंबिका पाल को डोमारियागंज से टिकट दिया है। 2019 में जीत करके पहले सांसद है जो इस सीट पर 3 बार से जीत रहे हैं। 2004 में पहली बार इस जगह से चुने गए थे, जिसके सामने कांग्रेस के मोहम्मद मोकिम थे ,जो हार गए थे। 2009 में कांग्रेस की ओर से इसी सीट पर बीजेपी के जयप्रताप सिंह को हराकर सांसद बने थे। 2014 के चुनाव में बीजेपी में वापसी करके बीएसपी के मोहम्मद मुकिम को हराकर फिर से बीजेपी के विश्वास को कायम रखा।जगदंबिका पाल ने उत्तर प्रदेश के मंत्रिमंडल में भी काम किया है।2011 के 3 जुलाई को, भारतीय संसद के लोकसभा के सदस्य जगदंबिका पाल और अन्य सदस्यों ने महुआ डबार में एक स्मारक प्लाक खोली, जहां 1857 की भारतीय विद्रोह के दौरान ब्रिटिश ने 5,000 लोगों की हत्या की थी। उनके पास भारत में किसी भी राज्य के मुख्यमंत्री के रूप में सबसे कम समय की कार्यकाल का रिकॉर्ड है, केवल एक दिन के लिए। वे लोकप्रिय रूप से ष्एक-दिन के मुख्यमंत्रीष् के रूप में जाने जाते हैं। दूरदर्शन पर आज भी अक्सर एक फिल्म दिखाई जाती है श्नायकश् जिसके हीरो अनिल कपूर को एक दिन के लिए मुख्यमंत्री बना दिया जाता है. वर्ष 1998 में उत्तर प्रदेश में कुछ ऐसा ही हुआ, जब प्रदेश के राज्यपाल रोमेश भंडारी ने जगदंबिका पाल को राज्य का मुख्यमंत्री बना दिया, लेकिन कोर्ट के फैसले के बाद उन्हें 31 घंटे के अंदर अपना पद छोड़ना पड़ा था। दरअसल हुआ ये कि 21 फरवरी, 1998 को मायावती ने लखनऊ में एक नाटकीय संवाददाता सम्मेलन को संबोधित किया जिसमें उन्होंने अपनी मंशा साफ कर दी कि वो कल्याण सिंह सरकार को गिराने में कोई कसर नहीं रख छोड़ेंगी।

मुलायम सिंह ने भी उसी दिन कुछ संवाददाताओं से कहा कि अगर मायावती बीजेपी की सरकार को गिराने के लिए तैयार हैं, तो वो भी पीछे नहीं हटेंगे. बिल्कुल यही हुआ और उसी दिन करीब दो बजे मायावती अपने विधायकों के साथ राजभवन पहुंच गईं, उनके साथ अजीत सिंह की भारतीय किसान कामगार पार्टी, जनता दल और लोकतांत्रिक कांग्रेस के भी विधायक थे। राजभवन में ही मायावती ने एलान किया कि कल्याण सिंह मंत्रिमंडल में यातायात मंत्री जगदंबिका पाल उनके विधायक दल के नेता होंगे. उन्होंने राज्यपाल रोमेश भंडारी से अनुरोध किया कि कल्याण सिंह मंत्रिमंडल को तुरंत बर्ख़ास्त करें, क्योंकि उसने अपना बहुमत खो दिया है और उसकी जगह जगदंबिका पाल को मुख्यमंत्री पद की शपथ दिलाएं। उस समय मुख्यमंत्री कल्याण सिंह लखनऊ से बाहर गोरखपुर में अपनी पार्टी के लिए चुनाव प्रचार कर रहे थे. जैसे ही उन्हें ख़बर मिली कि उनको हटाने के प्रयास शुरू हो गए हैं, वो अपने सारे कार्यक्रम रद्द कर 5 बजे तक लखनऊ लौट आए. उन्होंने राज्यपाल को समझाने की कोशिश की कि उन्हें विधानसभा में बहुमत सिद्ध करने का मौक़ा दिया जाए, लेकिन रोमेश भंडारी के सामने उनकी एक नहीं चली। राज्यपाल रोमेश भंडारी ने मन बना लिया था कि वो मुख्यमंत्री कल्याण सिंह को विधानसभा में बहुमत सिद्ध करने का कोई मौक़ा नहीं देंगे. दरअसल ठीक 5 महीने पहले 21 अक्तूबर, 1997 को उत्तर प्रदेश विधानसभा में एक अभूतपूर्व घटना घटी थी। उस समय प्रमोद तिवारी के नेतृत्व में कांग्रेस विधायक विधानसभा अध्यक्ष के आसन के पास पहुंच कर अपना विरोध प्रकट कर रहे थे. थोड़ी देर में वहां समाजवादी पार्टी और बहुजन समाज पार्टी के विधायक भी पहुंच गए और वहां हिंसा शुरू हो गई थी। हालात इतने बिगड़ गए कि विधायक एक दूसरे पर माइक और कुर्सियों से हमला करने लगे. मुख्यमंत्री कल्याण सिंह को सुरक्षा बलों के संरक्षण में सदन से बाहर निकाला गया था. सदन में जो कुछ हुआ उससे राज्यपाल रोमेश भंडारी बहुत नाराज हुए थे. वो राज्य में राष्ट्रपति शासन लगाना चाहते थे लेकिन केंद्र में राष्ट्रीय मोर्चे की सरकार ने राज्यपाल की सिफारिश नहीं मानी थी। केंद्र में मंत्री मुलायम सिंह यादव ने वो सिफारिश मनवाने के लिए अपना पूरा जोर लगा दिया, लेकिन गृह मंत्री इंद्रजीत गुप्ता और स्वयं राष्ट्रपति केआर नारायणन ने उत्तर प्रदेश में राष्ट्रपति शासन लगाने को अपना समर्थन नहीं दिया. अपनी सरकार बचाने के लिए कल्याण सिंह ने उनको समर्थन देने वाले सभी विधायकों को मंत्री बनाने का फैसला किया. नतीजा ये हुआ कि कल्याण सिंह मंत्रिमंडल में 94

सदस्य हो गए थे। मायावती से मुलाक़ात के बाद राज्यपाल रोमेश भंडारी ने नाटकीय फैसला लेते हुए कल्याण सिंह सरकार को बर्ख़ास्त कर दिया. उसके बाद उसी रात यानी 21 फरवरी की रात 10 बजे जगदंबिका पाल को राज्य के 17वें मुख्यमंत्री के रूप में शपथ दिलाई गई।

इस शपथ ग्रहण समारोह में मायावती समेत कल्याण सिंह के सभी राजनीतिक विरोधी मौजूद थे. जगदंबिका पाल पहले कांग्रेस के सदस्य हुआ करते थे, लेकिन फिर वो तिवारी कांग्रेस के सदस्य बन गए थे. वर्ष 1997 में उन्होंने नरेश अग्रवाल और राजीव शुक्ला के साथ मिलकर लोकतांत्रिक कांग्रेस का गठन किया था। जगदंबिका पाल के साथ नरेश अग्रवाल ने उप मुख्यमंत्री के रूप में शपथ ली। राज्यपाल को जगदंबिका पाल को शपथ दिलाने की इतनी जल्दी थी कि राजभवन का स्टाफ शपथ ग्रहण समारोह के बाद राष्ट्रगान बजाना ही भूल गया। अगले दिन लखनऊ में लोकसभा चुनाव के लिए वोट डाले जाने थे, लेकिन विपक्ष के नेता अटल बिहारी वाजपेयी ने राज्यपाल के इस फैसले के विरोध में स्टेट गेस्ट हाउस में अनिश्चितकालीन भूख हड़ताल पर बैठने का फैसला किया। लखनऊ के राज्य सचिवालय में भी अजीब सी स्थिति पैदा हो गई। उत्तर प्रदेश के इतिहास में पहली बार हुआ कि दो लोग राज्य के मुख्यमंत्री पद का दावा कर रहे थे। हालात बिगड़ते देख बीजेपी ने राज्यपाल के निर्णय की वैधता को इलाहाबाद हाईकोर्ट में चुनौती दे डाली। 22 फरवरी, 1998 को बीजेपी नेता नरेंद्र सिंह गौड़ ने इलाहाबाद हाईकोर्ट में राज्यपाल के फैसले के ख़िलाफ याचिका दायर की और अगले ही दिन के 3 बजे हाईकोर्ट ने राज्य में कल्याण सिंह सरकार को बहाल करने के आदेश दे दिए। इस फैसले से राज्यपाल रोमेश भंडारी और जगदंबिका पाल खेमे को तगड़ा धक्का लगा. उन्होंने हाईकोर्ट के इस फैसले के ख़िलाफ सुप्रीम कोर्ट में तुरंत अपील की. जगदंबिका पाल को 31 घंटों के अंदर मुख्यमंत्री के पद से हटना पड़ा था. हाईकोर्ट ने कल्याण सिंह को निर्देश दिए थे कि वो 3 दिनों के अंदर सदन में विश्वास मत प्राप्त करें। 26 फरवरी को हुए शक्ति परीक्षण में कल्याण सिंह को 225 मत और जगदंबिका पाल को 196 विधायकों का समर्थन मिला. इस पूरी प्रक्रिया की निगरानी के लिए सदन में 16 वीडियो कैमरे लगाए गए थे. कल्याण सिंह को सिर्फ 213 विधायकों के समर्थन की जरूरत थी, लेकिन उन्हें इससे 12 मत अधिक प्राप्त हुए। दो दिन के अंदर ही जगदंबिका पाल को छोड़कर लोकतांत्रिक कांग्रेस के सभी विधायक कल्याण सिंह के खेमे में वापस चले गए. और

इस तरह जगदंबिका पाल सिर्फ 31 घंटों तक उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री रह पाए। दिलचस्प बात ये थी कि 5 विधायकों को, जिनमें 4 बहुजन समाज पार्टी के थे, एनएसए यानी राष्ट्रीय सुरक्षा क़ानून के तहत जेल में बंद कर दिया गया था. हालांकि उन्हें सदन आकर विश्वास मत में शामिल होने की अनुमति प्रदान की गई थी। उस समय आरएस माथुर उत्तर प्रदेश के मुख्य सचिव हुआ करते थे. उन्होंने अपनी किताब श्क्राफ्ट ऑफ पॉलिटिक्सरू पावर फॉर पैट्रोनेजश् में लिखा, श्श्जगदंबिका पाल इस बात पर अड़ गए कि जब तक उन्हें हाईकोर्ट के उस आदेश की प्रति नहीं मिल जाती, जिसमें उनकी नियुक्ति को गैर क़ानूनी बताया गया, वो अपने पद से इस्तीफा नहीं देंगे। दूसरी तरफ बीजेपी के कुछ विधायक जगदबिंका पाल को जबरदस्ती मुख्यमंत्री कार्यालय से निकाले जाने पर आमादा थे. कुछ लोगों का मानना था कि कल्याण सिंह के दोबारा मुख्यमंत्री बनाए जाने के बारे में राजभवन से आदेश जारी होना चाहिए। जब मैंने इस बारे में क़ानून अधिकारी एनके मल्होत्रा से सलाह ली, तो उन्होंने कहा कि अगर अदालत ने जगदंबिका पाल की नियुक्ति को अवैध ठहराया, तो इसका मतलब ये हुआ कि कल्याण सिंह का कार्यकाल बीच में टूटा ही नहीं था. इन परिस्थितियों में वो अभी भी मुख्यमत्री हैं।सवाल उठा कि इस संदेश को मीडिया और प्रदेश की जनता तक कैसे पहुंचाया जाए. काफी सोच विचार के बाद इसका हल ये निकाला गया कि कल्याण सिंह मंत्रिमंडल की बैठक बुलाएं और उसके बाद एक प्रेस नोट जारी हो, जिससे सारी स्थिति स्पष्ट हो जाए. कल्याण सिंह इसके लिए तुरंत तैयार हो गए और जगदंबिका पाल भी मुख्यमंत्री के कक्ष से बाहर आ गए। कल्याण सिंह के दोबारा सत्ता में आने के 3-4 दिनों के अंदर ही राज्यपाल रोमेश भंडारी प्रदेश की ग्रीष्मकालीन राजधानी नैनीताल के लिए रवाना हो गए. जब वो कार से नैनीताल जा रहे थे, तो बीजेपी के नाराज कार्यर्ताओं ने उनकी कार को नैनीताल की सीमा के पास रोक कर उसे आगे नहीं जाने दिया। स्थानीय प्रशासन ने भी ये कह कर अपने हाथ खड़े कर दिए कि उनके पास राज्यपाल के आने की कोई पूर्व सूचना नहीं थी. रोमेश भंडारी ने वहीं से नाराज होकर मुख्य सचिव आरएस माथुर को फोन मिलाया।उसके बाद माथुर के पास कल्याण सिंह का फोन आया. उन्होंने माथुर से चिल्ला कर कहा कि इस नौटंकी को तुरंत रोका जाए. राज्यपाल के पद की गरिमा का हर हालत में आदर किया जाना चाहिए. आनन-फानन में प्रशासन ने राज्यपाल भंडारी के आगे बढ़ने का रास्ता साफ किया। राष्ट्रपति नारायणन ने प्रधानमंत्री इंदर कुमार गुजराल को पत्र लिख कर

राज्यपाल भंडारी पर आरोप लगाया कि उन्होंने उनकी इच्छा के विरुद्ध कल्याण सिंह सरकार को बर्ख़ास्त किया था। रोमेश भंडारी ने अपने पक्ष में दलील देते हुए कहा था कि उनसे पहले के राज्यपाल मोती लाल वोरा ने भी बिना विधानसभा का सत्र बुलाए मुलायम सिंह सरकार को बर्ख़ास्त कर दिया था. बाद में न्यायपालिका के हस्तक्षेप से कल्याण सिंह के दोबारा मुख्यमंत्री बनने का रास्ता साफ हुआ था। राजनीति की विडंबना देखिए कि 2014 में इन्हीं जगदंबिका पाल ने कांग्रेस से इस्तीफा दे कर बीजेपी के टिकट पर डुमरियागंज से चुनाव लड़ा और सांसद भी बने. 2019 में भी वो डुमरियागंज के सांसद बनने में सफल रहे थे।

जगदंबिका पाल की धर्म पत्नी श्री स्नेहलता पाल है जो पेट्रोल पंप की मालिक हैं। उनके 3 बच्चे हैं, 1 बेटा और 3 बेटियाँ है। श्री जगदंबिका पाल आज सूर्यवंश का गौरव बढ़ा रहे हैं।

शिलालेख

भेटाकलापानी ताम्रपत्र का पंक्तिबद्ध पाठ-

कल्याणश्री राजा लक्ष्मणचन्द्रेण संकल्पं ॥ महानन्दाय भि सजे ग्रामो दोलक संज्ञकः। किरयेन्दु वासह कल्याणपाल पूर्वे पि दत्तः (जेहुतः) । महानन्दाय भिषजे तनभूयो कल्याणपालोपि श्री

ददत – 3 दशरथ 3 पाये पाल रज्वार महेन्द्रपाल कवूर (कुंवर) सपरि आवार चिरं जयतू ॥ श्री रज्वार पाय ले दउलो दत्त करि दिनु महानंद वैद्य ले पायो सर्वकर अकर अक र अकर सर्वदोष विसुध करि पायो भात बाकरो तोडि पायो भाठ बुडो रौल्या देउल्य बजन्या बखर्या घोडालो कुकुरालो तोडि पायो सुंदर पाल। भैरो पाडे लै जसि सेवा करि तसि सेवा कर्नि उसोइ भौडया ल कि दिलशा कनि (कर्नि)। साक्षी धरति धर्मराजा चंद्र सूर्यात साक्षि म नि गुसाइ चतरु गुसा भोगि गुसाइ बासु पंज्यु नरि ऊझा साल दिगारि कुमेर भाट महराज पोखरया राम उपरेति कल्याणपाल रज्वार की संतति लै भुचाउनि माहनद कि संतति लै खानु श्री शाके 1525 समये वैशाख सुदि त्रयोदस्या तिथौ बुध वा सरे हस्तनक्षत्रे लिखित साक्षि संभुजोइसि ॥ कडारी-तं राम सुनर शुभ मस्तु।

सारांश-

यह ताम्रपत्र पिथौरागढ़ के खड़ायत पट्टी के भेटा-भौड़ा गांव से प्राप्त हुआ, जिसे हस्त नक्षत्र और बुधवार 23 अप्रैल, 1603 ई. को प्रदोष व्रत के दिन निर्गत किया गया था। यह ताम्रपत्र चंद राजा लक्ष्मीचंद (1597-1621) और अस्कोट राजपरिवार के कल्याणपाल रजवार का एक संयुक्त ताम्रपत्र है, जिसे महानंद वैद्य को निर्गत किया गया था। इस ताम्रपत्र में चंद कालीन करों भात बाकरो (चावल-बकरा भोज), बजन्या (संगीतकार), बखरया (गायक), घोडालो (घोड़ों के लिए) और कुकुरालो (कुत्तों के लिए) आदि का उल्लेख किया गया है। इस ताम्रपत्र साक्षियों में चंद राजपरिवार के गुसाई नामान्त वाले सदस्यों के अतिरिक्त चंद राजा लक्ष्मीचंद के प्रधान और गंगोली के वासु पंत का उल्लेख किया गया है। इस ताम्रपत्र में दक्षिण-पूर्वी अस्कोट क्षेत्र में निवास करने

वाले क्षत्रियों दिगारी और पोखरिया का उल्लेख स्थानीय इतिहास की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

गनाई-गंगोली ताम्रपत्र का पंक्तिबद्ध पाठ।

ॐ श्री शाके 1532 मासे मार्गशिर शुदि द्वितीय बुधे (1)

श्री राजाधिराज पृथ्वीचन्द्र रजवार पाय ले माया चितो इ विशु

उपाध्या अथिगाउ माज अधाली 1 तमोता किनी (1) दिनी (1)

सर्वकर अकारी सर्वदोष निदोषी कै गनाई टिपाई (1)

उइ अधालि लगनि गाउ की बगड़ी लेक की इजर कै पाई (1)

तथा शार्दूल गुसाई सुपाय ले दिनि।

पिपल मुडतलाऊं तिरछि जदत करि पाई (1)

शाकि चार चौधरिक, मुरु गुशाइ संग्राम राउत षिउराज मतोषुलुमन (1)

लिखितं विशोनाथ पंडितेन (1) शुभ मस्तु (1)

पृथ्वीचन्द्र रजवार ले दिनी वालिक.... ले पाई अढ़ाली (1)

शीर्ष पर पृथ्वीचन्द्र जयश्री 1528 (1) शके महेश पादौ (1)

सारांश-

यह ताम्रपत्र 17 नवम्बर, सन् 1610 को बुधवार और ज्येष्ठा नक्षत्र में निर्गत किया गया था, जिसे अस्कोट राजपरिवार के पृथ्वीचंद रजवार ने विशु उपाध्याय को निर्गत किया था। इस ताम्रपत्र में उल्लेखित तमोटा शब्द को विद्वान ताम्र धातु के बर्तन बनाने वाली स्थानीय टम्टा जाति से संबद्ध करते हैं। इस ताम्रपत्र के साक्षियों में चार चौधरियों में संग्राम रावत का नाम ही स्पष्ट हो पाया है। अठिगांव या गणाई गंगोली के निकटवर्ती बांस-पटान और रावतसेरा में रावत क्षत्रिय निवास करते हैं।

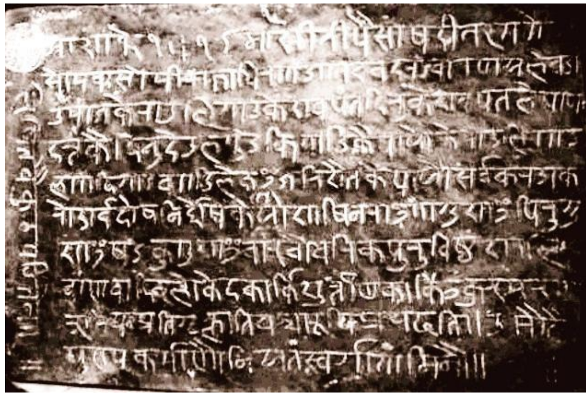

चित्र 1.

यह ताम्रपत्र 21 अप्रैल सन् 1597 ई. को सोमवार के दिन निर्गत किया गया था, जिसे आनन्द रजवार ने किरौली और लगदि गांव को रौत में केशवपंत को देने हेतु निर्गत किया था। किरौली गांव बेरीनाग तथा लग गांव थल तहसील का एक राजस्व ग्राम है। केशवपंत ने यह ताम्रपत्र स्थानीय नाग देवताओं पिंगलीनाग और कालीनाग की पूजा-पाठ हेतु प्राप्त किया था। इस ताम्रपत्र के साक्षियों में चंद राजा रुद्रचंद के पौत्र नारायणचंद के अतिरिक्त स्थानीय चार चौधरियों कार्की, बाफिला और बिष्ट का भी उल्लेख किया गया है। वर्तमान में भी किरौली गांव के निकटवर्ती गांवों में कार्की, बाफिला और बिष्ट जातियों के लोग निवास करते हैं।

चित्र 2. कत्यूरी राजवंश का भूमिदान का बेलसारी ताम्रपात्र।

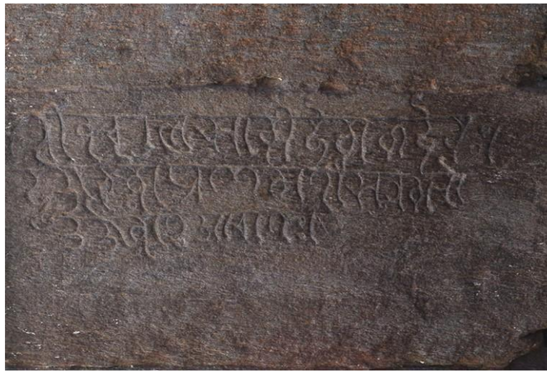

चित्र 3. कटारमल सूर्य मंदिर का कोशी शिलालेख।

राजा अजयपाल का शिलालेख।

राजा अजयपाल का शिलालेख,
उकू जौलजीवी के पूर्व में काली पार नेपाल
शाके 1160

पंक्ति 1 .... अजैपाल राजाधिराजः तामानेतुं प्रतापी { नृप
परि}षदीयः सत्यसंधा विधाय
सख्ये जित्वा कृतार्थो भवति गुणगणैः सत्यमेतद्वदन्ति।

पंक्ति 2
सत्यासत्य विवेकवान .... विजयते यो सौ पृथिव्या राजर्षे गुणमाकल्य
कलया गांधेय गांगेयवत् .... वा .... वासरं तस्याज्ञाकर ....
....

पंक्ति 3
3. यः स्त्री रूप निरीक्षणेपि विमुखो लज्जाकुलो वर्तते।
यत्सौन्दर्य निरीक्षणेन गिरिजा भूत्वा हृयामास्पदं
भर्त्ता सार्द्ध मगाद् हिमालयगुहां वासार्त्थिनी निर्ज्जने
लक्ष्मी पंकजमाश्रयत्यनुदिनं तापान्विता लज्जया
सेयं धर्मपरायणा विजयते येतल्लदेवि सदां।
पंक्ति 4
राज्ञी शील निकेतनं स्मरवधू लज्जाकरी शैलजा
प्रीत्यैस्थानमकल्पयच्छिवगुरो कारुण्य तारुण्य भूः
विष्णोः श्रीरिव नागपाल नृपतेर्गंगा यथा सन्तनोः
सा साध्वी पतिदेवता विजयते लोमल्ल देवी भुवि
पंक्ति 5
वीतानागत सर्व्ववृत निपुणामालोक्य लोकेश्रुतां
देवी दीनदयारस्येव गिरिजा लज्जाय नम्रानना
दाक्षिण्योपि सुलक्षणा बहुगुणा मज्जन्ति लज्जाम्बुधौ
सेयं सर्वगुणाश्रया विजयते सोमल्ल देवी चिरम्
पंक्ति 6
– – – – – – – – सहितं तेजोमितं निर्मलं
दृष्ट्वा शीत रुचिः कलंक सहितो वारान्धिौ मज्जति
दीप्तस्यापि यदीय वक्त्रकमलं प्राप्यं जलेशीतले
मग्नं तत्कुरुते तनोति विमलं सौन्दर्य शीलास्पदम्
पंक्ति 7
राज्ञी तथा सकल भूतल भूमिपालः
सीमन्तिनी विनयविस्तृत कीर्तिपूरा।
दानादि धर्म्मनिरता शिवभक्ति चिन्ता
जीयाच्चिरं बहुगुणा भुविरल्लदेवी
पंक्ति 8
यस्यानृत्यकला निरीक्षणमुदा स्वर्ग्गं परित्यजन्ति
– –शकोमाजनि नागपाल नृपते रूपेण भूमंडले
यद्गीतं स्वरसंगतं श्रुतिगुण ग्रामादि युक्तं शुभं
गंधर्व्वा निभता विपद्विषयिगाः शृणण्वन्ति विद्याधराः
पंक्ति 9
लक्ष्मी सागर सभवापि चटुलां शान्ता सदा रुक्मिणी?
नित्यं शंकरवल्लभा पतिहिता वाग्देवता याचिका
एवं सा वर कामिनी विजयते त्रैलोक्य साराकृतिः
स्तुत्यास्यान्नृप नागपाल दयिता श्रीरल्लदेवी यथा
नागपाल यशो वंश चन्दरूपकृदम्बरे
भ्रमत्यन्त दिगन्तस्य लक्षं नक्षत्र तंडुला ।।

1160 शाके निर्मित

रंजना लिपि
सौजन्य डा महेश्वर प्रसाद जोशी, हरिहर भवन
अगस्त 1976

भारती पाल का शिलालेख।

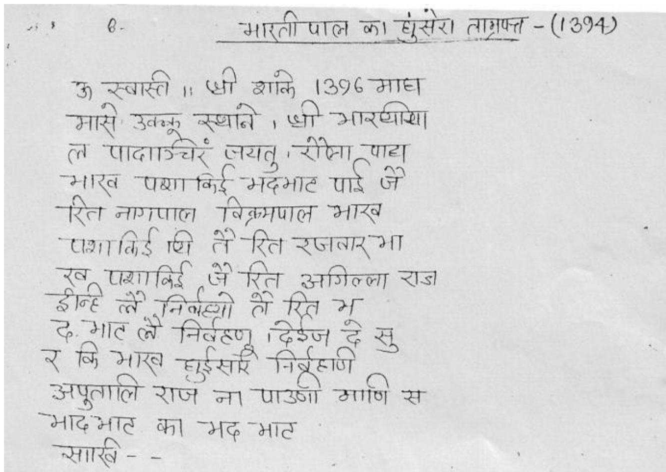
8- भारती पाल का हुंसेरा ताम्रपत्र - (1394)

ॐ स्वास्ती ।। श्री शाके 1396 माघ
मासे उक्कू स्थाने । श्री भारथीपा
ल पादार्चिरं जयतु । रीठा पाधा
भारख पशा किई भदभाट पाई जै
रित नागपाल विक्रमपाल भारख
पशाकिई थि तैं रित रजवार भा
रख पशाकिई जैं रित अगिल्ला राजा
ईन्हि लै निर्बह्यो तैं रित भ
द. भाट लै निर्बहणु । देईज दे सु
र कि भारख हुईसारि निर्बहणि
अपुतालि राज ना पाउणा माणि स
भादभाट का भद भाट
सारिव - -

पांडुकेश्वर के शिलालेख के चित्र।

कटारमल मंदिर की दीवारों पर तीन वाक्य का शिलालेख।

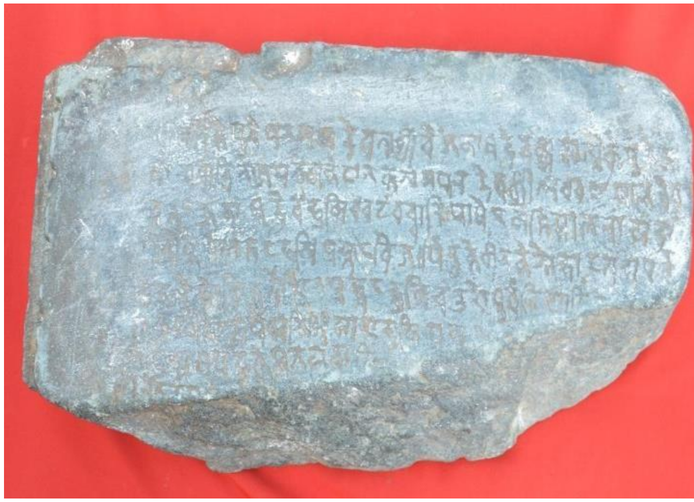

देवनागरी में आठ पंक्तियां वाला शिलालेख

जिसमे से चार पंक्तियां पूरी हैं, अगली तीन पंक्तियां आधी क्षतिग्रस्त हैं और अंfतम पंक्ति पूरी तरह क्षतिग्रस्त है। संभवतः किसी मंदिर पर लगाया गया हो। उत्तराखंड के बैजनाथ मंदिर में पाए गए 11वीं-12वीं शताब्दी के शिलालेख के पीछे क्लैंप के निशान दिखाई देते हैं।

इसके सामने वाले भाग पर देवनागरी लिपि में तीन पंक्तियां का शिलालेख अंकित है। यह उत्तराखंड के बागेश्वर मंदिर में पाया गया।

सत्रह पंक्तियों का शिलालेख जो ऊपर से टूटा हुआ है, किसी को दान देने की घोषणा करता है। उत्तराखंड के बैजनाथ मंfदर में मिला है।

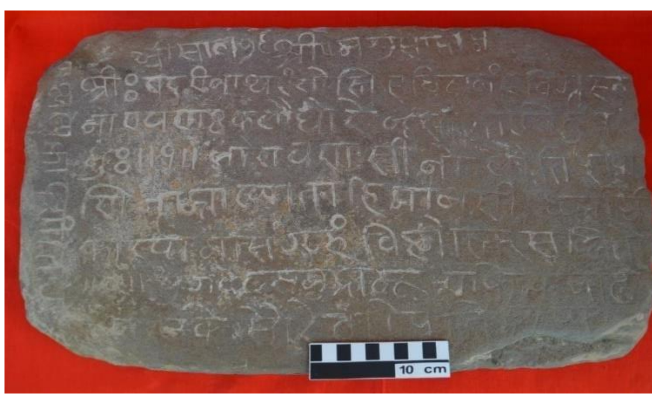

देवनगरी विशेषता में नौ लाइन शिलालेख, एक पंक्ति में आठ लाइनें और नौवीं रेखा को अलग कर दिया गया। यह द्वारहाट में पाया गया।

प्रारंभिक नागरी लिपि मे लिखा सत्रह पंक्तियों का एक शिलालेख किसी को दिए गए दान के बारे में बताता है। उत्तराखंड के बैजनाथ मंfदर में पाया गया।

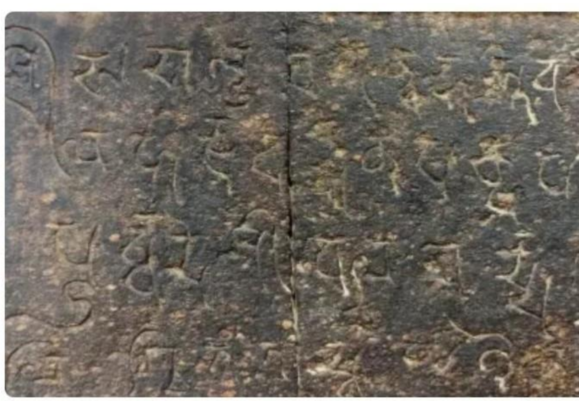

जागेश्वर धाम के मंदिरों की दीवारों पर उकेरी गई प्राचीन लिपि

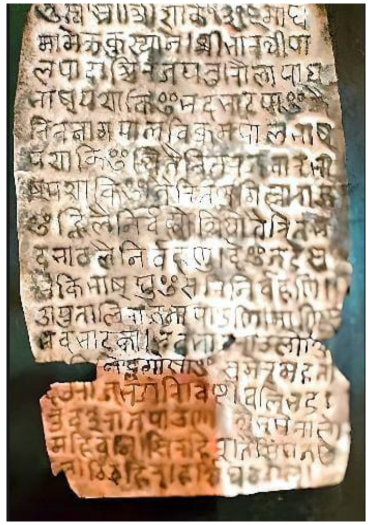

कुमाऊं भाषा में लिखित एक शिलालेख।

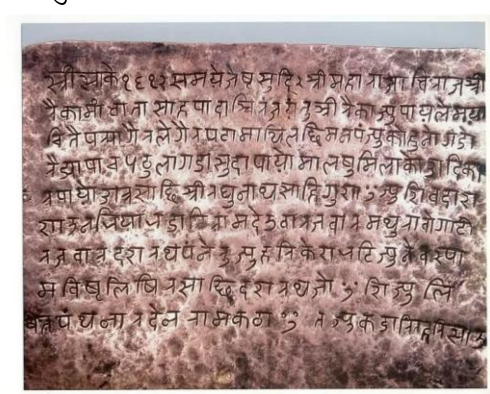

संवत 1612 (शके 1612) (या 1747 विक्रम संवत) में डोटी के राजा रायका मांधाता शाही द्वारा देवनागरी लिपि का उपयोग करते हुए पुरानी मल्ल भाषा में तांबे का शिलालेख।

सम्राट पद्मतदेव का पांडुकेश्वर शिलालेख

श्रीमकार्तिकेयपुरात सर्वसुरासुर मुकुट कोटि सन्निविष्टनिकट माणिक्य किरण विच्छूरित नखमायुशोक्तखातिमिरपतल प्रभाव दानिताशय समयाक्ति महीयसो भगवत्श्चंद्रनेश्वरस्य चरणकमल रजः पवित्र निज-मिव तनुमुनाजितवारोजिता नेकरी-पुचक्र प्रतिष्ठित प्रताप भास्करभासित भुवनाभोग विमव पावक शिखावि विलेन सकल कलिकालंक समुद्रभूतो तपोबदात् देहः शक्तित्रय प्रभाव अंबु हितहितहेतिर दानवमसत्यशोयं शत्रुघ्यक्षमाद्यपरिमित गुणगुणकलित सागर दिलीप मांधात्री-धुन्धुमर भागीरथ प्रभूति कृतयुग भूपाल-चरितसागरस त्रैलोक्यानंदजननो नंदादेवी चरणकमललक्ष्मीतः समधिगाताभिमत्बरप्रसाद द्योतित निखिलभुवनावित्यः बोसलो-नादित्यः तस्य पुत्रस तत्पादानुध्यातो राशिमहादेवी सिधावली देवी तस्यामुत्पश्चः परममहेश्वरः परमब्रह्मण्यो परमभट्टारक महाराजाधिराज भगवान श्रीमविच्छत्देवः तस्य पुवस तत्पावनुष्यातो राशि महादेवी श्रीशिशुदेवी तस्मामुत्पन्नः परममहेश्वरः परमब्रह्मण्यो दीनानायकृपनातुर शरणगतवत्सलः प्राच्योदिच्यप्रतिच्यादक्षिनात्य-द्विज्वर मेनानाम् बक्तात हेमदान (1मृता) दितकरः सर्वारातिचक्रप्रमर्दनः कलिकल्पमातांगसूदनः कृतयुगधर्मावतारः परमभट्टारक महाराजाधिराजपरमेश्वर श्रीमद शतदेवः तस पुत्रस तत्पादनुष्यतो राशी महादेवी

श्रीपद्मल्लदेवी तस्यामुत्यशः परममहेश्वर परमब्रह्मण्यः परमभट्टारक महधिराज भगवान श्रीमत्पघटदेवः कुण्लि।

तंवरहणपुर विषये समुपगतान सर्वानव नियोगस्थान राजराजम्यकरापुन्न राजमात्य सामंत महासामंत महाकर्ता कृतिक महादंडनायक महाप्रतिहार महासामंतधिपति महाराज माता शरभंग कुमारमात्योपरिक दु:साध्यसाधनिक दोवाप्राधिक चौरोद्धारनिक शालकिक गोल्मिक तदारक विनीक पट्टकाप-चारिक धभंगाधि हस्तकृत्य शोस्त्रबलव्याप्रुतक दूतप्रेषणिक दाण्डिक दण्डपाशिक विषयव्यातक गामाधिक खाद्रिङ्गक स्वरमानक राजस्थानीय विषयपति भोगपति काण्डपति नरपत्यश्वपति बान्ध्ररक्षास्थानाधिकृत वात्रपाल कोट्टपाल घट्टपाल क्षेत्रपाल सिरचनपाल ठक्कुर महामनुष्य किशोर-वडवा-गो-महिष्यधिकृत भट्ट महत्तम-भीर वाणिक श्रेष्ठि पुरोगन अष्टादशप्रकृत्यधिष्ठानियां जश किरात ब्रविद कलिंग गोड़ होनान्यभेदन' अलमंडल पर्यन्तान सर्वसमावासन सर्वजनपदम् भटचत्।

हिंदी अनुवाद:

श्रीमान कर्तिकेरायपुर के निवासी, जिनके चरणों में सभी देवता और असुर अपने मुकुटों की कोटियों के साथ नतमस्तक हैं, जिनके नखों की माणिक्य-जैसी किरणें अंधकार को नष्ट करती हैं, जिनका प्रभाव असीम है और जो दान के माध्यम से सभी दिशाओं को प्रकाशित करते हैं, वे परम शक्तिशाली भगवान चंद्रनेश्वर के चरणकमलों का पवित्र रज (धूल) अपने शरीर पर धारण करते हैं। वे मुनियों द्वारा पूजित, शत्रुओं को परास्त करने वाले, सूर्य के समान तेजस्वी, विश्व को आलोकित करने वाले, और कलियुग के दोषों को नष्ट करने वाले हैं। उनके तप और शक्ति के प्रभाव से दानवों का नाश होता है, और वे असीम गुणों के सागर हैं, जिनका यश उनके पूर्वज दिलीप, मांधाता, और भागीरथ जैसे सत्ययुग के राजाओं के समान है।

वे त्रिलोक को आनंद देने वाले, नंदादेवी के चरणकमलों की सेवा से सभी इच्छित कृपा प्राप्त करने वाले, और समस्त विश्व को प्रकाशित करने वाले हैं। उनके पुत्र, जो उनके चरणों का ध्यान करते हैं, राशि महादेवी सिधावली देवी से उत्पन्न हुए। उनसे परम महेश्वर, परम ब्राह्मण-भक्त, महाराजाधिराज भगवान श्रीमान विंतदेव उत्पन्न हुए। उनके पुत्र, जो

उनके चरणों का ध्यान करते हैं, राशि महादेवी श्रीसिंधुदेवी से उत्पन्न हुए। वे परम महेश्वर, परम ब्राह्मण-भक्त, दीनजनों पर कृपा करने वाले, शरणागतों के प्रति स्नेह रखने वाले, उत्तर और दक्षिण के श्रेष्ठ ब्राह्मणों और मैनानों को स्वर्ण दान देने वाले, समस्त शत्रु-चक्र को नष्ट करने वाले, और कालीलुष्मातंग (दुष्टों) का संहार करने वाले हैं।

कृतयुग के धर्म के अवतार, परम भट्टारक, महाराजाधिराज परमेश्वर श्री पद्मातदेव है। उनके पुत्र, जो उनकी स्मृति से उत्पन्न हुए, राशि महादेवी श्री पद्मल्लदेवी से उत्पन्न हुए, परम महेश्वर, परम ब्राह्मण, परम भट्टारक, महाराजाधिराज भगवान श्री पघटदेव। तंवरहणपुर क्षेत्र में, सभी राजा, मंत्रियों, सामंतों, महासामंतों, महाकर्ताओं, महादंडनायकों, महाप्रतिहारों, महासामंताधिपतियों, माताओं, शरभंग, कुमारमात्यों, उपरिकों, दुराध्यक्षों, चौरोद्धारकों, शालकियों, गोल्मिकों, तदारकों, विनीकियों, पट्टकापचारिकों, धभंगाधियों, हस्तकृत्यकों, शस्त्रबलव्यापृतकों, दूतप्रेषणिकों, दाण्डिकों, दण्डपाशिकों, विषयव्यातकों, गामाघिकों, खाद्रिङ्गकों, स्वरमानकों, राजस्थानीयों, विषयपतियों, भोगपतियों, काण्डपतियों, नरपतियों, अश्वपतियों, बान्ध्ररक्षास्थानाधिकृतों, वात्रपालों, कोट्टपालों, घट्टपालों, क्षेत्रपालों, सिरचनपालों, ठक्कुरों (क्षत्रियों), महामनुष्यों, किशोर-वडवा-गो-महिष्यधिकृतों, भट्टों, महत्तमों, भीरों, वाणिकों, श्रेष्ठियों, पुरोगनों, अष्टादशप्रकृत्यधिष्ठानियों, और किरात, ब्रविद, कलिंग, गोड़, आदि विभिन्न जनपदों के लोगों को संबोधित किया गया।

पांडुकेश्वर शिलालेख

बद्रीनाथ के मंदिर के पास पांडुकेश्वर के मंदिर में चार ताम्रपत्र हैं। इनमें से दो में बागीश्वर शिलालेख में वर्णित पांचवें, छठे और सातवें राजाओं के नाम हैं। एक ताम्रपत्र में राजाओं की तीन पीढ़ियों का वर्णन है। दैषतदेव के पुत्र पद्मदेव का उल्लेख चौथी पीढ़ी में किया गया है और उन्होंने कहा है कि उनका राज्य किरात, द्रविड़ और उदर देशों तक फैला हुआ था और खस आदि देशों को भी उन्होंने अपने अधीन बताया है। संवत 25 है और राजधानी कार्तिकेयपुर है। दूसरे ताम्रपत्र में एक पीढ़ी और बताई गई है, अर्थात् सुभिक्षराजदेव को राजा पद्मदेव का पुत्र कहा गया है। उन्होंने अपने नगर का नाम सुभिक्षपुर बताया है, जिससे प्रतीत होता है कि इस नगर की स्थापना संभवतः इसी राजा ने अपने नाम पर की होगी। उनके अधीन प्रान्तों के नाम वही पुराने हैं, जो उनके पिता पद्मदेव के ताम्रपत्र में दर्ज हैं। इसमें उल्लेखित संवत 4 है।

तीसरे ताम्रपत्र पर राजा निम्बर्टदेव का नाम अंकित है। उनके पुत्र इंगदेव या इष्टतरन्देव और उनके पुत्र ललितसूरदेव। ये तीनों राजा बागीश्वर के आठ राजाओं में से हैं। इसमें

अन्य बातें राजा सुभिक्षदेव के ताम्रपत्र जैसी हैं। संवत 22 है। चौथे ताम्रपत्र में राजाओं के नाम तीसरे ताम्रपत्र के समान हैं प्लेट। उपरोक्त देशों के अलावा वह अपने राज्य का विस्तार दो और देशों, अंगा और बालोन्गारा तक होने का दावा करता है। इसमें उल्लेखित संवत 21 है।

एक ताम्रपत्र में उल्लेख है कि ललितसूरदेव ने अपनी रानी श्यामादेवी के कहने पर राज्य पर विजय के 21वें वर्ष में नारायण भट्टारक को गोरुन्नासरी के कुछ गांव दिए थे। इसमें राज्यमंत्री का नाम बीजक, युद्धमंत्री का नाम आर्यत तथा लेखक का नाम गंगाभद्र लिखा है।

दूसरे ताम्रपत्र में भी 22वें विजय-वर्ष के अवसर पर नारायण भट्टारक को कुछ गांव दिए गए हैं और उसमें इस भट्टारक की कीर्ति इस प्रकार गाई गई है। "गरुड़ के आश्रम के विद्वान जिनकी पूजा करते हैं।" ऐसा प्रतीत होता है कि गरुड़ के आश्रम में ऐसे विद्वान रहते थे जो विद्याध्ययन में तत्पर थे और नारायण भट्टारक उनके गुरु थे। अलखनंदा के तट पर स्थित तपोबन गांव की जागीर उन्हें दी गई है। यहां उन्हीं राजाओं के हस्ताक्षर हैं जिनके नाम ऊपर बताए गए हैं। इन ताम्रपत्रों में तीन नाम मिलते हैं (1) राजा निमवर्तदेव और उनकी रानी नाथूदेवी (2) राजा इष्टांगदेव और उनकी रानी दिशादेवी (3) राजा ललितसूरदेव और उनकी रानी श्यामादेवी।

ये सभी ताम्रपत्र कार्तिकेयपुर की मुहर से जारी किये गये हैं। अन्य दो ताम्रपत्रों में अन्य राजाओं के नाम हैं जिन्होंने काली कुमायूं के बालेश्वर के मंदिर को भी भूमि दान की थी। इनमें से भी एक कार्तिकेयपुर से जारी किया गया था। तिथि इस प्रकार है विजय संवत 5 के पांचवें वर्ष में यह शिलालेख ईशाल के क्षेत्रों के प्रबंधकों के नाम से है। दैत्यदेव ने इसे जारी किया और यमुना गांव की जागीर विजनेश्वर को प्रदान की। इस ताम्रपत्र में सलौनादित्य और उनकी रानी सिंधुदेवी के नाम हैं जिनके पुत्र दैत्यदेव थे। इसमें राज्य मंत्री का नाम भट्ट हरिशर्मा, युद्ध मंत्री का नाम नंदादित्य और लेखक भद्र का नाम है और शिलालेख बालेश्वर के मंदिर में रखा गया है। दूसरा ताम्रपत्र जो विजय वर्ष 25, संवत 25 दैत्यदेव के पुत्र पद्मदेव ने द्रुमती के चारों गांवों की जागीर बद्रीनाथ के नाम पर दान कर दी थी। इसमें उपरोक्त नामों के अतिरिक्त दैत्यदेव की रानी पद्ममल्लदेवी का नाम भी आता है।

राज्यमंत्री का नाम भट्टधान, युद्धमंत्री का नाम नारायणदत्त तथा लेखक का नाम नंदभद्र है। यह ताम्रपत्र पांडुकेश्वर में रखा हुआ है।

सुभिक्षपुर की मुहर वाला ताम्रपत्र विजय के चौथे वर्ष में जारी किया गया था। इसमें दाता पद्मदेव का पुत्र सुभिक्षराजदेव है। इसे तंगणपुर और अतंरंग के अधिकारियों के नाम से जारी किया गया है। इसमें विद्मलक नामक ग्राम, कुछ अधिक भूमि सहित, नारायणभट्टरक को और गंगा के उत्तर में स्थित रानापाली नामक ग्राम ब्रह्मेश्वर भट्टारक को दिया गया है। राज्य-मंत्री कमलापति, सेनापति ईश्वरदत्त और लेखक नंदभद्र हैं। सभी नाम इस प्रकार पाए गए हैं: (i) सलौनादित्य और उनकी रानी सिंहावलीदेवी; (2) इच्छादेव, उनकी रानी सिंधुदेवी; (3) दैषतदेव, उनकी रानी पदमल्लदेवी; (4) पद्मतदेव, उनकी रानी ईशल्लदेवी (5) सुभिक्षराजदेव।

इनमें वर्णित तिथियाँ राजाओं के सिंहासनारूढ़ होने की तिथियों से शुरू हुई प्रतीत होती हैं। सटीक वर्ष का पता नहीं लगाया जा सकता। इनमें विक्रम संवत नहीं दिया गया है।

इनमें पांडुकेश्वर का ताम्रपत्र सबसे बड़ा है। यह छोटे बच्चों की लिखने की स्लेट के आकार का है। स्लेट के हैंडल के स्थान पर नंदी खुदा हुआ है। यह ताम्रपत्र ठीक से लिखा हुआ नहीं है। इसकी पंक्तियां स्पष्ट हैं। लिपि घुमावदार पाली है। इस स्थान के लोकप्रिय आयुक्त श्री रामसे ने बंगाल के सुप्रसिद्ध पुरातत्ववेत्ता डॉ. राजेंद्र लाल मित्रा को इस स्थान का एक ताम्रपत्र भेजा था। चूंकि यह शिलालेख बहुत ऐतिहासिक महत्व का है, इसलिए इसका पूरा संस्कृत-पाठ और इसका हिंदी संस्करण यहां दिया गया है। इसमें राजपुत्र, कुशली (जिसका अर्थ कुश के वंश से है), पृथु जो इक्ष्वाकु वंश के प्रतापी सूर्यवंशी राजा थे का उल्लेख भी मिलता है।।

पांडुकेश्वर का बड़ा शिला-लेख।

(1) स्वस्तिश्रीमकर्तितकेयपुरात्सकलामर्दिति तनुजमनुज भक्तिभाव भारभरणमिता मितोत्तमांग सन्दि विकटमुकुट किरीटविट्दो कोटिशो लोकता—

(2) नाना (ताता) यक प्रदीप दीपदिधिति पणमदरक्त चरणकमलामलविपुल बहुल किरणकेशरासा रसारिता शेषविशेष मोशिघंटमस्तेजसस्स्वर्णी धौतजताजूटस्य—

(3) भगवतो धुर्जतेः प्रसादन्निजभुजो पारजीजौज्जित्यनिर्जित रिपुतिमरल्बधोंदय प्रकाशोदय दक्षिणाय सत्य सत्वशील शौच शौर्योदार्यगांभिर्यमर्याद्योन्मुखश्चर्य—

(4) कार्यवैद्यादि गुणगानलंकृतशरीरः महासुकृति संतबीजावतारः कृत युगागम भूपाल ललितकीर्तिः नंदा भगवतीचरणकमल कमलासनाथमूर्तिः श्रीमम्बरस्तस्यत्—

(5) नयस्तत्पादानुध्यातो राज्ञी महादेवी श्रीनाथुयुदेवी तस्यामुत्पन्नः परममहेश्वरः परमब्रह्मण्यः शीतकृपाणाधरोत्कृतमत्ते भकुंभकृष्टोत्कृष्ट मुक्तालीयशः पादका—

(6) छायाचंद्रिका पहसित तारागणः परमभट्टारक महाराजाधिराज भगवानश्रीमदिष्टगणदेवस्तस्य पुत्रस्तत्पादानुध्यातो राज्ञी महादेवी श्रीवेगदेवी तस्यामुत्पन्नः परममहेश्वरः

(7) परमब्रह्मण्यः कलिकालंक पंकतंक मग्नधर्नयुद्धाधारितधौरेय वरवराहचरितः सहजमतिविभव विभुविभूतिस्तगीताराचकः प्रतापदहनः। अतिवै भवसंहाररम्भ –

(8) संभृतभीम भुकुटि कुटिल केसरिस्ता भीतभिता रतिभाकलभाभरः अरूणारुण कृपाणबाण गुणप्रांगण हठकृष्टोत्कृष्ट सलिल जयलक्ष्मीप्रथम समालिंगनावलोकन—

(9) वाल्क्ष्य सखेद सुरसुन्दरी विधुतकरस्बलद्बलयकुसुमप्रकर प्रकीर्णा वन्त्ससंवर्द्धितकीर्तिबीजः पृथिवीदोर्दण्ड साधित धनुर्मण्डलबलाद्बलाष्टम्भभाष—

(10) वशीभूत गोपालानिश्चलीकृत धराधरेन्द्रः परमभट्टर्कमहाराजाधि भगवान श्रीमल्ललितशूरदेवकुश्ली अस्मिन्नेव श्रीमर्तक्तिकेयपुरविषये समुपगतन—

(11) सर्वान्वनियोगस्थान राजराजतकराजपुत्रसृष्टामात्य सामन्तमहासा- मंत्तक्कुरमहामनुष्य महाकर्तृकृतिक महाप्रतिहारमहादण्डनायक महाराजमातरशर—

(12) भंगकुमारमात्यापरिक दुस्साध्यासाधनिक दशापाराधिक चौरोडानिक शोलिक्सशोलमिक तदाकारक विनीयुक्तक लेपिकापचारिकाशेषभंगाधिकृत हरत्यश्वोस्त्र—

(13) बलव्याप्रुतकभूतप्रेषणिक दण्डिकादण्डगशिक गमागामिशार्डिंगकाभित्वर मानकराजस्थानीय विषयपतिभोगपतिनरपत्यश्वपति राद्राक्षप्रतिशूरि—

(14) कस्थानाधिकृतवर्त्मपालकौट्टपालपट्टपाल क्षेत्रपाल श्र्प्रांतपालकिशोरव-रवगोमहिष्याधिकृतभट्टमहत्तमाभीरवाणिकश्रेष्ठिपुरोगास्तस्तादशप्रकटय—

(15) दिष्टानियान् खशकिरातदृविद्क्लिंगशौरहूणोद्दु प्रयन्तानसर्वसम्बसंमस्तजनपदानभताचत्सेवादीनन्याश्च कीर्तितानस्म— मेदन्धचाण्डाल-

(16) तपादपद्योपजीविनः प्रतिवासिनश्य ब्राह्मणोतान् यथाः मत्तयति बोधयति समाजपयत्यस्तु तस्माद्विदितमुपरिनिर्दिष्टविषये गोरुन्नसायां सनातनक्षीयक—

(17) परिभुज्यमानपल्लिका तथा पणिभूतिकायां ऋषिगुगुलपरिभुज्य मानपल्लिकाद्वयं एते मायामातापित्रोत्मनश्च पुण्ययशोभिवृद्धये पवनविघितिता—

(18) श्वेतपत्रवच्चलतरंगजीवलोकमवलोक्य जलवृद्रु दाकर्मसारं वायुर्दिष्ट्वा गजकलभकर्णग्रचपलताजचलक्ष्यत्वपरलोकनिः श्रेयसार्थसंसारणवोत्तनार्थजश्च—

(19) पुण्येहनि उत्तरायणसंक्रांतौ गंधपुष्पदीपोपलेपननैवेद्यबलिचरु-नृत्यगेयवाद्यसत्वादिप्रवर्त्तय खंडस्फुटितसंस्कृताय नवकर्मकरणा—

(20) व च भृत्यपादमूलाभरणाय च गोरुन्नसायं महादेवी श्रीसामदेव्या स्वयंकार्यितभगवते प्रकृतिपरिहारयुक्तः – श्रीनारायणभट्टरकाय शासनदानेन प्रतिपादिताः

(21) प्रचता भता प्रवेशः अकिंचित्प्राग्राह्यः अनाच्छेदय आन्द्रार्क-क्षितिस्तिसमकालिकाः विषयदुद्धृतपिण्डस्थसीमागोचर्यन्तस्य वृक्षान्यौहृदप्रस्रवणोपे—

(22) तदेव ब्राह्मणभुक्तभुज्यमानवर्जिताः यत्स सुख परमपरायेण परिभुञ्जतश्चस्योपरि असुरण्येतरैर्ध्वा धरणविशासनपरिपन्थिजनादिकोपद्रवोमनागपि न करत्—

(23) (तेईस) व्यो नान्यथा.... महान्द्रोधः स्यादिति प्रवर्धमानविजयराज्य-सम्बत्सेरएकविशांतिमे सम्बत् 21 माद्य बदी 3... महादाना क्षयपटलाधिकृतश्रीपीजकः –

(24) लिखितमिदं महासंधिविग्रहाक्षपटलाधिकृत श्रीमदायत्वनातदोत्किर्ण श्रीगंगरेभद्रं—

[हिन्दी-अनुवाद]

(१) कल्याण हो। श्रीमान् कात्तिकेयपुर से समस्त देवगणों के अनुचर द्वारा पूजित किया गया है, भक्ति-भावना के साथ सिर झुकाते हुए मुकुटमणियों की किरणों से प्रकाशमान नखचन्द्र की कला जिसकी है, ऐसे।

(२) (आपका) सर्वतः प्रकाशमान, प्रदीपों के प्रकाश को मंद करने- बाला, देवताओं के सामने झुका हुआ, उनकी पृथ्वी पर गिरी हुई मकरंद पंक्ति से धूसरित हो गया है सिर के केशों का झुंड जिसका, ऐसे-

(३) गंगा है मस्तक पर जिनके ऐसे भगवान् शंकर के प्रसाद से अपनी भुजा से उपार्जित किया है शूरता से शत्रुओं को जीतकर उनकी समस्त धन- राशि जिसने उसके द्वारा दया, चतुरता, सत्य भाषण, उन्नत भाव, उच्च पवित्रता, उच्च उदारता आदि गुणगणों का समूह जिसने, ऐसा-

(४) अत्यन्त सुकृति की परंपरा का बीजारोपण करनेवाला, सतयुगी राजाओं के समान सुन्दर कीर्तिवाला, नंदादेवी के चरण-कमलों में झुके हुए सिर वाला जो श्रीमिम्बर है, उनका पुत्र-

(५) उनकी आशा का पालन करनेवाला, रानी महादेवी श्रीनाथदेखी में उत्पन्नपरम शैव परम ब्राह्मणों का सेवक, पैनी तलवार की धाराओं से काटे हुए हाथियों के मुंडों के मस्तकों से गिरे हुए मुक्ताश्रों के समान सफ़ेद है यश की पताका जिसकी –

(६) उस जैश की पताका से हँस करके फेंकी है तारागणों की पंडि जिसने, ऐसा परम भट्टारक महाराजाधिराज महादेव है इष्टदेव जिनका ऐसे का पुत्र उनकी आज्ञा का पालन करनेवाला रानी महादेवी श्रीमती वेगदेवी में पैदा हुआ –

(७) शंकर का परमभक्त, ब्राह्मणों का परमपूजक, कलि के कलंकरूपी पंक में डूबी हुई पृथ्वी के उद्धार करने के लिये धारण किया है वराहावतार के समान शरीर जिसने, अपनी स्वाभाविक बुद्धि के विभव से स्थगित किया है शत्रुओं का प्रताप-चक्र जिसने, ऐसा –

(८) अत्यन्त वैभव के साथ संहार करने के लिये भयंकर भृकुटि को बना- कर सिंह के समान समत्त में आये हुए शत्रुओं के समूह पर निर्भय होकर रुधिर से लाल हुई तलवार को घुमाते हुए, शत्रुओं के स्वर्गारोहण के अनन्तर विजयलक्ष्मी ने आनंद के साथ आलिंगन किया है कंठ जिसका, ऐसे-

(६) देवांगनाओं के सुन्दर मुख के अवलोकन से शस्त्र को देवी के चरणों में रखकर पुष्पमालाओं द्वारा भगवती के विजय-पताका-युक्त अपने सिर को जगदम्बा के चरणों में झुकाकर, अपने भुजदंड के बल से अपने शस्त्रों की सहायता से शत्रुओं के प्रचंड वेग को रोकते हुए समस्त सामंत राजाओं को भेंट के साथ अपने काबू में करनेवाला –

(९) पृथु के समान अपने भुजदंड के बल से समस्त धनुर्धारी शूरवीरो के गरणों को स्तम्भित कर, अपने वश में लाई हुई अचल रूप से पालन की हुई धरा का सार ग्रहण क्रनेवाले परम भट्टारक महाराजा- धिराज राजाओं के राजा श्रीमान् 'ललितसूरदेव' कुशवंशावतंस इसी श्रीमान् कार्तिकेयपुर के मंडल में आये हुए

(१०) समस्त पृथ्वी के राजाओं को, राजपुत्रों को, राजपौत्रों को, राजामात्यों को, उनके नीचे काम करनेवाले छोटे-छोटे और बड़े-बड़े क्षत्रिय महावीरों को, उनके साथ में आये हुए बड़ेन्चरे द्वारपालों को हाथ में दंड लेकर महाराज का गुण गान करनेवाले –

(१२) उनकी प्राचीन कुल-परंपरा सूर्यवंश का, उनकी शूरता का, उनकी उदारता का, उनके दुःसाध्य कर्मों का, उनके द्वारा छोड़े हुए बड़े-चरे चोर और डाकुओं के

पकड़नेवाले बीरों का, उनसे उपाये हुए शुल्क का तथा तत्तत् कार्यो में नियुक्त कवि, ज्योतिषिक, श्राभिचारिक (जादू-टोनेवाले) आदि को दिया है—

(१३) हाथी, ऊँट, पोदे और सेना के द्वारा प्राप्त हुए प्रभूत बन तथा दंड के द्वारा प्राप्त हुए धन एवं पशुओं के आयात और निर्यात के द्वारा प्राप्त हुए धन-समूह को राज्यकार्य में लगे हुए अनेक जिलों के मालिक, अनेक सेनाध्यक्ष, छोटे नपति, अश्वपति, प्रान्ताध्यक्ष, शत्रुसेना भयंकर, अपने बड़े-बड़े सेनापति-

(१४) मार्ग-संशोधक तथा प्रबंधक, शिलेदार, घट्टपाल, क्षेत्रपाल, प्रान्तपाल, उनके पुत्र और पौत्र, गोपाल, महिषीपाल, इनके निरीक्षक बड़े-चरे महाकवि, अहीर, वैश्य, बड़े-बड़े सेठ, इनमें रखकर –

(१५) १८ प्रकार की राजनीति के जाननेवाला खस, किरात, द्रविड़,

कलिंग, सूरसेन, हूण, आन्ध्र, मेद आदि चांडाल पर्यन्त समस्त परिजनों को, समस्त काम करनेवालों को, समस्त जनपदों के मनुष्यों को, समस्त सेनापतियों को, इसी प्रकार अन्य समस्त सेवकों को-

(१६) प्रसन्न करके, उनके द्वारा कही हुई कीर्ति का बार-बार स्मरण करके अपने आश्रय में आनेवाले और उनके समस्त इष्ट मित्रों को, ब्राह्मणों के अतिरिक्त अन्य समस्त जनों को यथायोग्य यह आदेश देता है, तथा बतलाता है, और श्रनुशासन करता है कि तुम सब लोग ऊपर बतलाए हुए देशों में उन्नत उन्नत-गोष्ठों (गायों) को, तथा धान्य राशि के उठाने के स्थानों को-

(१७) छोटे-छोटे ग्रामों को, पल्लियों (खरक) को, बाज़ारों को तथा देवोद्देश्य से दिये हुए अनेक सुगंधित द्रव्यों से सुगंधित दोनों ओर से मार्ग- वाले उच्च-उच्च यज्ञ मंडपों को, इन सबको मैंने अपने माता-पिता और अपने श्रात्मा की पूर्ण वृद्धि के लिये गोरुन्नसारी तथा दूसरा ग्राम, जो पाली में है और जो खसिया तथा गुग्गुल के अधिकार में है, वे ग्राम दान में दिये गये-

(१८) अश्वत्थ (पीपल) पत्र के समान चंचल अपने जीवन को देखकर जल-बुद्ध द के समान असार आयु को देखकर, अपनी लक्ष्मी की हाथी के बालक के कर्ण-चालन के समान चंचलता देख कर के परलोक में मोक्ष-सुख की प्राप्ति के लिये तथा संसार-सागर के उतरने के लिये-

(१६) पुण्य दिन में, उत्तरायण संक्रान्ति में, गन्ध, पुष्प, धूप, चीन, उपलेपन, नैवेद्य, बलि, चरु, नृत्य, गान, वाय आदि के लिये, फूटे हुए मकानों की मरम्मत के लिये, नवीन मंदिरों के बनाने के लिये

(२०) (मंदिरों के) नौकरों की तनख्वाह के लिये, गौ की नासिका के समान उन्नत, पवित्र भूमि में महादेवी श्रीसामदेवी ने स्वयं बनाये हुए भगवान् के मंदिर की पूजा के लिये गोरुन्नसारी-नामक गाँव श्रीनारायण भट्टारक को अपनी आज्ञा से दिया –

(२१) समस्त सेवक-युक्त आगम-निर्गम-द्वार-घटित, नहीं लेने योग्य, नहीं तोड़ने योग्य, सूर्य-चंद्रमा की आयु तक रहनेवाले, अपने प्रान्त के अनेक प्रान्तों को, उनकी सीमाओं के साथ-साथ लगे हुए, वृक्षों को, बगीचों को, गहरे- गहरे तालाबों को, करनों को –

(२२) मंदिर-स्थित ब्राह्मणों के निमित्त दी हुई अनेक सामग्रियों को सुख-पूर्वक जीवन-निर्वाह करने के लिये, उनकी वंश-परम्परागत सन्तति के उपभोग के लिये जो कुछ हमने ऊपर बतलाये हुए प्रदेश तथा उसके संबंध में अन्य भी अनेक उपकरण के साथ दिये हुए निर्विवाद अनन्त काल तक व्यवहार में लाने के लिये जो मैंने लिखित उल्लिखित स्थान बतलाये हैं, उनमें कोई भी किसी प्रकार का झगड़ा न करे –

(२३) उनका मेरी आज्ञा के विरुद्ध ......(यदि कोई व्यवहार करेगा) तो मेरे प्रति महान् द्रोही होगा। इस आज्ञा को मैं प्रवर्धमान विजयराज्य संवत्सर २१ में माघवती तृतीया को महादान-पत्र के साथ अक्षय राज्य के ऊपर बैठनेवाले उत्तरव शाधिकारियों को यह हमारा आदेश है।

(२४) यह लिखा गया है उच्चतर संधि तथा उच्चतर विग्रह के द्वारा प्राप्त हुए राज्य नायक श्रीमान् आयट अवटंकवाले श्रीगंगभद्र ने ।।

अवलोकन।

पांडुकेश्वर-तामपत्र में लिखा है कि श्रीनिम्बर्तदेव ने विदेशी शत्रु पर विजय पाई। उन्होंने शत्रुओं का नाश इस प्रकार किया, जैसे उदय होता सूर्य कोहरे को नष्ट कर देता है। उसके पुत्र इष्टाङ्गदेव ने अपनी तलवार की धार से बड़े बड़े मस्त हाथियों को मारा। ये युद्ध सत्र मैदानों में हुए होगे, क्योंकि पहाड़ों में हाथी युद्ध में नहीं आ सकते हैं, यद्यपि कत्यूर में

कौसानी के पास इथछीना-नामक स्थान है, जहाँ पर कहते है कि कत्यूरियों के हाथी रहते थे। पाल ताम्रपत्र में गोपाल को पृथु की तरह बताया गया है, और कत्यूरी-ताम्रपत्र में ललितसूरदेव को राजा पृथु के समान कहा गया है। ललितसूरदेव ने तमाम भारत में साम्राज्य स्थापित किया, ऐसा लिखा है। उधर देवपाल का राज्य भी महेन्द्र पर्वत से हिमालय तक होना लिखा गया है।

कुमाऊँ के दैशटदेव और पद्मटदेव के ताम्रपत्र कार्त्तिकेयपुर के हैं, पर सुभिक्षराजदेव के ताम्रपत्र में सुभिक्षपुर की मुहर है। इस नगर का ठीक-ठीक पता नहीं चलता। (संभव है, सुभिक्षपुर बौरारौ में हो, क्योंकि यहाँ की भूमि सदा शस्य-सम्पन्न रहती है। कहीं बौरारी का शुभकोट ही प्राचीन सुभिक्षपुर तो नहीं था। बागीश्वर तथा पांडुकेश्वर के दान-पत्रों में कुछ फ़क़ है। यद्यपि इनमें भी प्रशंसात्मक शब्द कुछ-कुछ मिलते हैं। दोनो में सलौणादित्य की प्रशंसा की गई है। और इच्छटदेव तथा उसकी माता को शिव तथा ब्रह्म का उपासक बताया है। इन दोनों को ब्राह्मण तथा ग़रीबों का विशेष सहायक बताया गया है। पद्मटदेव के बारे में कहा गया है कि वह शैव थे, तथा उन्होंने अपने भुजबल से अनेक प्रांतों को जीता था, जिनके मालिक इतने हाथी, घोड़े व रत्न-कांचन लाते थे कि इंद्र को जो सम्पत्ति मिलती थी, वह उनके आगे तुच्छ थी। उनकी तुलना दधीचि व चंद्रगुप्त से की गई है, और उनका राज्य एक सागर से दूसरे सागर तक कहा जाता है। उनके पुत्र सुभित्तराजदेव वैष्णव थे। ब्रह्म के चरणों में लीन थे। शास्त्रों के जाननेवाले, विद्वानों का आदर करते थे। कई गुणों से सम्पन्न थे। इत्यादि बातों के अलावा इन ताम्रपत्रों से ठीक-ठीक यह ज्ञात नहीं होता कि ये राजा कब हुए, और कहाँ तक इनका राज्य था। इन ताम्रपत्रों में जो-जो ज़मीने प्रदान की गई हैं, उनके नामों का कुछ ज़िक्र यहाँ पर किया जाता है, यद्यपि इस समय इनका ठीक-ठीक पता चलना कठिन है, क्योंकि २-३ हजार वर्ष के बीच उन नामों तथा पात्रों की काया-पलट हो गई है।

भूमिदान

ललितपुरदेव के एक नामपत्र का तो विस्तृत विवरण ऊपर दिया है। दूसरे में जो ज़मीन दी गई है, वह भी कार्त्तिकेयपुर से दी गई है।

(१) इन्द्र वक के पास जो जमीन थपलिया सारी में है, वह भी श्रीनारायण भट्टारक को दी गई है। तपोवन में साधु-सन्तों की सेवा के लिये भूमिदान हुआ है। यह तपोवन धौली के किनारे जोशीमठ के ऊपर बताया जाता है।

(२) देशटदेव ने नारायण वर्मन् के क़ब्ज़े का ग्राम यमुना को बिजयेश्वर मंदिर को चढ़ाया । ईशाल प्रान्त के शासकों को इसकी सूचना दी गई है।

(३) पद्मटदेव ने टंगनपुर के शासकों को आशा दी है और सुभिक्ष-राजदेव ने भी टंगनपुर तथा अंतरांग प्रान्त के राजकर्मचारियों को आज्ञा दी है कि अमुक जमीन चदरिकाश्रम को चढ़ाई गई है।

(4) सुभिक्षराजदेव के ताम्रपत्र में अनेक नाम हैं, जिनको इस समय पहचानना कठिन है।

(१) विधिमालका में जमीन जो वच्छेतक के पास है। भेटासारी में ८ नाली ।

(२) बारीयाल में ४ द्रोण भूमि ।

(३) बनोलिक में जमीन ।

(४) कंडायिक से सरना तक जो सुभट्टक की है।

(५) सटिक तोक ।

(६) यच्छसद्दा जो गोचिंटगक के क़ाज़ में है।

(७) तल्लासाट जो बिहान्दक के पास है।

(८) शीरा जो वेनवक के हाथ में है।

(६) गंगारक जो सोशी जीवक के पास है।

(९) पेट्टक, कथ सिल, न्यायपट्टक बंदीवाला जो आदित्यों के पास है।

(१०) इच्छावाला, मिहलक, महराजियक, खोराखोट्टनक जो सिलादित्य के पास है।

(११) इर्षपुर में जो जमीन पर्वभानु ऊगक के हाथ में थी, और अब दुर्गा भट्ट की रियासत में है।

(१२) भरोसिक में नई जमीन जो सिट्टक, उसोक, विजत, दुजन, श्रतंग, वाचतक और बराह के अधिकार में है।

(१३) जतिपातोक जो इजर में है।

(१४) समिजीप तथा पैरी का गोदोध जो सत्रक के पुत्रों के पास है।

(१५) योशिक का घासर्भेगक, सिदारा, बलिबर्द और सिला, इहंग, रुल्लथ, तिरिंग, कटनसिल, गन्धोधारिक, पुग, कर्कटथल, डाली-मूलक, जो घरनाग के क़ब्ज़े में हैं।

(१६) दारक जो कटुस्थिक के हाथ में है।

(१७) रणदावक, लोहारस जो तुंगादित्य के अधिकार में है।

(१६) योशिक की भूमि।

(२०) रत्नावली जो सडायिक के निकट है। जिसकी सीमा यह है – पर्व में अंडारिगनिक, उत्तर में गंगा, पश्चिम में संकट, दक्षिण में तमेहक-और जो सेनायिक के हाथ में है। इत्यादि जमीनें व गाँवों का अधिकार श्रीनारायण तथा ब्रह्म श्बर भट्टारकों को दिया गया है। ये लोग दुर्गादेवी मंदिर के पुजारी थे। इन संस्कृत के नामों का इस समय ठीक-ठीक पता लगाना कठिन काम है।

बागेश्वर शिलालेख

उत्तराखण्ड के प्राचीन इतिहास में कुणिन्द, पौरव और कार्तिकेपुर कत्यूरी सूर्यवंशी राजवंश का प्रमुख स्थान है। कुणिन्द इतिहास के मुख्य स्रोत कुणिन्द मुद्राएं हैं, तो पौरव वंश की जानकारी ताम्रपत्रों से प्राप्त होती है। कत्यूरी इतिहास को बागेश्वर जनपद के कत्यूरी घाटी (गोमती घाटी) से संबद्ध किया गया है, जिसके अंतिम छोर पर बागेश्वर नगर है, जहाँ गोमती और सरयू का संगम तीर्थ है। इस तीर्थ के अंतस्थ भाग में बागनाथ का प्राचीन मंदिर है, जहाँ से ब्रिटिश काल में एक शिलालेख प्राप्त हुआ था। इस प्राचीन शिलालेख के संबंध में पंडित बद्रीदत्त पाण्डे लिखते हैं- ''ललितशूर के पुत्र भूदेव ने अपने सिंहासनारोहण के चौथे वर्ष के दान का बागेश्वर के मंदिर में एक शिलालेख लगवाया था, जो कितने ही साल हुए, लुप्त हो गया। एटकिन्सन ने शतियों से घिसे उस लेख का अंग्रेजी अनुवाद अपने ग्रन्थ में छापा है।''

लुप्त हो चुके इस शिलालेख पर बागेश्वर का नाम बाणेश्वरम् लिखा गया था। कार्तिकेयपुर नरेश भूदेवदेव के अतिरिक्त इस शिलालेख पर मसनतदेव, ...ददौ, खर्परदेव,

कल्याणराजदेव, त्रिभुवनराजदेव, निम्बरदेव, इष्टगणदेव और ललितशूरदेव के नाम उत्कीर्ण हैं, जिन्हें इतिहासकार कत्यूरी राजा कहते हैं। ललितशूरदेव के दो ताम्रपत्र चमोली के पाण्डुकेश्वर मंदिर से प्राप्त हुए हैं, जिन्हें 'कार्तिकेयपुर' विषय (जनपद) से निर्गत किया गया था। इन ताम्रपत्रां तथा बागेश्वर शिलालेख में उल्लेखित शासकों को इतिहासकार उत्तराखण्ड का सर्वाधिक शक्तिशाली राजवंश 'कत्यूरी' से संबद्ध करते हैं।

बागेश्वर शिलालेख की प्रथम पंक्ति- ''स्वस्ति।। श्रीमति देदीप्ते देवद्वारदखिणे एतं बाणेश्वरं तिर्थमही पाठकगणेन।'' का अनुवाद एडविन थॉमस एटकिंसन इस प्रकार से लिखते हैं- ओम् नमः। इस सुन्दर मंदिर के दक्षिण-भाग में विद्वानों द्वारा राजवंशावली उत्कीर्ण है।'' उत्तराखण्ड में प्राचीन मंदिरों के अतिरिक्त नौलों के शिलापट्ट पर भी अभिलेख उत्कीर्ण करवाने की परम्परा थी। बागेश्वर के लुप्त हो चुके शिलालेख पर राजाओं के नाम उपाधि और रानी सहित -

1- परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर भसन्तनदेव या मसन्तनदेव और उनकी महादेवी साज्यनरा देवी।

2- परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर .....ददौ ।

3- परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर खर्परदेव और उनकी महादेवी कल्याण देवी।

4- परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर कल्याणदेव और उनकी महादेवी लद्धा देवी।

5- परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर त्रिभुवनराजदेव।

6- उपाधि रहित निम्बर और उनकी रानी नाथूदेवी।

7- परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर इष्टगणदेव और उनकी महादेवी धरा देवी।

8- परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर ललितशूरदेव और उनकी महादेवी साम देवी।

9- परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर भूदेवदेव।

बागेश्वर शिलापट्ट पर उक्त कुल नौ राजाओं के नाम उत्कीर्ण किये गये थे, जिनमें से आठ ने 'परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर' की उपाधि धारण की थी। अर्थात ये 'परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर' उपाधि धारक ये आठ शासक स्वतंत्र थे। इस शिलालेख पर राजा निम्बर का नाम उपाधि रहित उत्कीर्ण किया गया था। इस तथ्य की पुष्टि ललितशूरदेव के द्वारा निर्गत कार्तिकेयपुर ताम्रपत्र भी करते हैं। निश्चित ही

कार्तिकेयपुर नरेश ललितशूरदेव के दादा 'निम्बर' स्वतंत्र शासक के स्थान पर एक अधीनस्थ शासक थे।

प्राचीन बागेश्वर शिला पर सर्वप्रथम राजा भसन्तनदेव या मसंतनदेव का नाम उत्कीर्ण किया गया था। इस राजा के साथ उनकी रानी साज्यनरा देवी तथा तत्पश्चात पुत्र का नाम परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर उपाधि सहित 'ददौ' (अस्पष्ट) उत्कीर्ण था। इतिहासकार इस शिलालेख में उत्कीर्ण 'भसन्तनदेव' या 'मसंतनदेव' को कत्यूरी वंश (कत्यूर घाटी-बागेश्वर) के प्रथम शासक 'आसन्तिदेव' से संबद्ध करते हैं, जो उचित प्रतीत नहीं होता है।

इस शिलालेख के प्रथम लेखांश मसंतनदेव के पुत्र ....ददौ ने उत्कीर्ण करवाया था। इस प्रथम लेखांश का शिला पर उत्कीर्ण खर्परदेव से कोई संबंध स्पष्ट नहीं होता है। इस शिला पर दूसरा लेखांश त्रिभुवनराजदेव ने उत्कीर्ण करवाया था, इस द्वितीय लेखांश में त्रिभुवनराजदेव ने अपने दादा-दादी (खर्परदेव- कल्याणीदेवी) और माता-पिता (लद्धादेवी-कल्याणराजदेव) का नाम उत्कीर्ण किया। इस शिला पर तीसरा लेखांश कार्तिकेयपुर नरेश ललितशूदेव के पुत्र भूदेवदेव ने उत्कीर्ण करवाया था। इस राजा ने परम्परानुसार अपने परदादा-परदादी (निम्बरदेव-नाथूदेवी), दादा-दादी (इष्टगणदेव-धरादेवी) और माता-पिता (सामदेवी-ललितशूरदेव) का नाम उत्कीर्ण करवाया था।

भूदेवदेव ने शिला पर पहले से उत्कीर्ण अन्य सूर्यवंशी राजाओं- मसंतनदेव, ...ददौ, खर्परदेव, कल्याणदेव और त्रिभुवनराजदेव से किसी भी प्रकार का संबंध स्थापित नहीं किया। अतः बागेश्वर मंदिर से प्राप्त शिला पर तीन पृथक-पृथक राजवंशों का अभिलेख उत्कीर्ण था। ''प्रो. सरकार ने सर्वप्रथम इस तथ्य की ओर ध्यान दिलाया कि बागेश्वर-शिलालेख पर तीन विभिन्न राजाओं के तीन दानलेख और हैं जो उचित प्रतीत नहीं होता।'

पाण्डुकेश्वर और बागेश्वर अभिलेख में आरम्भिक वाक्यांश लिखने की शैली एक जैसी ही है। जहाँ पाण्डुकेश्वर ताम्रपत्रों का आरम्भ ''स्वस्ति।। ''श्रीमत्कार्तिकेयपुरात सकलामरदितितनुज'' से किया गया था, वहीं बागेश्वर शिलालेख का आरंभ ''स्वस्ति।। श्रीमति देदीप्ते'' से किया गया। इसी शिलालेख पर भूदेवदेव का लेखांश- ''श्रीमल्लन्ति वस्सरात् सकलामरदितितनुज'' से आरम्भ किया गया। संभवतः अस्पष्ट और घिसे हुए

शिला में 'श्रीमत्कार्तिकेयपुरात्' को एटकिंसन ने श्रीमल्लन्ति वस्सरात् पढ़ा हो। इस शिला पर उत्कीर्ण भूदेवदेव का लेखांश, लेखन शैली की दृष्टि से अपने पिता ललितशूरदेव के ताम्रपत्रों से अभिन्नता रखता है और 'स्वस्ति श्रीमत्कार्तिकेयपुरात्' के साथ अभिलेख उत्कीर्ण करवाना कार्तिकेयपुर राज्य की अभिलेख लेखन की एक मुख्य विशेषता थी। कार्तिकेयपुर राज्य की इस लेखन शैली का उपयोग सलोणादित्य वंश के राजा पद्मटदेव ने भी किया। जबकि बागेश्वर शिलालेख के ऊपरी भाग में उत्कीर्ण ददौ और त्रिभुवनराजदेव के लेखांश में 'स्वस्ति श्रीमत्कार्तिकेयपुरात्' वाक्यांश को प्रयुक्त नहीं किया गया।

बागनाथ शिलालेख में '...ददौ', 'त्रिभुवनराजदेव' और 'भूदेवदेव' तीन ऐसे राजा थे, जिनके नाम के साथ उनकी महादेवी (महारानी) का नाम उत्कीर्ण नहीं था। जबकि इन तीनों के अतिरिक्त इस शिलालेख में आये सभी राजाओं के नाम उनकी महादेवी सहित उत्कीर्ण थे। पाण्डुकेश्वर ताम्रपत्रां से भी स्पष्ट होता है कि कार्तिकेयपुर राज्य में अभिलेख निर्गत कर्ता राजा अपनी महादेवी का नाम अपने साथ उत्कीर्ण नहीं करवाता था। जबकि वह अपने वंश के पूर्ववर्ती राजाओं के साथ उनकी महादेवी का अवश्य उल्लेख करते थे। सातवीं शताब्दी के कन्नौज शासक हर्ष के बांसखेड़ा और मधुबन ताम्रपत्र भी इस तथ्य की पुष्टि करते हैं। अतः बागेश्वर शिलालेख को ...ददौ, त्रिभुवनराजदेव और भूदेवदेव ने उत्कीर्ण करवाया था।

ब्रह्मपुर के ताम्रपत्रीय कत्यूरियों के ताम्रपत्रों तथा बागेश्वर शिलालेख में 'कुशली' शब्द उत्कीर्ण किया गया है। 'कुशली' शब्द की व्युत्पत्ति 'कुशल' शब्द में 'ई' प्रत्यय (कुशल + ई) लगाने से होती है। जैसे- देश से देशी, सूत से सूती। कुशल शब्द संस्कृत का पुल्लिंग/विशेषण शब्द है। विशेषण रूप में कुशल के कई अर्थ है जैसे कनक शब्द सोना व धतूरा से होता है वैसे ही कई स्थान पर कुश के वंश व कई स्थान पर कुशलता से है – चतुर, प्रवीण, प्रसन्न तथा पुल्लिंग रूप में- मंगल, शिव, गुण, चतुरता होता है। 'ई', संस्कृत का गुणवाचक प्रत्यय है।

1- ललितशूरदेव (कत्यूरी) का राज्य संवत् 21 वें वर्ष के ताम्रपत्र में- ''ललितशूरदेवः कुशली अस्मिन्नेव श्रीमत्कार्तिकेयपुर विषये।''

2 – ललितशूरदेव का राज्य संवत् 22 वें वर्ष के ताम्रपत्र में- ''ललितशूरदेवः कुशली श्रीमत्कार्तिकेयपुर विषये।''

2- ललितशूरदेव का राज्य संवत् 24 वें वर्ष के ताम्रपत्र में- ''ललितशूरदेवः कुशली श्रीमत्कार्तिकेयपुर विषये।''

4- पद्मटदेव का राज्य संवत् 25 वें वर्ष के ताम्रपत्र में- ''श्रीमत्पद्मटदेवः कुशली टंकणपुर विषये।''

5- सुभिक्षराज का राज्य संवत् 4 वें वर्ष के ताम्रपत्र में- ''श्रीमत् सुभिक्षराज देवः कुशली टंकणपुर विषये अन्तरांगविषये च।''

6- मसन्तनदेव के पुत्र ददौ का बागेश्वर शिलालेख में- ''महाराजाधिराज परमम्बरशाय स्वैरं स्वैरं ददौ कुशली जयकुलभुक्ति।''

7- त्रिभुवनराजदेव का राज्य संवत् 11 का बागेश्वर शिलालेख में- ''श्रीत्रिभुवनराजदेवः कुशली जयकुलभुक्ति।''

8- भूदेवदेव का राज्य संवत् 4 का बागेश्वर शिलालेख में- ''श्री भूदेवदेवः ......जयकुलदुर्ग।''

निष्कर्ष-

संभवतः भूदेवदेव और जयकुलभुक्ति के मध्य का 'कुशली' शब्द बागेश्वर के घिसे हुए शिलालेख में पढ़ने में न आया हो। भूदेवदेव के अतिरिक्त उक्त सभी अभिलेख निर्गत करने वाले राजाओं के नाम और प्रशासनिक क्षेत्र के मध्य 'कुशली' शब्द को प्रयुक्त किया गया था। अतः अभिलेख उत्कीर्ण करवाने वाले शासक के नामोपरांत 'कुशली' शब्द प्रयुक्त करने की परम्परा प्राचीन उत्तराखण्ड में सूर्यवंशी कत्यूरी राजाओं में प्रचलित थी क्योंकि कुशली का अर्थ कुश के वंश से भी था। पौरवों के परवर्ती और कार्तिकेयपुर नरेशों के पूर्ववर्ती कन्नौज सम्राट हर्ष के ताम्रपत्रों से 'कुशली' शब्द प्राप्त नहीं होता है। यथा- 'महाराजाधिराज श्री हर्षः अहिच्छत्र भुक्तावंगदीयवैषयिक'। यहाँ राजा हर्ष और भुक्ति अहिच्छत्र के मध्य 'कुशली' शब्द प्रयुक्त नहीं किया गया।

उत्तराखण्ड के जयकुल भुक्ति, ब्रह्मपुर और कार्तिकेयपुर नरेशों के अभिलेखों में 'कुशली' शब्द को प्रयुक्त करने से स्पष्ट होता है कि ये भगवान राम के पुत्र कुश से संबंध रखते है।

अभिलेख में '...ददौ' और जयकुल भुक्ति के मध्य 'कुशली' शब्द प्रयुक्त किया गया था। अतः बागेश्वर शिलालेख का प्रथम उत्कीर्ण कर्ता '....ददौ' था। इस शिलालेख पर दूसरा लेखांश 'खर्परदेव' के पौत्र 'त्रिभुवनराजदेव' ने राज्यारोहण के ग्यारहवें वर्ष उत्कीर्ण करवाया था। तीसरा और अंतिम लेखांश 'निम्बर' के प्रपौत्र 'भूदेवदेव' ने राज्य संवत् चार को उत्कीर्ण करवाया था।

वर्तमान बागेश्वर नगर, प्राचीन काल में एक 'भुक्ति' (राज्य) था, जिसका नाम 'जयकुल' था। उत्तराखण्ड के प्राचीन अभिलेखों में उल्लेखित कार्तिकेयपुर, टंकणपुर और अंतरांग आदि नगर प्राचीन काल में एक 'विषय' (जनपद) थे।

बंगाल का पालवंश और कार्तिकेयपुर के सूर्यवंशी नरेश-

शंकराचार्य ने उत्तराखण्ड के केदारनाथ में समाधि लेने से सम्पूर्ण भारत का भ्रमण कर सनातन संस्कृति को पुनर्जीवित किया। चार धाम और बारह ज्योर्तिरलिंगों की स्थापना के साथ उन्होंने तीर्थ यात्रा को मोक्ष का प्रतीक बना, भारतीय जनमानस को एक धर्म, एक राष्ट्र के रूप में रूपान्तरित कर दिया। पाल वंश के शासक धर्मपाल और शंकराचार्य के संबंधों को स्पष्ट करते हुए बद्रीदत्त पाण्डे लिखते हैं- ''वह केदारनाथ गये थे।'' लेकिन डॉ. शिवप्रसाद डबराल मुंगेर-देवपाल अभिलेख के ताम्रपत्रानुवाद में लिखते हैं- ''दिग्विजय में प्रवृत्त उस नरेश धर्मपाल (827-867 वि.) के भृत्यवर्ग ने केदारतीर्थ में यथाविधि स्नान-तर्पणादि सम्पन्न किये।'' धर्मपाल ने केदारनाथ यात्रा की या नहीं की, लेकिन उसके स्थान पर उसके भृत्यवर्ग (नौकर-सेवकों) ने उसके लिए केदार यात्रा की थी। भृत्यों की सफल केदार यात्रा के आधार पर कह सकते हैं कि मध्य हिमालय के कार्तिकेयपुर राज्य से उनका मैत्रीपूर्ण संबंध था। संभवतः इस सफल यात्रा की पृष्ठ-भूमि में प्रछन्न बौद्ध (शंकराचार्य), धर्मपाल और कार्तिकेयपुर राज्य का त्रिकोणीय सहसंबंध था।

कार्तिकेयपुर नरेश ललितशूरदेव के ताम्रपत्र और देवपाल (मुंगेर) के ताम्रपत्र में एकरूपता को कुछ इतिहासकार मान्यता देते हैं। यह विचित्र तथ्य है कि कन्नौज सम्राट हर्ष के ताम्रपत्रों के स्थान पर देवपाल का मुंगेर ताम्रपत्र लेखन शैली, लिपि, संस्कृत भाषा, राज्य पद और ताम्रपत्र-टंकणकर्ता इत्यादि में ललितशूरदेव के ताम्रपत्रों से समानता रखता है। निश्चित ही इस संयोग का बीज धर्मपाल द्वारा आयोजित 'केदार धर्म यात्रा' में बोया गया

था। अतः कत्यूरी-पाल संबंधों को स्पष्ट करने हेतु ब्रह्मपुर, बांसखेड़ा, मुंगेर और कार्तिकेयपुर से निर्गत ताम्रपत्रों की संक्षिप्त विवेचना आवश्यक है-

पौरव ताम्रपत्रों में एक विशेष राज्य पदाधिकारी सहसंबंध था।

कार्तिकेयपुर नरेश ललितशूरदेव के ताम्रपत्र और देवपाल (मुंगेर) के ताम्रपत्र में एकरूपता को कुछ इतिहासकार मान्यता देते हैं। यह विचित्र तथ्य है कि कन्नौज सम्राट हर्ष के ताम्रपत्रों के स्थान पर देवपाल का मुंगेर ताम्रपत्र लेखन शैली, लिपि, संस्कृत भाषा, राज्य पद और ताम्रपत्र-टंकणकर्ता इत्यादि में ललितशूरदेव के ताम्रपत्रों से समानता रखता है। निश्चित ही इस संयोग का बीज धर्मपाल द्वारा आयोजित 'केदार धर्म यात्रा' में बोया गया था। अतः कत्यूरी-पाल संबंधों को स्पष्ट करने हेतु ब्रह्मपुर, बांसखेड़ा, मुंगेर और कार्तिकेयपुर से निर्गत ताम्रपत्रों की संक्षिप्त विवेचना आवश्यक है-

पौरव ताम्रपत्रों में एक विशेष राज्य पदाधिकारी 'प्रतिहार' का नाम उत्कीर्ण है। प्रतिहार नामक पदाधिकारी अन्तःपुर का रक्षक एवं महाप्रतिहार राजमहल के रक्षकों का प्रधान होता था। मुंगेर और कार्तिकेयपुर ताम्रपत्रां में 'महाप्रतिहार'' राज्य पद उत्कीर्ण है। जबकि राजा हर्ष के ताम्रपत्रों से 'महाप्रतिहार' राज्यपद का उल्लेख प्राप्त नहीं होता है। 'प्रतिहार' राज्यपद की पदावस्थापन गुप्त काल में हो चुकी थी। 'प्रतिहार'/'महाप्रतिहार' नामक यह राज्यपद सातवीं सदी के प्रशासनिक सूची (हर्ष के ताम्रपत्रों) में उल्लेखित नहीं है। लेकिन नौवीं शताब्दी में यह राज्यपद कत्यूरी और पाल शासकों की प्रशासनिक सूची में कैसे पुनः पदावस्थापन हो गया? संभवतः इसका कारण ताम्रपत्र निर्गत करने का स्थान से हो सकता है। हर्ष के बांसखेड़ा (शाहजहांपुर, उ0प्र0) और मधुबन (घोषी तहसील, मऊ, उ0प्र0) तामपत्र सैनिक शिविर से निर्गत किये गये थे। राजमहल का रक्षक पदाधिकारी 'महाप्रतिहार' सैनिक शिविर में उपस्थित नहीं रहा होगा। इसलिए इस पदाधिकारी का उल्लेख हर्ष के इन दो ताम्रपत्रों से प्राप्त नहीं होता है।

गुप्त काल में प्रान्त को देश, अवनी अथवा भुक्ति कहा जाता था। भुक्ति के शासक को 'उपरिक' कहा जाता था। पौरव (ब्रह्मपुर) ताम्रपत्रों में सर्वोच्च अधिकारी दण्ड-उपरिक था। जबकि हर्ष और ललितशूरदेव के ताम्रपत्रों में 'उपरिक' का वरीयता क्रम कुमारामात्य के पश्चात था। देवपाल के मुंगेर ताम्रपत्र में 'उपरिक' राज्यपदाधिकारी का नाम उत्कीर्ण नहीं है। हर्ष और ललितशूर के शासन में 'उपरिक' का महत्व कम होने का स्पष्ट कारण

है कि इनके शासन काल में केन्द्रीय सत्ता शक्तिशाली हो चुकी थी। राजा हर्ष के ताम्रपत्र में 'उपरिक' सातवें तथा कार्तिकेयपुर नरेशों ललितशूरदेव, पद्मटदेव और सुभिक्षराजदेव के ताम्रपत्र में सत्रहवें वरीयता क्रम का राज्याधिकारी था। जबकि बंगाल के पाल अभिलेखों में 'उपरिक' नामक पदाधिकारी का उल्लेख न होना यह संकेत करता है कि पाल राज्य भुक्तियों/प्रदेशों में विभाजित नहीं था। राज्य पदों के आधार पर कर्तिकेयपुर नरेश, राजा हर्ष के समकालीन प्रतीत होते हैं। जबकि पाल वंश, हर्ष से एक शताब्दी के पश्चात अस्तित्व में आया था।

हर्ष और कार्तिकेयपुर सूर्यवंशी राज्य में सामन्त, महाराजा, राजस्थानीय, भोगपति/भोगिक आदि राज्यपद अस्तित्व में थे। जबकि पाल वंश के मुंगेर ताम्रपत्र में ये राज्य पद उत्कीर्ण नहीं किये गये। इस आधार पर कह सकते हैं कि कार्तिकेयपुर के ताम्रपत्र, हर्ष और पौरव ताम्रपत्रों का मिश्रण थे। कार्तिकेयपुर ताम्रपत्रों में उत्कीर्ण ठाकुर, घट्टपाल, वर्त्मपाल, पट्टक, राजपुत्र(क्षत्रिय), पट्टोपचारिक, व्यापितृक, भट्ट महोत्तम, महामनुष्य, सौधभंगादिकृत आदि राज्यपदों का विवरण बांसखेड़ा और मुंगेर ताम्रपत्रों से प्राप्त नहीं होता है। संभवतः ये राज्य पद मध्य हिमालय में ही प्रचलित थे और इनमें से 'ठाकुर', भट्ट और 'घट्ट' शब्द आज भी प्रचलन में हैं। अतः मध्य हिमालय के शासक पूर्णरूप से ताम्रपत्र लेखन कार्य में सक्षम थे, जो उन्हें विरासत में पौरव शासकां से प्राप्त हुआ था।

ब्रह्मपुर, बांसखेड़ा, कार्तिकेयपुर और मुंगेर ताम्रपत्रों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि पौरव राज्य में उच्च वरीयता वाले 'उपरिक' और 'प्रतिहार' राज्य पदाधिकारी महत्वपूर्ण थे। इन पदाधिकारियों का पौरव काल में महत्वपूर्ण होना, पूर्ववर्ती गुप्तों का प्रभाव दिखलाई देता है। हर्ष के ताम्रपत्र में सामंत और महासामंत का महत्वपूर्ण होना 'सैन्य शासन' तथा ललिताशूर के ताम्रपत्र में 'अमात्य' का महत्वपूर्ण होना 'चक्रवर्ती शासन' के प्रभाव को परिलक्षित करता है। अतः उपरोक्त विवेचना के आधार पर तालेश्वर, बांसखेड़ा, मुंगेर और पाण्डुकेश्वर ताम्रपत्रों का कालानुक्रम- तालेश्वर, बांसखेड़ा, पाण्डुकेश्वर और मुंगेर होना चाहिए। अर्थात कार्तिकेयपुर नरेश ललितशूरदेव, पाल शासक देवपाल का पूर्ववर्ती था।

देवपाल का सैन्य अभियान मध्य भारत में अधिक सफल रहा। लेख में कहीं भी मध्य हिमालय (उत्तराखण्ड) पर विजय का उल्लेख नहीं किया गया है। सम्भवतः बौद्ध श्रमणों की सहायता से देवपाल ने कार्तिकेयपुर सूर्यवंशी नरेश भूदेवदेव के राज्य पर असफल आक्रमण किया। संभवतः इसी कारण भूदेवदेव ने 'परमबुद्धश्रमणरिपु' की उपाधि धारण की थी। भूदेवदेव कार्तिकेयपुर के प्रथम शासक थे, जिसने 'परमबुद्धश्रमणरिपु' उपाधि धारण की थी।

भूदेवदेव को देवपाल से संबद्ध करने का प्रमुख कारण 'परमबुद्धश्रमणरिपु' की उपाधि करना है। 'परमब्राह्मणपरायण' एक शासक क्यों बौद्ध भिक्षुओं का शत्रु बन बैठा ? निश्चित ही इस प्रश्न का उत्तर बौद्ध श्रमणों का मध्य हिमालय क्षेत्र पर आक्रमण करना था। आठवीं-नौवीं शताब्दी में मध्य हिमालय पर आक्रमण करने की योग्यता सिर्फ देवपाल में थी। ''देवपाल का शासन-काल पाल-शक्ति के चर्मात्कर्ष को व्यक्त करता है। इसके पश्चात पाल साम्राज्य की अवनति प्रारम्भ हुई। देवपाल का उत्तराधिकारी विग्रहपाल का शासनकाल मात्र चार वर्ष का था तथा उसका उत्तराधिकारी ''नारायण पाल की भी सैनिक जीवन की अपेक्षा साधु जीवन व्यतीत करने में अधिक रुचि थी।'' अतः देवपाल के पश्चात 150 वर्षों तक पाल वंश का कोई भी राजा इतना योग्य नहीं था कि वह बंगाल-बिहार के सीमावर्ती क्षेत्रों में सैन्य अभियान चला सकता था। धर्मपाल और उसके उत्तराधिकारियों में से देवपाल ही सबसे उपयुक्त शासक था, जो मध्य हिमालय पर आक्रमण करने की योग्यता रखता था।

तारानाथ, देवपाल को बौद्ध धर्म की पुनः स्थापना करने वाला कहता है। एक तरफ बौद्ध लेखकों द्वारा देवपाल को 'परमसौगत' की उपाधि प्रदान की गई, दूसरी तरफ मध्य हिमालय के कार्तिकेयपुर नरेश 'परमब्राह्मण्य की उपाधि धारण करते हैं। 'परमब्राह्मण्य' उपाधि धारण करने वाले प्रथम कार्तिकेयपुर नरेश 'इष्टगणदेव' थे। इस राजा के पश्चात इनके पुत्र ललितशूरदेव और पौत्र भूदेवदेव ने भी यह उपाधि धारण की थी। संभवतः शंकराचार्य के समाधिस्थ हो जाने के पश्चात सन् 820 ई. में 'बौद्ध', 'ब्राह्मण' और 'शंकराचार्य' का त्रिकोणीय शक्ति-सन्तुलन टूट गया और पाल नरेश देवपाल (810-850 ई.) ने शंकराचार्य (ब्राह्मण धर्म) के प्रभाव से मुक्त हो, श्रमणों की मदद से मध्य हिमालय के कार्तिकेयपुर राज्य पर आक्रमण किया। यही कारण था कि कार्तिकेयपुर

सूर्यवंशी नरेश भूदेवदेव' ने परमब्राह्मण्य के अतिरिक्त परमबुद्धश्रमणरिपु' की उपाधि धारण की थी।

कार्तिकेयपूर कत्यूर सूर्यवंशी राजवंश की मूर्तिकलाएं।

उत्तराखंड के मंदिर में इंद्रदेव की मूर्ति मिली है, जिसे 7वीं से 9वीं शताब्दी के बीच कार्तिकेयपुर कत्यूरी सूर्यवंशी राजाओं ने बनवाया था। यह मूर्ति में इंद्रदेव लीलासन में अपने हाथी पर बैठे इंद्र की दो भुजाओं वाली छवि है। उनके दोनों हाथ उनके घुटनों पर टिके हुए हैं। उनके दोनों ओर चार छोटी महिला आकृतियाँ हैं। उनके बालों को घुंघराले बालों में खूबसूरती से सजाया गया है, जिसकी पृष्ठभूमि में एक अत्यधिक अलंकृत प्रभामंडल दिखाया गया है।

त्रिभंग मुद्रा में खड़ी लक्ष्मी की खंडित मूर्ति, उनके बाएं हाथ में एक डंठल वाला कमल है। लक्ष्मी सामान्य आभूषणों से सजी हुई हैं। खंडित मूर्ति में विष्णु के दो हाथ दिखाए गए हैं। ऊपरी बाएँ हाथ में चक्र है जबकि निचला हाथ देवी की कमर पर टिका हुआ है। देवी के पैर टूटे हुए हैं।

सूर्यवंशियों द्वारा निर्मित कटारमल मंदिर में पाया गया।

यह लक्ष्मी-नारायण की खड़ी अवस्था में मूर्ति है। दोनों ने किरीट मुकुट, लंबी बालियाँ, हार, लंबी माला, कलाई के बंध, घुंघरू और आम माला पहनी हुई है। नारायण ने सजी हुई धोती और लक्ष्मी ने सजी हुई साड़ी पहनी हुई है। एक भक्त युगल को हाथ जोड़कर बैठे हुए आसन के नीचे दिखाया गया है। ये कार्तिकेयपूर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित कटारमल मंदिर उत्तराखंड में पाया गया।

चार भुजाओं वाली चामुंडा की छवि जो अपने वाहन शव पर बैठी हैं और चार भुजाओं वाली देवी वाराही ललितासन में बैठी हैं, जो अपने सामान्य आभूषणों से सजी हुई हैं। चार भुजाओं वाली चामुंडा अपने निचले दाहिने हाथ में खंजर पकड़े हुए हैं जबकि ऊपरी बाएं हाथ में खट्वांग है। देवी वाराही को जटाजूट, हार, बाजूबंद, मोटे कंगन और तवे के साथ दिखाया गया है। उन्हें सूअर के चेहरे के साथ दिखाया गया है जो वर्तमान में कुंद हो गया है। वह अपने बाएं हाथ में घंटी और शायद ढाल पकड़े हुए हैं, और दाहिने हाथ में माला और तलवार है। मूर्ति आंशिक रूप से क्षतिग्रस्त है। उनके दाहिने पैरों के घुटने भी आंशिक रूप से कटे हुए हैं। उत्तराखंड के कार्तिकेयपूर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित बैजनाथ मंदिर में पाया गया।

के

मिथुन आकृतियों को एक पेड़ के नीचे एक आला के भीतर खड़ा दर्शाता है, जिस पर चैत्य-मेहराब और ज्यामितीय उद्देश्यों का जाल है। बाईं ओर पुरुष आकृति को अपने दाहिने हाथ से महिला आकृति के स्तन को सहलाते हुए दिखाया गया है जबकि उसका बायाँ हाथ उसकी पीठ पर रखा हुआ है। महिला आकृति अपने दाहिने हाथ से पुरुष आकृति को गले लगाती है जबकि उसका बायाँ हाथ कमर पर टिका हुआ है। वह अपने मुड़े हुए बाएं पैर को ज़मीन पर टिकाए हुए एक शांत मुद्रा में खड़ी है। नीचे की ओर झुकी हुई आकृति अपने ऊपर उठे हुए हाथों पर आला को सहारा देते हुए दिखाई गई है, जिसके सामने दो शेर-चेहरे वाली बैठी हुई आकृतियाँ भी दिखाई गई हैं। उत्तराखंड के कार्तिकेयपूर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित गोपीनाथ मंदिर में पाया गया।

कमल के आसन पर खड़ी देवी पार्वती की चार भुजाओं वाली छवि। वह जटाजूट और अपने सामान्य आभूषणों से सजी हुई हैं। यह छवि बैजनाथ मंदिर के गर्भगृह में स्थापित है और इसकी पूजा की जाती है। यह उत्तराखंड में कार्तिकेयपूर सूर्यवंशी राजवंश द्वारा निर्मित बैजनाथ मंदिर में मिली।

माता पार्वती जी चतुर्भुजी छवि, जो संभोग मुद्रा में खड़ी हैं। देवी ने एक विस्तृत जटामुकुट, झुमके, एक पुष्प लटकन के साथ लंबी माला, स्तनों को ढकने वाली स्तनोत्तरीय और एक अत्यधिक अलंकृत साड़ी पहनी हुई है। उनके ऊपरी दाहिने हाथ में अग्नि सह-अक्षमाला है, जबकि निचला हाथ वरद मुद्रा में है, ऊपरी बायाँ हाथ टूटा हुआ है और निचले बाएँ हाथ में जल पात्र कमंडल है। उत्तराखंड के कार्तिकेपुर सूर्यवंशी राजाओं द्वारा निर्मित गोपेश्वर मंदिर में पाया गया।

यह शेषशायी विष्णु की एक छवि है जो कुंडलित बिस्तर पर लेटे हुए हैं। शेषनाग का फन टूटा हुआ है। दाहिना ऊपरी हाथ उसके सिर को सहारा दे रहा है, निचला दाहिना ऊपरी हाथ आंशिक रूप से मुड़ा हुआ है और एक गदा गदा पकड़े हुए है। बाएं ऊपरी हाथ टूटा हुआ है, और बाएं निचले हाथ में एक टूटा हुआ शंख पकड़ा हुआ है। लक्ष्मी सांप कुंडल बिस्तर के बाएं कोने पर बैठी हैं। लक्ष्मी उनकी नाभि से विरूपित हैं और एक कमल का तना दिखाई दे रहा है। विष्णु ने किरीट मुकुट, लंबे झुमके, लंबी माला, हार, बाजूबंद, यज्ञोपवीत आदि पहने हुए हैं और एक सुसज्जित बेल्ट से बंधी धोती है। लक्ष्मी के दाईं ओर दो सिरहीन खड़े परिचारक एक टूटी हुई गदा पकड़े हुए हैं। सांप कुंडल बिस्तर के नीचे मछलियों और मगरमच्छों को दर्शाया गया है।

शेषशायी विष्णु

की मूर्ति शेषनाग पर लेटी हुई है। विष्णु को चार भुजाओं के साथ एक सर्प के चक्राकार चक्र पर लेटे हुए दिखाया गया है, जिसके सात फन टूटे हुए हैं, जो उनके मुकुट वाले सिर पर छाया बना रहे हैं। लक्ष्मी विष्णु के चरणों में एक ऊंचे आसन पर बैठी हैं। अन्य देवताओं और दैवीय देवताओं को छवि के शीर्ष पर दर्शाया गया है। विष्णु का बायां हाथ टूटा हुआ है। छवि के निचले हिस्से पर मछलियाँ उकेरी गई हैं। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशी क्षत्रियो द्वारा निर्मित कटारमल सूर्य मंदिर उत्तराखंड में पाया गया।

भगवान सूर्य सम्पदम मुद्रा में खड़े हैं। उन्होंने कान की बाली, हार, बड़ी माला और सूती धागे की एक डोरी से बनी यज्ञोपवीत पहन रखी है। चेहरे और शरीर पर तेज हैं।

सूर्य

सम्पदम मुद्रा में खड़े हैं। उन्होंने लम्बा मुकुट, कान की बाली, हार, चूड़ियाँ, करधनी, बाजूबंद और बड़ी माला पहन रखी है। अपने दोनों ऊपरी हाथों में उन्होंने पुष्प धारण कर रखे हैं। बायाँ निचला हाथ टूटा हुआ है और दूसरा निचला हाथ वरद मुद्रा में है। प्रतिमा के ऊपरी भाग पर अलंकृत आभा के साथ-साथ विनाद भी दर्शाया गया है।

पूर्ण खिले हुए कमल पुष्पों के गुच्छे के साथ खड़ी मुद्रा में दो भुजाओं वाले सूर्य की छवि। उन्हें मुकुट, हार, बाजूबंद और कमरबंद से सजाया गया है। निचला वस्त्र घुटनों तक नीचे दिखाया गया है। दोनों ओर परिचारक दंडी और पिंगल को दर्शाया गया है। सूर्य के सिर के पीछे एक सुसज्जित प्रभामंडल बनाया गया है। सूर्य का चेहरा, नाक और मुंह तथा दोनों हाथों की उंगलियां, तथा बगल में उपस्थित देवता के दोनों हाथ थोड़े कटे हुए हैं। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित उत्तराखंड के बैजनाथ मंदिर में पाया गया।

सूर्यदेव के दोनों हाथों में कमल का फूल है, कंधे के ऊपर दोनों ओर ब्रह्मा और शिव हैं। दोनों ओर सहायकों को दर्शाया गया है। सूर्य के रथ को अरुण सात घोड़ों की मदद से खींच रहे है। प्रतिमा के पेडस्टल भाग पर एक पंक्ति का शिलालेख उत्कीण है। यह सूर्यवंशी क्षत्रियों द्वारा निर्मित बैजनाथ मंदिर उत्तराखंड में पाया गया।

सूर्यदेव अपने सात घोड़ों वाले रथ पर खड़े हैं, जिसे सारथी अरुण चला रहे हैं। भगवान को उनके सभी आभूषणों और लंबे जूतों से सुसिज्जत दिखाया गया है और उन्होंने किरीट मुकुट, कुंडल, हार, बाजूबंद, करधनी और घुटने तक नीचे तक पहुंचने वाली उत्तरीय पहनी हुई है। उनकी दो पत्नियां नीचुभा और छाया को प्रत्येक तरफ त्रिभंग मुद्रा में खड़ी दिखाया गया है, जो अपने हाथ में चौरी और कमल का फूल पकड़े हुए हैं। उनके सेवक दंड और पिगल को भी निचले सिरे पर दिखाया गया है। भगवान के दोनों ओर उड़ते हुए गंधर्व हाथ जोड़े हैं, जो अपने हाथों में माला पकड़े हुए हैं। उनकी अन्य दो

पत्नियां सूर्य के सिर के दोनों तरफ धनुष पकड़े हुए दिखाई गई हैं। सूर्यवंशी क्षत्रियों द्वारा उत्तराखंड के बैजनाथ मंदिर में यह पाया गया।

दो भुजाओं वाले सूर्यदेव ने कमर तक उठाए हुए दोनों हाथों में कमल के फूलों का गुच्छा पकड़ा हुआ है। उनके दाहिने हाथ में पिंगला और बाएं हाथ में दंडी है। उन्हें सिर पर करंडा जैसा सिर-वस्त्र पहने हुए दिखाया गया है, जिसके बालों को उनके कंधों पर लटकते हुए बालों में व्यवस्थित किया गया है। भगवान को कान, गर्दन और कलाई के आभूषणों, एक अलंकृत करधनी और एक अव्यंग से सजाया गया है। उनके सेवक मुख्य देवता के समान ही कुछ हद तक कपड़े पहने हुए हैं। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित उत्तराखंड के गोपीनाथ मंदिर में गया।

शिव की त्रिमूर्ति कत्यूरी कालीन छवि, अन्य सामान्य आभूषणों के साथ जटा मुकुट से सुशोभित, अघोर मुख की प्रतिमा, मध्य सदाशिव मुख की नाक आंशिक रूप से टूटी हुई है, पीछे की ओर से ऊपरी बायां कोना कटा हुआ है।

उमा महेश्वर की कत्यूरी कालीन छवि जिसमें शिव चार भुजाओं वाले हैं जबकि देवी पार्वती दो भुजाओं में दिखाई गई हैं। शिव अपने दाहिने ऊपरी हाथ में त्रिशूल पकड़े हुए हैं जबकि बाएं ऊपरी हाथ में वस्तु गायब है। भगवान शिव का दाहिना निचला हाथ व्याख्यान मुद्रा में है जबकि बायां निचला हाथ देवी पार्वती को सहारा दे रहा है। पैनल में देवी पार्वती शिव की जांघ पर बैठी हैं और अपने दाहिने हाथ से उनके चरणों को छू रही हैं। बाएं हाथ में दिखाई गई वस्तु गायब है। मूर्तिकला से ऐसा प्रतीत होता है कि भगवान शिव कुछ समझा रहे हैं और देवी

पार्वती उसी को बहुत गंभीरता से बता रही हैं। पैनल के निचले सिरे पर गणेश, कार्तिकेय, नंदी और सिंह, दोनों ओर एक-एक खड़े दो भक्त भी दर्शाए गए हैं। शीर्ष पर दो उड़ते हुए विद्याधर भी दिखाए गए हैं।

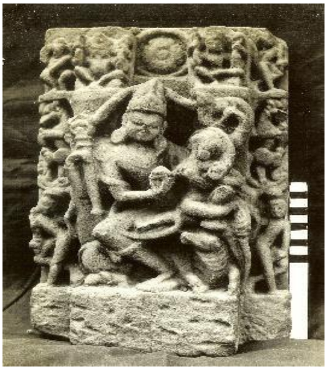

कत्यूरी कालीन मूर्ति शिव और पार्वती नंदी पर बैठे हैं। दोनों ही अलग-अलग तरह के आभूषण हैं। शिव के दाहिने ऊपरी हाथ में त्रिशूल और बाएं ऊपरी हाथ में सांप है। पार्वती अपने पैरों को मोड़कर शिव की गोद में बैठी हैं। उन्होंने अपना दाहिना हाथ शिव के कंधे पर रखा है और बायां हाथ व्याखन मुद्रा में है। मूर्ति के ऊपरी किनारे पर बाएं से दाएं गणेश और कार्तिकेय बैठे हैं।

सूर्य पद्मासन में पैर मोड़े कमल के आसन पर बैठे हैं। दोनों हाथ कंधों के बराबर उठे हुए हैं और दोनों हाथों में एक-एक पूर्ण खिले हुए कमल हैं। सूर्य को लंगड़े सारथी अरुण द्वारा खींचे जा रहे सात घोड़ों के रथ पर सवार दिखाया गया है। कार्तिकेयपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित कटारमल के सूर्य मंदिर में गया।

नवग्रहोंका एक कत्यूरी कालीन खंडित मूर्ति जिसमें केवल छह नवग्रह हैं, जिनमें से चार खड़े हैं, जबकि राहु और केतु को हमेशा की तरह दिखाया गया है। राहु और केतु के ठीक पास अंजलि मुद्रा में खड़ा एक भक्त, जिसके पीछे बाएं हाथ में तलवार पकड़े एक उड़ती हुई आकृति है।

अर्धपर्यंकासन मुद्रा में चार भुजाओं वाले ब्रह्मा की छवि। उन्होंने अपने सामने वाले बाएं हाथ में कमंडल, बाएं पीछे वाले हाथ में लंबा पात्र और दाएं पीछे वाले हाथ में करछुल पकड़ी हुई है, जबकि दायां आगे वाला हाथ वरद मुद्रा में है। भगवान ब्रह्मा को तीन सिर के साथ दर्शाया गया है, जिसके सिर पर एक विशाल अलंकृत मुकुट है। मुख्य चेहरे पर लंबी दाढ़ी और मूंछें हैं, जबकि ब्रह्मा के अन्य दो चेहरे दाढ़ी और मूंछों के बिना दिखाए गए हैं। उन्होंने ऊपरी और निचले वस्त्र के रूप में ड्रैपर और अन्य सभी सामान्य आभूषण पहने हुए हैं। भगवान शिव को दाएं ऊपरी कोने में और विष्णु को बाएं ऊपरी कोने में बैठे हुए मुद्रा में दर्शाया गया है। निचले सिरे पर प्रत्येक तरफ एक भक्त खड़ा है। आसन के पास एक हंस को दर्शाया गया है। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित बागेश्वर मंदिर में पाया गया।

इस चित्र में एक पुरुष की उड़ती हुई आकृति दिखाई गई है जो अपने बाएं हाथ में पासा जैसी चीज़ पकड़े हुए है और दायाँ हाथ सिर की ओर उठा हुआ है। स्लैब का ऊपरी हिस्सा टूटा हुआ है और मूर्ति का आधार भी आंशिक रूप से टूटा हुआ है। बागेश्वर में पाया गया।

माँदुर्गा की मूर्ति चार भुजाओं वाली मां दुर्गा अपने वाहन सिंह पर ललितासन में बैठी हैं। वे अपने बाएं हाथ में एक बर्तन और ढाल पकड़े हुए हैं, जबकि उनके दोनों दाहिने हाथ आंशिक रूप से कटे हुए हैं, जिनमें वे गुण हैं। देवी के दोनों घुटने गायब हैं। निचले सिरे पर प्रत्येक तरफ बैठी हुई मुद्रा में एक महिला भक्त को भी दिखाया गया है। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित बागेश्वर में पाया गया।

गज लक्ष्मी मां की टूटी हुई नक्काशी में दो हाथियों वाली लक्ष्मी को कमल पर खड़े दो हाथियों द्वारा अभिषेक करते हुए दिखाया गया है, जो कमल की कलियों से जड़ी एक लता से निकलते हैं। देवी ने मनकेदार बाल-बैंड, कान के आभूषण, एकावती, कलाई के कंगन, निचले वस्त्र को सहारा देने वाली एक विस्तृत करधनी और अपने वक्ष को ढकने वाली स्तनोत्तरीय से सजी एक शीर्ष शिग्नन पहनी हुई है। उसका दाहिना हाथ टूटा हुआ है। अपने उठे हुए बाएं हाथ में वह एक लता पकड़े हुए हैं जिसके ऊपर एक पूर्ण खिले हुए कमल हैं। यह मूर्ति अपनी प्लास्टिसिटी और लक्ष्मी के चेहरे की चिंतनशील अभिव्यक्ति के लिए उल्लेखनीय है। यह मूर्तिकला कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित गोपीनाथ मंदिर में मिली है।

यह मूर्ति अर्धपर्यरीका आसन में बैठे देवता कुबेर की है। मूर्ति मौसम की मार झेल चुकी है और इसका शरीर बल्बनुमा है। चूंकि मूर्ति बहुत ज़्यादा जंग खा चुकी है, इसलिए शारीरिक विशेषताओं के कारण इसे पहचानना लगभग असंभव है। फिर भी कान की बाली और यज्ञोपवीत के साथ बाएं हाथ की हथेली पर एक फूल की आकृति भी दिखाई देती है। ये कार्तिकेयपूर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित महासू मंदिर में पाया गया।

दसभुजाओं वाले वीणाधर नटराज अपने अगले हाथों में वीणा पकड़े हुए हैं। उनका सबसे निचला दाहिना हाथ टूटा हुआ है, बाकी बचे हाथों में वे निचले दाएं से दक्षिणावर्त दिशा में त्रिशूल, सर्प, डमरू, ढाल, खट्वांग, धनुष और कटोरा पकड़े हुए हैं।

यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित गोपीनाथ मंदिर में पाया गया।

चित्र में चार भुजाओं वाली पार्वती की खड़ी छवि है। देवी जटाजूट और उनके सामान्य आभूषणों से सजी हुई हैं, उनके बाएं हाथ में कमल की कलियाँ और कमंडल हैं, जबकि दाएं हाथ में कमल की कलियाँ हैं और दाएं हाथ में अक्ष माला है, जो वरद मुद्रा में है। पैरों के नीचे दो महिला भक्त हैं, जो घुटनों के बल बैठी हुई हैं और हाथ जोड़े हुए हैं। उनके सिर के चारों ओर एक गोलाकार प्रभामंडल बना हुआ है, लेकिन ऊपरी हिस्सा बुरी तरह से कुंद है। उनका चेहरा, स्तन, पैर, दाएं हाथ की महिला भक्त के स्तन कटे हुए हैं।

सिरविहीन खड़ी मां दुर्गा ने हार, लंबी माला, बाजूबंद, कलाईबंद, पायल और सजी हुई साड़ी पहनी हुई है। आठ भुजाओं वाली दुर्गा अपने दो दाहिने हाथों में तलवार और घंटी पकड़े हुए हैं, एक हाथ वरद मुद्रा में है जबकि एक दाहिना हाथ गायब है। बाएं हाथ में त्रिशूल, ढाल और एक कटी हुई वस्तु है जबकि एक बायां हाथ गायब है। दुर्गा के दोनों ओर चौरी-वाहक महिला परिचारिकाएँ भी हैं। वह कमल के आसन पर खड़ी हैं। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित कटारमल सूर्य मंदिर में पाया गया है।

यह द्वार चौखट की बाईं भुजा है। बीच में दो पंक्तियों में नागरी शैली में आदिबद्रीनाथ का शिलालेख खुदा हुआ है, तथा नीचे त्रिभंग मुद्रा में खड़े पुरुष देवता परशुराम को उनके दाहिने हाथ में परशु धारण करते हुए दर्शायागया है।

यह मंदिर के चौखट का एक टुकड़ा है। इसमें तीन आले हैं। इस आले में विष्णु के अवतार को खड़ी अवस्था में दर्शाया गया है। केंद्र के शीर्ष पर और पैनल की दाईं ओर उभरी हुई पल्लव पात्र-लता को दर्शाया गया है। उभरी हुई पल्लव के नीचे व्याल क्रियाशील मुद्रा में है, उसके नीचे नरसिंह अवतार को दर्शाया गया है। बाईं ओर उभरी हुई आकृति पर मोटे तौर पर पुष्प रूपांकनों की नक्काशी की गई है।

दो भुजाओं वाले सूर्य की छवि, खड़े मुद्रा में, जूते पहने हुए और दोनों हाथों में पूर्ण खिले हुए कमल पकड़े हुए, वे किरीट मुकुट, कुंडल, हार, बाजूबंद, करधनी और घुटने तक नीचे तक पहुँचती हुई उत्तरीय से सुशोभित हैं। भगवान के दोनों ओर उड़ते हुए गंधर्व हैं। उनका चेहरा, हाथ की उंगलियाँ और पैर का अगला भाग आंशिक रूप से क्षत-विक्षत हैं। गंधर्वों में से एक का चेहरा पूरी तरह से कुंद है। असामान्य रूप से, उत्तरीय लटकते हुए वस्त्र में दिखाया गया खंजर जिसे आमतौर पर कमर में दर्शाया जाता है। उनकी दो पत्नियों निछुभा और छाया को प्रत्येक ओर त्रिभंग मुद्रा में हाथ में चौरी और कमल का फूल पकड़े हुए दिखाया गया है। उनके परिचारक दंड और पिंगल को भी निचले सिरे पर दिखाया गया है।

उमा महेश्वर की बैठी हुई मूर्ति जिसमें चार भुजाओं वाले शिव ललितासन में बैठे हैं जबकि दो भुजाओं वाली पार्वती शिव की बाईं जांघ पर बैठी हैं। दोनों देवताओं ने मुकुट, कान की बाली, हार, बाजूबंद, कलाई और निचले वस्त्र पहने हैं। शिव अपने दाहिने हाथ में त्रिशूल धारण करते हैं जबकि उनके सामने वाले दाहिने हाथ का गुण गायब है। शिव अपने बाएं हाथ में पांच फन वाला सांप पकड़े हुए हैं जबकि दूसरा हाथ पार्वती की कमर पर टिका हुआ है। दो भुजाओं वाली पार्वती अपने बाएं हाथ में दर्पण पकड़े हुए हैं जबकि उनका दाहिना हाथ शिव के दाहिने कंधे पर है। मुख्य छवि के नीचे, दाहिनी ओर खड़े मुद्रा में एक पुरुष भक्त के साथ बैठे गणेश की आकृति, ऋषि भृंगी एक अत्यंत बुद्धिमान व्यक्ति, विशेष रूप से प्राचीन

इतिहास या किंवदंती में शामिल, मध्य में देवी पार्वती जी हैं। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित बैजनाथ मंदिर में पाया गया है।

ललितासन मुद्रा में अपने वाहन गरुड़ पर सवार लक्ष्मी-नारायण की बैठी हुई छवि। दो भुजाओं वाली देवी लक्ष्मी को विष्णु की बायीं गोद में बैठा हुआ दिखाया गया है। दोनों देवताओं ने मुकुट, हार, माला, कान के कुंडल, बाजूबंद, मणिबंध और पायल पहनी हुई हैं। विष्णु ने बाएं पीछे वाले हाथ में चक्र पकड़ा हुआ है और बायां आगे वाला हाथ देवी के वक्षस्थल के नीचे रखा हुआ है। विष्णु के दाहिने पीछे वाले हाथ में गदा है और दाहिना आगे वाला हाथ शंख पकड़े हुए है। देवी लक्ष्मी ने सामान्य आभूषणों के साथ मुकुट और निचले वस्त्र के रूप में साड़ी पहनी हुई है। लक्ष्मी का दाहिना हाथ विष्णु के कंधे पर रखा हुआ है और बाएं हाथ में पद्मकालिका कमल की कली है। ब्रह्मा और शिव को युगल देवता के कंधे के ऊपर दर्शाया गया है। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित बैजनाथ मंदिर में पाया गया है।

खड़ी मुद्रा में भगवान विष्णु की चार भुजाओं वाली प्रतिमा। वे अपने पिछले हाथों में गदा और पूर्ण खिले हुए कमल के फूल और सामने वाले हाथों में शंख और चक्र धारण किए हुए हैं। भगवान को रत्नजड़ित आभूषणों से सजाया गया है जैसे मुकुट, एकावली, बहु कुंडलित मोती की लड़ियाँ, बाजूबंद और पवित्र धागा, कमरबंद और घुटनों तक पहुँचने वाली लंबी वैजंती माला या वनमाला। ब्रह्मा और महेश को विष्णु के सिर के ऊपर कम उभार में दर्शाया गया है। मुख्य देवता के चारों ओर विष्णु के दशावतार अवतार को दर्शाया गया है। पीठिका भाग पर एक जोड़ा भक्त भगवान विष्णु के चरणों के पास भक्ति भाव से हाथ जोड़कर खड़ा है। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित बैजनाथ मंदिर में पाया गया है।

मंदिर के पिछले द्वार पर लगी नक्काशी में शिव को ललितासन में बैठे हुए दिखाया गया है। चार भुजाओं वाले भगवान ने अपने आगे के हाथों में वीणा और पीछे के दाहिने हाथ में सर्प धारण किया हुआ है, उनका पिछला बायां हाथ पार्वती को गले लगाए हुए उनके बाएं कंधे पर टिका हुआ है। दो भुजाओं वाली पार्वती ने अपने बाएं हाथ में दर्पण धारण किया हुआ है, जबकि उनका दाहिना हाथ शिव की पीठ के पीछे से गुजरते हुए गले लगाने की क्रिया में भगवान के दाहिने कंधे पर रखा हुआ है। दिव्य युगल के नीचे बाईं ओर बैठे गणेश, बीच में दिव्य युगल को देखते हुए नंदी और दाईं ओर कार्तिकेय की छोटी आकृतियाँ दिखाई गई हैं। दिव्य युगल ने उलझे हुए बाल, स्टाइलिश कान की बालियाँ, गले के आभूषण, बाजूबंद, कलाईबंद और कमरबंद से बंधे हुए निचले वस्त्र पहने हुए हैं।

चार भुजाओं वाले वीणाधारी शिव की छवि, जो नंदी पर बैठे हैं, उनके अगले हाथों में वीणा नामक वाद्य यंत्र है। वीणा लगभग गायब है, दाहिना पिछला हाथ भी टूटा हुआ है।

यह मूर्ति का एक त्रिभुजाकार ऊपरी पैनल है। पैनल के दोनों ओर गज नामक हाथी अपने पुरुष सेवक को ऊपर उठाए हुए है। दाहिनी ओर बैठे ब्रह्मा, दूसरी ओर बैठे शिव और कोने के शीर्ष मध्य में पद्मासन में बैठे भगवान विष्णु को दर्शाया गया है। खड़े विष्णु के दाहिनी ओर उटिकुटिकासन में सूर्य और खड़े विष्णु के बाईं ओर हाथ जोड़े हुए एक भक्त को दर्शाया गया है। इसके नीचे सात ग्रहों का एक समूह है।

इस चित्र में उमा-महेश्वर को शैलीगत मुद्रा में दर्शाया गया है। चार भुजाओं वाले शिव ललितासन में बैठे हैं। वे अपने दाहिने हाथ में त्रिशूल और दाहिने हाथ में फूल पकड़े हुए हैं। उनके दोनों बाएं हाथ पार्वती की पीठ के पीछे हैं, ऊपरी बाएं हाथ में एक सर्प है, जबकि दूसरा पार्वती के बाएं कंधे पर है। दो भुजाओं वाली पार्वती, शिव के बाएं पैर पर बैठी हैं, उनके बाएं हाथ में एक दर्पण है और उनका दाहिना हाथ शिव की पीठ के पीछे से गुजरते हुए भगवान की कमर पर रखा हुआ है, जो उन्हें गले लगाने की मुद्रा में है। दिव्य युगल ने अपने व्यक्तित्व के अनुरूप आभूषण पहने हुए हैं, इसके अलावा पार्वती ने एक दुपट्टा पहना हुआ है जिसका बायां सिरा देवी की बाईं भुजा नीचे है। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित रुद्रनाथ गोपेश्वर मंदिर में पाया गया है।

शिव की त्रिमूर्ति छवि, जटा मुकुट और अन्य सामान्य आभूषणों से सुसज्जित, मूर्ति का बस्ट हिस्सा टूटा हुआ है। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित बैजनाथ मंदिर में पाया गया है।

लोहे की तलवार जंग लगी हुई है, फिर भी अच्छी हालत में है। इसमें हल्का घुमावदार ब्लेड है। 3.75 सेमी की चौड़ाई के साथ, ब्लेड के साथ एक सजावटी मूठ और हैंडल भी जुड़ा हुआ है। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित महासूु मंदिर में पाया गया है। ये 8 वी शताब्दी से 9 वी शताब्दी का है।

लोहे की तलवार जंग लगी हुई है, फिर भी अच्छी हालत में है। इसमें हल्का घुमावदार ब्लेड है। इसकी मोटाई 5 मिमी है। ब्लेड को देखकर ऐसा लगता है कि इसमें एक मूठ लगी हुई थी, जो तलवार के साथ नहीं है। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित महासू मंदिर में पाया गया है।

विवरण एक योनिपीठ जिसमें पाँच संयुक्त रूप से नक्काशीदार शिवलिंग हैं, जिसमें एक शिवलिंग बीच में है और चार उसके चारों ओर हैं। सभी शिवलिंग ऊपर से कटे हुए हैं। सभी कोनों पर गणेश की छोटी मूर्ति का चित्रण है, एक कोना गायब है जबकि योनिपीठ के बाएं मध्य सीमा में गणेश की एक और छवि दिखाई गई है। एक और महत्वपूर्ण चित्रण है जो संभवतः उसी स्थान पर गणेश के दोनों ओर नवग्रह का चित्रण है। यह सूर्यवंशी कत्यूरी कालीन द्वाराहाट में पाया गया है।

चतुर्मुख शिवलिंग, रुद्र भाग में शिव के अघोर रूप को दर्शाता है। भगवान के जटाओं को एक मनके की डोरी से सुरक्षित एक शिग्नन में खूबसूरती से सजाया गया है, जिसमें एक पदक है। हाल ही में धारण किए गए जटाओं के बालों को एक सर्प ने घेरा हुआ है। भगवान के उग्र रूप को कुत्ते और प्रमुख मूंछों द्वारा दर्शाया गया है। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित रुद्रनाथ गोपीनाथ मंदिर उत्तराखंड में पाया गया।

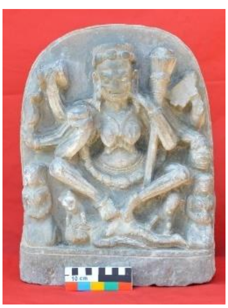

बैठे मुद्रा में चामुंडा की छह सशस्त्र छवि और उसके पैर मृत शरीर के लाश पर आराम कर रहे हैं। देवी, धनुष और उसके बाएं हाथों में कटोरा पकड़ना, जबकि एक मानव सिर, एक दांडा और एक वस्तु उसके दाहिने हाथ में विचलित हो जाती है। देवता भी एक बड़ी खोपड़ी माला पहन रही है। मृत शरीर पर आक्रमण पर शेर का चित्रण है जबकि अज्ञात में बाईं ओर स्थित जानवर का आंकड़ा। उसके घुटनों पर बैठने वाली एक महिला भक्त पैनल के प्रत्येक तरफ भी चित्रित किया गया है। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित बैजनाथ समूह के मंदिरों के उत्तराखंड में पाया जाता है।

चित्र में दो देवता कौमारी और वैष्णावी को ललितसन में बैठे। देवी उनके संबंधित वाहाना मोर मोर और गार्ड पर बैठकर। कौमारी दो सशस्त्र हैं जबकि वैष्णवी चार हैं। वैष्णवी को अपने संबंधित तीन हाथों में शंख, डिस्क और कमल की कली आयोजित करते हैं जबकि चौथे व्यक्ति वारद मुद्रा में हैं। देवी कौमारी का दाहिना हाथ गायब है, जबकि वह अपने मोर को कुछ खाद्य लेख खिला रही है। दोनों देवी ने पूर्ण अलंकृत ड्रेपी और अन्य सामान्य गहने पहने हुए चित्रित किए। यह सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित बैजनाथ मंदिर उत्तराखंड में पाया गया।

आठ सशस्त्र विष्णु भगवान की छवि जिसे विश्वरूप छवि के रूप में जाना जाता है। विष्णु अपने सामान्य गुणों के साथ त्रिभंगा मुद्रा में खड़े हैं, जो शंख, डिस्क, स्वर्ग, धनुष, मेस हेड, ढाल हैं। छवि के शीर्ष पर हायग्रीवा और ब्रहामा भी दिखाए जाते हैं। शीर्ष के बाकी हिस्सों को मानवीय आंकड़ा दर्शाया गया है जो दुनिया का प्रतिनिधित्व करता है। एक नर और मादा भक्त को भी नीचे की ओर चित्रित किया गया है। विष्णु देवी भु-देवी द्वारा समर्थित सांप सीट पर खड़े हैं। यह सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित बैजनाथ मंदिर उत्तराखंड में पाया गया।

मूर्ति में भैरव अपने वाहान कुकर पर बैठे हुए है, भैरव की चार सशस्त्र छवि को चित्रित किया। वाहान कुत्ते के साथ देवता के पैर कटा हुआ है। यह सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित बैजनाथ मंदिर उत्तराखंड में में पाया गया।

कमल के आसन पर योग-पट्टा के साथ पद्मासन में बैठे चार भुजाधारी ब्रह्मा जी की छfव है, केवल बायां ललाट वाला हाथ बचा है, बाकी हाथ टूटे हुए हैं। आसन के भाग पर दो हंसों को दर्शाया गया है। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित उत्तराखंड के बैजनाथ मंदिर में पाया गया।

देवी ब्रह्माणी कमल के आसन पर पद्मासन में बैठी हैं। उनके दाfहने हाथ में माला है, जबfक बाएं हाथ में जलपात्र है। पीfठका भाग पर दो हंस दशा ए गए हैं। यह सूर्यवंशी क्षत्रियों द्वारा निर्मित उत्तराखंड के बैजनाथ मंfदर में पाया गया।

भगवान गणेश नृत्य मुद्रा में खड़े हैं और उनकी दो भुजाएँ हैं। स्टेला के बाहरी छोर पर उड़ती हुई आकृतियाँ और एक सिरस चक्र है। मूर्ति के चार हाथ हैं और पहचान के लिए हाथों की विशेषताओं को बहुत ज़्यादा खराब किया गया है। चूँकि मूर्ति बहुत ज़्यादा जंग खा चुकी है, इसलिए शारीरिक विशेषताएँ और अलंकरण स्पष्ट रूप से दिखाई नहीं देते हैं। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित महासू मंदिर उत्तराखंड में पाया गया।

चार भुजाओं वाले गणेश जी ललितासन में बैठे हैं और उन्होंने रत्न मुकुट, मनकेदार रुद्राक्ष की माला, बाजूबंद, कंगन, यज्ञोपवीत और साँप धारण किया हुआ है। उन्होंने वस्त्र भी पहने हैं। सूंड मोदक पर टिकी हुई है। उनके दाहिने ऊपरी हाथ में अक्षमाला है जबकि दायाँ निचला हाथ उनकी जांघ पर टिका हुआ है। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित रुद्रनाथ गोपीनाथ मंदिर उत्तराखंड में पाया गया।

दो भुजाओं वाली सूर्य की खड़ी प्रतिमा, जिसमें पूर्ण खिले हुए कमल के फूल हैं। भगवान को किरीट मुकुट, गोल आकार के रत्नजड़ित कान की बाली, सपाट और मोटी और एक लंबी माला, मोटी तीन परत वाली यज्ञोपवीत और रत्नजड़ित कमरबंद से सजाया गया है। भगवान ने लंबे मुकुट पहने हैं और उनका वक्ष कवच से ढका हुआ है। ब्रह्मा और शिव को कंधे के ऊपर दोनों ओर दर्शाया गया है। उनकी पत्नी को कंधे के पास दोनों ओर दिखाया गया है और वे धनुष बनाकर अंधकार की ओर इशारा कर रही हैं। दंड, पिंगल और शार्दूल पैरों के पास खड़े हैं और भगवान सूर्य के समान ही जूते पहने हुए हैं। एक पुरुष और एक महिला भक्त भगवान सूर्य

की प्रार्थना में हाथ जोड़कर अंजलिमुद्रा में पैरों के पास बैठे हैं। भगवान के सिर के पीछे एक सजाया हुआ प्रभामंडल बनाया गया है। यह सूर्यवंशी कत्यूरी कालीन मंदिर द्वाराहाट में पाया गया।

चार भुजाओं वाले वराह अवतार विष्णु की अधूरी प्रतिमा, जिसमें वे अपने नुकीले मुंह के सामने अपने बाएं हाथ से भू-देवी पृथ्वी को थामे हुए हैं। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित प्राचीन मंदिरों के समूह में पाया गया, जिसमें शिव का मुख्य मंदिर और 17 सहायक मंदिर शामिल हैं बैजनाथ या वैद्यनाथ, गांव- बैजनाथ, तहसील गरुड़, जिला- बागेश्वर उत्तराखंड।

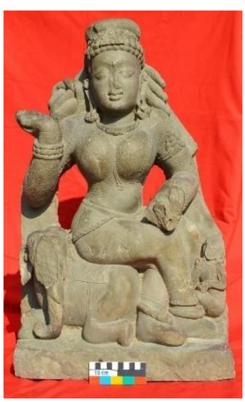

दो भुजाओं वाली देवी इंद्राणी की छवि जो अपने वाहन गज हाथी पर बैठी हैं। मूर्ति के बाएं हाथ की हथेली गायब है, बाकी मूर्तियाँ सुरक्षित हैं और अच्छी स्थिति में हैं। देवी को पूरी आस्तीन का अत्यधिक अलंकृत ऊपरी और निचला वस्त्र साड़ी और ब्लाउज पहने हुए दिखाया गया है। सामान्य आभूषणों में कान की बाली, हार, बाजूबंद और पायल शामिल हैं। बाईं ओर एक भक्त को भी बैठी हुई मुद्रा में दर्शाया गया है। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित बैजनाथ मंदिर उत्तराखंड में पाया गया।

मूर्ति में यूरोपीय शैली में बैठी हुई हाथी की पीठ पर इंद्राणी की दो भुजाओं वाली छवि दिखाई गई है। उसने लंबे कुंडल, एक टोकरा और कलाई के पट्टे पहने हैं। उसके स्तन एक स्तनोत्तरीय से ढके हुए हैं, और उसने एक साड़ी पहनी हुई है। उसके दाहिने हाथ में एक अस्पष्ट छड़ी जैसी वस्तु है जो एक माला से लिपटी हुई वज्र की स्थानीय अवधारणा है, और बाएं हाथ में उसकी गोद में बैठा एक बच्चा है, जो उसके

मातृका पहलू का संकेत देता है। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित रुद्रनाथ गोपीनाथ मंदिर उत्तराखंड में पाया गया।

कार्तिकेयपूर सूर्यवंशीयो के कुलदेवता भगवान कार्तिकेय की दो भुजाओं वाली छवि, जो अपने ऊपर उठे हुए दाहिने हाथ में भाला पकड़े हुए हैं। उनका बायाँ हाथ कमरबंद है। भगवान की सवारी मोर को उनके बाईं ओर दिखाया गया है, तथा उनके पंख राहत के निचले आधे भाग में देवता के पीछे फैले हुए हैं। उन्हें कान, गर्दन, हाथ और कलाई के आभूषणों से सजाया गया है, एक छोटी धोती, एक ढीली कमरबंद, तथा सामने एक लूप बनाते हुए एक ढीली लंगोटी। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित रुद्रनाथ गोपीनाथ मंदिर उत्तराखंड में पाया गया है।

भगवान कार्तिकेय मयूर पर अर्धपर्यंकासन मुद्रा में बैठे हैं। बालों को सजा कर जूड़ा में बांधा गया है और रत्न मुकुट से सजाया गया है। उन्होंने गोल बालियां, मोतियों की माला, लटकन के साथ ग्रैवैयक, बाजूबंद, कंगन पहने हुए हैं। वे अपने दाहिने हाथ में भाला पकड़े हुए हैं और अपने बाएं हाथ से मोर को खिला रहे हैं। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित रुद्रनाथ गोपीनाथ मंदिर उत्तराखंड में पाया गया।

चार भुजाओं वाले कार्तिकेपुर कत्यूरी राजवंश के कुलदेवता भगवान कार्तिकेय की छवि है, जो अपने वाहन मयूर पर बैठे हैं। देवता एक पांडुलिपि, एक लंबा भाला और एक छोटी गदा पकड़े हुए हैं और दूसरे हाथ से मोर को खिला रहे हैं। छवि के शीर्ष पर उड़ते हुए मालाधारी युगल को दर्शाया गया है। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित उत्तराखंड के बैजनाथ मंदिर में पाया गया।

दो भुजाओं वाले भगवान कार्तिकेय अपने वाहन मोर पर बैठे हैं। वे अपने ऊपर उठे हुए दाहिने हाथ में भाला पकड़े हुए हैं, और उनका बायाँ हाथ अपने वाहन मोर को चरा रहा है। उनके बालों में त्रिशिखा तीन लटें हैं, जिन्हें एक रत्नजड़ित हेयर बैंड से सुरक्षित किया गया है। भगवान ने कानों में बालियाँ, छोटा हार, बाजूबंद, कलाईबंद और धोती पहनी हुई है। उभरी हुई पृष्ठभूमि को सभी दिशाओं में फैले मोर के पंखों से शैलीगत रूप से अलंकृत किया गया है। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित रुद्रनाथ गोपीनाथ मंदिर उत्तराखंड में पाया गया।

इस छवि में भगवान कृष्ण द्वारा अपने बाएं हाथ से गोवर्धन पर्वत को उठाने का दृश्य दर्शाया गया है और दाहिना हाथ कमर में लटका हुआ दिखाया गया है। उनके दोनों हाथ आंशिक रूप से टूटे हुए और कटे हुए हैं। स्लैब का ऊपरी हिस्सा कटा हुआ है और निचला हिस्सा कटा हुआ है। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित उत्तराखंड के बागेश्वर मंदिर में पाया गया।

दो भुजाधारी भगवान कृष्ण अपने दाहिने हाथ से गोवर्धन पर्वत को थामे हुए हैं और बायाँ हाथ कमर पर लटकाए हुए है। प्रतिमा के दोनों ओर दो गायें दिखाई गई हैं जो भगवान इंद्र के क्रोध के कारण हुई भारी बारिश से उनकी रक्षा कर रही हैं। सिर के पीछे बनी प्रतिमा के प्रभामंडल का ऊपरी हिस्सा आंशिक रूप से टूटा हुआ है, भगवान का चेहरा विकृत है।

श्री लक्ष्मी-नारायण की यह अपरिष्कृत प्रतिमा ललितासन मुद्रा में बैठी हुई है। नारायण को कमल के आसन पर बैठे हुए दिखाया गया है और देवी बाईं ओर भगवान की गोद में बैठी हैं। नारायण अपने चार हाथों में सामान्य गुण धारण किए हुए हैं। दोनों गरुड़ पर बैठे हैं। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित सूर्य गांव को समर्पित बड़े मंदिर में पायागया।

चार भुजाओं वाले विष्णु और दो भुजाओं वाली माता लक्ष्मी की छवि, जो उड़ते हुए गरुड़ पर चढ़े हुए हैं। लक्ष्मी और विष्णु दोनों को अर्धपर्यंक आसन में दिखाया गया है। विष्णु प्रभामंडल के सिर की पृष्ठभूमि पर दिखाया गया है। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित बागेश्वर मंदिर में पाया गया।

बारह भुजाओं वाली मां महिषासुरमर्दिनी की छवि राक्षस महिषासुर का वध करती हुई। मूर्ति दो भागों में है, हालाँकि माप को एक के ऊपर एक व्यवस्थित करने के बाद दोनों खंडों के लिए एक इकाई में दर्ज किया गया है। बारह हाथों में से केवल दो आयुध के साथ बचे हैं और बाकी गायब हैं। देवी को शेर पर सवार होकर राक्षस महिष का नाश करते हुए दिखाया गया है जिसका शरीर मानव और सिर पशु का है। राक्षस महिष के सिर के ठीक ऊपर एक मानव आकृति भी दिखाई गई है जो तलवार और ढाल पकड़े हुए हमलावर मुद्रा में है। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित बागेश्वर मंदिर उत्तराखंड में पाया गया।

चार भुजाओं वाली मार महिषासुरमर्दिनी की छवि राक्षस का दमन करती हुई। वह अपने दाहिने हाथ में त्रिशूल और तलवार, ढाल और बाएं हाथ में महिषासुर के बाल पकड़े हुए हैं। उनका दाहिना पैर महिषा की पीठ पर टिका हुआ है। उनके सिर के चारों ओर एक गोलाकार प्रभामंडल दिखाया गया है। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित उत्तराखंड के बैजनाथ मंदिर में पाया गया।

मा महिषासुरमार्दिनी अलीधा मुद्रा में खड़ी हैं। उनके आठ हाथ हैं। देवी ने एक अत्यंत सजावटी मुकुट, एक बड़ा चोकर और जटिल डिजाइन वाली पोशाक पहन रखी है।

चार भुजाओं वाली मां महिषासुरमर्दिनी की खड़ी प्रतिमा, जो एक सुसज्जित मुकुट, कानों में लंबी बालियां, हार, एक लंबी गले की चेन जिसमें एक लटकन है जो स्तनों को अलग कर रही है और एक माला डिज़ाइन वाला कमरबंद पहने हुए है। उनकी निचली साड़ी फूलों के पैटर्न में खूबसूरती से सजी हुई है और उन्होंने ब्लाउज भी पहना हुआ है। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित भगवान सूर्य को समर्पित एक बड़ा मंदिर, गांव-कटारमल, जिला अल्मोड़ा उत्तराखंड में पाया गया है।

दो भुजाओं वाले ऋषि की छवि, जो अपने बाएं हाथ में कमंडल और दाएं हाथ में एक पहचानी हुई वस्तु पकड़े हुए हैं। उन्होंने अपने बाल बांधे हुए हैं जो एक विशाल पगड़ी की तरह दिखते हैं। ऋषि की छवि स्तंभ के आधे ऊपरी हिस्से पर उकेरी गई है। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित उत्तराखंड के बैजनाथ मंदिर में पाया गया।

सहस्रशिवलिंग नीचे से ऊपर की ओर क्रमशः ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र पूजाभाग को दर्शाता है। रुद्र पूजाभाग को ऊर्ध्वाधर और क्षैतिज रेखाओं के संरेखण के अनुसार हज़ार शिवलिंगों के साथ उकेरा गया है, जिससे यह एक सहस्रलिंग बन जाता है। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित रुद्रनाथ, गोपीनाथ मंदिर उत्तराखंड में पाया गय।

खुले जबड़े के साथ बैठा हुआ शेर। दांत दिखाई दे रहे हैं। शेर की पूंछ को खूबसूरती से व्यवस्थित किया गया है और पीठ की रीढ़ पर दिखाया गया है। अयाल माने की व्यवस्था कारीगरों के कलात्मक दृष्टिकोण का एक सुंदर उदाहरण है। छवि मौसम से प्रभावित है। आगे के पैर और पीछे का हिस्सा आंशिक रूप से क्षतिग्रस्त है। यह कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा निर्मित बैजनाथ मंदिर उत्तराखंड में पाया गया।

Sculpture of Vaman(vishnu)

सूर्यवंशी कत्यूरी कालीन वामन देव की एक मूर्ति।

सूर्यवंशी कत्यूरी कालीन एक महिला की छवि।

कार्तिकेयपुर सूर्यवंशीयो दवारा बनवाए गए मंदिर।

जागेश्वधाम मंदिर।

उत्तराखंड में वास्तुकला के बेहतरीन उदाहरणों में से एक, जागेश्वर धाम भगवान शिव को समर्पित मंदिरों का एक समूह है। यहां 124 बड़े और छोटे मंदिर हैं जो हरे भरे पहाड़ों और कलकल करती जटा गंगा धारा की भव्य पृष्ठभूमि के साथ बेहद खूबसूरत लगते हैं। एएसआई (भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण) के अनुसार, मंदिर गुप्तोत्तर और पूर्व-मध्ययुगीन युग का है और कहा जाता है कि यह 2500 साल पुराना है। पत्थर के शिवलिंग, पत्थर की मूर्तियां और वेदियों पर नक्काशी मंदिर का मुख्य आकर्षण हैं। मंदिर का स्थान ध्यान के लिए भी आदर्श है। जागेश्वर मंदिर समूह के निर्माण की तिथि लेकिन एएसआई के अनुसार, वे गुप्तोत्तर और पूर्व-मध्ययुगीन युग के हैं और अनुमान है कि वे लगभग 2500 साल पुराने हैं और भारत के सबसे पुराने मंदिरों में से एक हैं। ये मंदिर 8वीं शताब्दी (प्रारंभिक कत्यूरी राजवंश) से लेकर 18वीं शताब्दी (चंद राजवंश) तक के हैं। मंदिरों का जीर्णोद्धार सूर्यवंशी कार्तिकेयपुर-कत्यूरी राजा शालिवाहनदेव के शासनकाल के दौरान किया गया था। कार्तिकेयपुर-कत्यूरी राजाओं ने मंदिर के पुजारियों को इसके रखरखाव के लिए गाँव दान में दिए थे। जागेश्वर पतित पावन जटागंगा के तट पर समुद्रतल से लगभग 6200 फुट की ऊंचाई पर स्थित जागेश्वर धाम में करीब ढाई सौ छोटे-बड़े मन्दिर हैं। मुख्य परिसर में 125 मन्दिरों का समूह है। भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग के अनुसार इन मन्दिरों के निर्माण कार्तिकेयपुर सूर्यवंशीयो द्वारा कराया गया था। जटा गंगा के तट पर स्थित जागेश्वर धाम को भगवान शिव की तपोस्थली कहा जाता है। हालांकि इसके ज्योतिर्लिंग होने को लेकर अलग-अलग मान्यताएं हैं। ऋग्वेद में वर्णित "नागेशं दारुकावने" के आधार पर इसे दसवां ज्योतिर्लिंग माना जाता है और पुराणों में इसे हाटकेश्वर कहा गया है। रुद्र संहिता में उल्लिखित "दारुकावने नागेशं" का स्थान गुजरात के द्वारका से करीब 17 किलोमीटर दूर है और इसे ही बारह ज्योतिर्लिंगों में से एक माना गया है।

जागेश्वर मन्दिर को उत्तराखण्ड का पांचवां धाम भी कहा जाता है। मान्यता है कि सुर, नर, मुनि से सेवित हो भगवान भोलेनाथ यहां जागृत हुए थे इसीलिए इस जगह का नाम जागेश्वर पड़ा। इस पावनस्थली के बारे में एक श्लोक है :

मा वैद्यनाथ मनुषा व्रजन्तु, काशीपुरी शंकर बल्ल्भावां।

मायानगयां मनुजा न यान्तु, जागीश्वराख्यं तू हरं व्रजन्तु।

मनुष्य वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग न जा पाये, शंकर प्रिय काशी औरमायानगरी (हरिद्वार) भी न जा सके तो जागेश्वर धाम में भगवान शिव के दर्शन जरूर करना चाहिए। एक और मान्यता है कि सप्तऋषियों ने यहां तपस्या की थी। शिवलिंग पूजन की परम्परा भी यहां से ही शुरू हुई थी। कहा जाता है कि प्राचीन समय में जागेश्वर मन्दिर में मांगी गयी मन्नतें उसी रूप में स्वीकार हो जाती थीं जिसका भारी दुरुपयोग हो रहा था। आठवीं सदी में आदि शंकराचार्य जागेश्वर आए और उन्होंने महामृत्युंजय में स्थापित शिवलिंग को कीलित करके इस दुरुपयोग को रोकने की व्यवस्था की। कीलित किए जाने के बाद से अब यहां दूसरों के लिए बुरी कामना करने वालों की मनोकामनाएंपूरी नहीं होतीं, केवल यज्ञ एवं अनुष्ठान से मंगलकारी मनोकामनाएं ही पूरी हो सकती हैं। स्कन्द पुराण, लिंग पुराण और मार्कण्डेय पुराण में जागेश्वर की महिमा का बखान किया गया है। श्रद्धालु मानते हैं कि महामृत्युंजय मन्दिर में रुद्राभिषेक, जप आदि करने से मृत्युतुल्य कष्ट भी टल जाता है। सावन का महीना शिवजी का महीना माना जाता है, इसी कारण पूरे श्रावण मास में जागेश्वर में मेला लगा रहता है। यह मन्दिर परिसर अल्मोड़ा से करीब 35 और रानीखेत से लगभग 78 किलोमीटर दूर है। काठगोदाम रेलवे स्टेशन यहां से करीब 122 जबकि

हल्द्वानी 127 किमी दूर है। नजदीकी एयरपोर्ट पन्तनगर यहां से करीब 150 किमी पड़ता है।

बैजनाथ मंदिर समुह।

(आंशिक रूप से क्षतिग्रस्त) गोमती के तट पर आज वह स्थल है जिसे कभी सूर्यवंशी कत्यूरियों का राजधानी केंद्र हुआ करता था। इनके अलावा, एक विस्तृत क्षेत्र में बिखरे हुए वीरान मंदिर और खेतों में बिखरे पड़े या आसपास के आवासीय घरों में लगे प्राचीन संरचनाओं के अलग-अलग टुकड़े इस प्राचीन स्थल के अतीत के गौरव के सूचक अवशेष हैं। यह मंदिर-नगर लकुलेश शैव संप्रदाय का केंद्र रहा होगा और अधिकांश पुजारी उसी संप्रदाय से आए थे। पुरालेख संबंधी साक्ष्य भी इस नगर में जंगमों की उपस्थिति का संकेत देते हैं। राहुल भयंकर नाथ जोगी, जंगम राउल जोगी आदि नामों वाले शिलालेखों के बारे में बताते हैं। यह स्थल सूर्यवंशी कत्यूरियों के जोशीमठ में स्थानांतरित होने से पहले और बाद में एकीकृत राज्य स्थापित करने के लिए वापस लौटने से पहले भी उनकी राजधानी रहा।बागेश्वर में बैजनाथ मंदिर महाशिवरात्रि के दौरान

हजारों पर्यटक भगवान वैद्यनाथ (चिकित्सकों के देवता शिव) को समर्पित मंदिर के दर्शन करने के लिए इस स्थान पर आते हैं।

बैजनाथ मंदिर

मुख्य मंदिर में काले पत्थर से बनी पार्वती की एक सुंदर मूर्ति है। मंदिर तक पहुँचने के लिए नदी के किनारे से पत्थरों से बनी सीढ़ियाँ बनाई जाती हैं, जो सूर्यवंशी कत्यूरी राजवंश की रानी के आदेश पर बनाई गई थीं। मुख्य मंदिर के रास्ते में महंत के घर के ठीक नीचे बामणी का मंदिर है। मंदिर परिसर के ठीक बाहर मछलियों से भरी एक झील "गोल्डन महासीर" है और यहां मछली पकड़ना सख्त वर्जित है तथा यह एक प्रमुख पर्यटक आकर्षण है, जहां पर्यटक और तीर्थयात्री मछलियों को आटा और चना खिला सकते हैं।

बैजनाथ का इतिहास

कहा जाता है कि बैजनाथ मंदिर का निर्माण कुमाऊं के सूर्यवंशी कत्यूरी राजा करवाया था। बैजनाथ कत्यूरी राजाओं की राजधानी थी, जिन्होंने 7वीं-11वीं शताब्दी ई. तक इस क्षेत्र पर शासन किया था, तब इसे कार्तिकेयपुर के नाम से जाना जाता था और यह कत्यूर घाटी के मध्य में स्थित है।

बैजनाथ की कथा और पौराणिक कथा

हिंदू पौराणिक कथाओं के अनुसार, भगवान शिव और पार्वती का विवाह गोमती नदी और गरूर गंगा के संगम पर हुआ था। मंदिर शिव वैद्यनाथ को समर्पित हैं, जो चिकित्सकों के भगवान हैं, बैजनाथ मंदिर वास्तव में सूर्यवंशी कत्यूरी राजाओं द्वारा निर्मित एक मंदिर परिसर है जिसमें शिव, गणेश, पार्वती, चंडिका, कुबेर,

सूर्य और ब्रह्मा जी की मूर्तियाँ हैं।

कटारमल सूर्य मंदिर।

कटारमल सूर्य मन्दिर भारतवर्ष का प्राचीनतम सूर्य मन्दिर है। यह पूर्वाभिमुखी है तथा उत्तराखण्ड राज्य में अल्मोड़ा जिले के अधेली सुनार नामक गॉव में स्थित है। इसका निर्माण कार्तिकेयपुर कत्यूरी सूर्यवंशी राजवंश के तत्कालीन शासक कटारमल देव के द्वारा छठीं से नवीं शताब्दी में हुआ था। यह कुमांऊँ के विशालतम ऊँचे मन्दिरों में से एक व उत्तर भारत में विलक्षण स्थापत्य एवम् शिल्प कला का बेजोड़ उदाहरण है तथा समुद्र सतह से लगभग 1350 मीटर की ऊँचाई पर पर्वत पर स्थित है। कटारमल सूर्य मन्दिर का निर्माण कत्यूरी राजवंश के शासक कटारमल के द्वारा हुआ था। इसका निर्माण एक ऊँचे वर्गाकार चबूतरे पर है, जो भारतवर्ष में ं सूर्यदेव को समर्पित प्राचीन और प्रमुख मन्दिरों में से एक है। आज भी मन्दिर के ऊँचे खंडित शिखर को देखकर इसकी विशालता व वैभव का अनुमान स्पष्ट होता है। मुख्य मन्दिर के आस-पास 45 छोटे-बड़े मन्दिरों का समूह भी बेजोड़ है। मुख्य मन्दिर की संरचना त्रिरथ है और वर्गाकार गर्भगृह के साथ वक्ररेखी शिखर सहित निर्मित है। गर्भगृह का प्रवेश द्वार बेजोड़ काष्ठ कला द्वारा उत्कीर्ण था, जो कुछ अन्य अवशेषों के साथ वर्तमान में नई दिल्ली स्थित राष्ट्रीय संग्रहालय में प्रदर्शित है।

मंदिर अपनी अनूठी वास्तुकला के लिए प्रसिद्ध है, जो नागर और द्रविड़ वास्तुकला के जटिल डिजाइनों का एक संयोजन है। परिसर में एक मुख्य गर्भगृह और एक आसपास का गलियारा है, जो स्थानीय रूप से उत्खनित पत्थर का उपयोग करके बनाया गया है। गर्भगृह को एक आश्चर्यजनक शिखर या शिखर से सजाया गया है जो आकाश में उठता है, जो सूर्य की किरणों को स्वर्ग की ओर पहुँचने का प्रतीक है। मंदिर का लेआउट और वास्तुकला विशिष्ट खगोलीय गणनाओं के साथ डिज़ाइन किया गया है और इसका पूर्व-

पश्चिम संरेखण सूर्य की किरणों को वर्ष के विशिष्ट समय के दौरान गर्भगृह को रोशन करने की अनुमति देता है। इसे इस तरह से बनाया गया है कि सूर्य की किरणें वर्ष के कुछ दिनों में गर्भगृह के अंदर मुख्य मूर्ति पर पड़ती हैं। यह मंदिर कटारमल्ला द्वारा बनवाया गया था और यह सूर्य भगवान के अवतार को समर्पित है, जिन्हें बुरहादित या वृद्धादित्य के नाम से जाना जाता है। मंदिर की एक और प्रमुख विशेषता यह है कि यह 44 छोटे मंदिरों से घिरा हुआ है, जिन्हें अलग-अलग समय अवधि के दौरान बनाया गया था। कटारमल सूर्य मंदिर वास्तुकला का एक चमत्कार है जो श्रद्धालुओं और आगंतुकों के लिए समान रूप से धार्मिक और आध्यात्मिक महत्व रखता है।

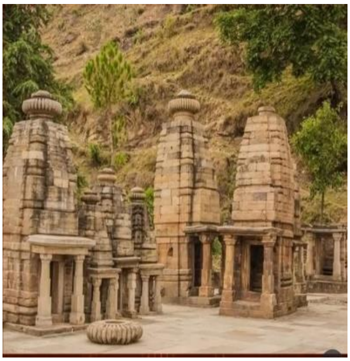

द्वारहाट मंदिर समूह।

द्वाराहाट के प्राचीन मंदिरों का अन्वेषण करें और उत्तराखंड के समृद्ध इतिहास और संस्कृति का अनुभव करें!

यहाँ 8 मंदिर समूह हैं, जिनमें लगभग 55 मंदिर हैं, जो सूर्यवंशी कत्यूरी साम्राज्य के शासन के दौरान बनाए गए थे:

गूजर देव मंदिर, बद्रीनाथ मंदिर समूह,मनियान मंदिर समूह

कचेरी मंदिर समूह, रतन देव मंदिर, मृत्युंजय मंदिर, वनदेव मंदिर, केदारनाथ मंदिर

इन मंदिरों का पुरातात्विक महत्व बहुत अधिक है। मंदिरों का निर्माण मुख्य रूप से प्री-कैम्ब्रियन ग्रेनाइट के चिनाई ब्लॉकों से किया गया है, जो आस-पास के क्षेत्र में उपलब्ध हैं। मोर्टार के बजाय, आसन्न ब्लॉकों को बांधने के लिए लोहे के क्लैंप और डॉवेल का उपयोग किया गया है। वे सभी एक दूसरे से अच्छी तरह से जुड़े हुए हैं और 1-2 घंटे में घूमे जा सकते हैं। उत्तराखंड की मनमोहक कुमाऊं पहाड़ियों में बसा द्वारहाट का शांत शहर। यह उत्तराखंड के अल्मोड़ा जिले में समुद्र तल से 1,510 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। द्वारहाट का शाब्दिक अर्थ स्थानीय भाषा में ‘स्वर्ग का रास्ता’ है। द्वारहाट का इतिहास सूर्यवंशी कत्यूरी राजवंश (700-1200 ई.) से जुड़ा हुआ है। इस अवधि के दौरान यह शहर व्यापार, वाणिज्य और संस्कृति का एक महत्वपूर्ण केंद्र था।

द्वाराहाट एवं इसके समीपवर्ती क्षेत्रों से प्राप्त अभिलेखों से निम्न राजाओं के होने की पुष्टि होती है।

गुजर देव, सुधार देव, मानदेव देव तथा सोमदेव

इनमें से गुजर देव महत्वपूर्ण राजा थे। द्वाराहाट में गुजर देव ने अपने शासनकाल में एक भव्य मंदिर का निर्माण करवाया। उत्तराखण्ड के समस्त मन्दिरों से अलग बाह्य अलंकरण के लिए यह मंदिर विशेष प्रसिद्ध है।

1.गुजर देवाल मंदिर।

गूजर देवाल मंदिर का निर्माण गुर्जर देव ने अपने शासनकाल में करवाया था। बद्रीदत्त पाण्डे के अनुसार इस मंदिर का निर्माण सूर्यवंशी कत्यूरी राजाओं के शासन काल में गूजर देव ने करवाया था। गूजर देवाल का निर्माण चबूतरे/जगती के ऊपर किया गया है। जगती

में जाड्यकुम्भ, कर्णिका, पद् पपत्र, गजथर, नरथर का अलंकरण किया गया है। कुमाऊँ के देवालयों में गूजर देवाल के अतिरिक्त बालेश्वर सुग्रेश्वर (चंपावत) व कटारमल (अल्मोड़ा) में ही जगती प्रावधान है। ऊर्ध्वछंद योजना में अलंकृत जघा भाग है। नौटियाल के अनुसार जघा भाग में अंकित प्रतिमाएँ जैन शैली के अनुरूप दर्शायी गयी हैं। मंदिर के खण्डित शिखर को देखकर प्रतीत होता है कि यह उरूश्रृगों से युक्त रहा होगा। तलछंद योजना में गर्भगृह अंतराल व अर्धमंडल है। गर्भगृह प्रतिमा विहीन है। प्रवेश द्वार का उत्तरंग में सप्तमातृका का अंकन है। स्थापत्य की शैली से यह देवालय 14 वीं शताब्दी में निर्मित प्रतीत होता है।

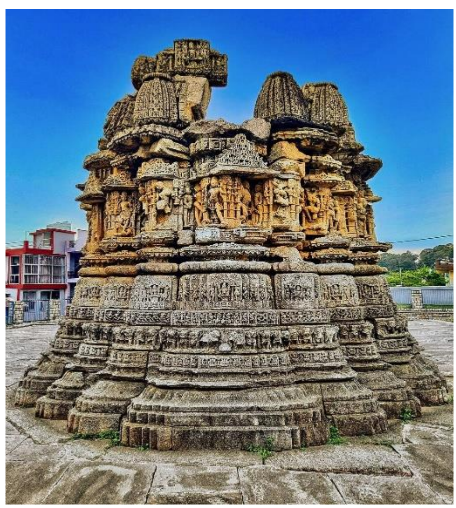

1. रतनदेव मंदिर समूह –

क्रतनदेवमंदिर

इस मंदिर में नौ मंदिर हैं। यह सभी देवालय रेखा शिखर शैली में निर्मित हैं। ऊर्ध्वछंद योजना में खुर, कुम्भ, कलश तथा कपोताली से अलंकृत वेदीबंध के ऊपर जंघा भाग निर्मित है। मंदिर का शुकनाश सादा एवं शिखर त्रिरथ है। शिखर के शीर्ष में ग्रीवा व आमलक हैं। कुछ मंदिरों में अर्द्धमंडप भी निर्मित हैं।

बद्रीनाथ मंदिर समूह –

बद्रीनाथमंदिर

मंदिर के तलचंद योजना में गर्भगृह अंतराल एवं मंडप निर्मित है। ऊर्ध्वछंद योजना में वेदीबंध के ऊपर उद्गम युक्त रथिका से युक्त जंघा भाग है। कपोताली एवं अंतरपत्र युक्त वरण्डिका के ऊपर पंचरथ रेखा शिखर है। शिखर का कर्ण पाँच भूमि आमलकों से युक्त हैं। शुकनाश सादा है। उत्तरंग में चतुर्भुजी गणेश का अंकन किया गया है। गर्भगृह में चतुर्भुजी विष्णु की स्थानक प्रतिमा स्थापित है। बद्रीनाथ मंदिर के समीप दक्षिणाभिमुख लक्ष्मी मंदिर है। जो कि रेखा शिखर शैली में निर्मित है।

कचहरी मंदिर समूह –

कचेरी

यह मंदिर समूह 12 मंदिरों से युक्त हैं। तलछंद योजना में गर्भगृह, अतराल तथा अर्द्धमंडप निर्मित है। ऊर्ध्वछंद योजना में वेदीबंध, जंघा व शिखर निर्मित हैं। त्रिरथ शिखर के ऊपर आमलक व चन्द्रशिला स्थापित है। शुकनाश अधिकांश सादे हैं। गर्भगृह प्रतिमाविहिन है। अर्द्धमंडप चार स्तम्भों पर आधारित है। स्तंभआधार अष्टकोणीय तथा ऊपर वृत्ताकार है। अर्द्धमंडप शीर्ष में प्रस्तर खण्डों से आच्छादित है। प्रवेशद्वार के उत्तरंग में गणेश का अंकन सामान्यतः किया गया है।

5. मनियान मंदिर समूह –

मनियां

वर्तमान में इस समूह के तीन मंदिर ही सुरक्षित अवस्था में हैं। रेखा शिखर शैली में निर्मित देवालयों के तलछंद योजना में गर्भगृह अतराल व अर्द्धमंडप एवं ऊर्ध्वछंद योजना में वेदीबंध, जघा व शिखर का प्रावधान है। प्रवेश द्वार के उत्तरंग में गणेश निर्मित किये गये हैं। मनियान मंदिर समूह के एक मंदिर के उत्तरंग में एक जैन तीर्थकर प्रतिमा का उल्लेख जैन द्वारा किया गया है।

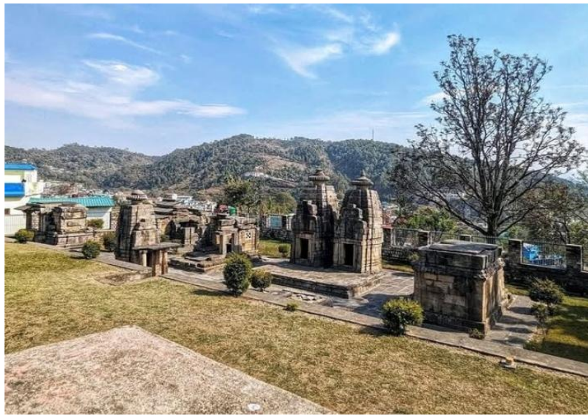

6. म ृत्यं ुजय मंदिर समूह -

मृत्युंजयमंदिर

इस समूह के मंदिरों में मृत्युंजय मंदिर ही अपने मूलरूप में है। अन्य मंदिरों के अवशेष मात्र प्राप्त होते हैं। तलछद योजना की दृष्टि से मृत्युंजय मंदिर गर्भगृह, अतराल तथा मंडप सभी वर्गाकार हैं। ऊर्ध्वछंद योजना में मंदिर की जगती का कुछ भाग जमीन में धसा है। मंदिर का जंघा भाग सादा व उसके ऊपर अंतर पत्र है, जो शिखर तथा जंघा को विभाजित कर रहा है। इस देवालय के गर्भगृह में शिवलिंग स्थापित है। पूर्वाभिमुख मंदिर का प्रवेशद्वार सादा है। तथा जिसके ललाट पर चतुर्भुजी गणेश की प्रतिमा उत्कीर्ण है। मंडप की बाहरी दायीं दीवार पर सात पंक्तियों का आरम्भिक देवनागरी लिपि में एक लेख अंकित है। द्वाराहाट में स्थित ये मंदिर समूह केवल पूजा करने के स्थान ही नहीं थे वरन् ये सांस्कृतिक जीवन के भी केन्द्र थे। मंदिरों की स्थापना तथा निर्माण से केवल वातावरण ही परिवर्तित नहीं होता बल्कि आसपास की धार्मिक प्रवृत्तियों के जागरण में सहायता भी मिलती थी। मंदिर अपनी विशालता तथा दृढ़ता से उन विचारों को स्थायित्व प्रदान करता है जिसका उद्देश्य आदर्शों तथा मूल्यों की रक्षा करना था। जिस भू-भाग में मंदिर निर्मित होता है उस क्षेत्र में बसी जनता की धार्मिक गतिविधि वहीं केन्द्रित हो जाती है।

- **गोपीनाथ मंदिर।**

● यह मंदिर भगवान शिव को समर्पित है और इसका इतिहास 9वीं और 11वीं शताब्दी के सूर्यवंशी कत्यूरी राजवंश के शासनकाल से जुड़ा है। इस अवधि को क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थापत्य और सांस्कृतिक विकास द्वारा चिह्नित किया गया था, और मंदिर उस युग की कलात्मक शक्ति का प्रमाण है। कत्यूरी सूर्यवंशी शासक, जो कला और धर्म के संरक्षण और धर्मरक्षा के लिए जाने जाते थे, सूर्यवंशीयो ने कुमाऊं और गढ़वाल क्षेत्रों में कई मंदिरों का निर्माण किया, और गोपीनाथ मंदिर उनकी स्थापत्य विरासत के बेहतरीन उदाहरणों में से एक है। मंदिर का निर्माण भगवान शिव के एक भक्त सूर्यवंशी राजा गोपीनाथ ने करवाया था। ऐसा माना जाता है कि राजा को भगवान शिव के दर्शन हुए थे और उन्होंने उन्हें मंदिर बनाने का निर्देश दिया था, जिसके कारण इसकी स्थापना हुई। यह मंदिर गढ़वाल हिमालय की विस्मयकारी सुंदरता से घिरा हुआ है, जिसमें हरी-भरी घाटियाँ, प्राचीन नदियाँ और बर्फ से ढकी चोटियाँ इसके आध्यात्मिक माहौल को बढ़ाती हैं। गोपीनाथ मंदिर अपनी लुभावनी वास्तुकला के लिए प्रसिद्ध है, जो प्राचीन भारतीय मंदिर निर्माताओं की जटिल शिल्प कौशल को दर्शाता है। मंदिर परिसर आश्चर्यजनक नक्काशी और मूर्तियों से सुसज्जित है, जो हिंदू पौराणिक कथाओं को जीवंत करती हैं। वास्तुकला की पारंपरिक उत्तर भारतीय शैली को अपनाते हुए, जिसे 'शिखर' या शिखर शैली के रूप में जाना जाता है, मंदिर का ऊंचा शिखर सांसारिक क्षेत्र और स्वर्ग के बीच संबंध का प्रतीक है। जैसे ही आप मंदिर का भ्रमण करेंगे, आप दीवारों और खंभों पर

विभिन्न देवताओं, खगोलीय प्राणियों और मनमोहक पौराणिक दृश्यों को दर्शाती विस्तृत नक्काशी से मंत्रमुग्ध हो जाएंगे। प्रत्येक नक्काशी कारीगरों के कौशल और भक्ति का प्रमाण है, जो आपको उनकी कालातीत कलात्मकता की प्रशंसा करने के लिए आमंत्रित करती है। गर्भगृह, या गर्भगृह में मुख्य देवता, शिव लिंगम विराजमान हैं। यह पवित्र स्थान मंदिर के हृदय के रूप में कार्य करता है। गोपीनाथ मंदिर में कई अनूठी विशेषताएं और रोचक तथ्य हैं जो इसके आकर्षण और ऐतिहासिक महत्व को बढ़ाते हैं। मंदिर के सबसे दिलचस्प पहलुओं में से एक मंदिर प्रांगण में एक विशाल त्रिशूल की उपस्थिति है। माना जाता है कि इस त्रिशूल को स्वयं भगवान शिव ने फेंका था और इसे एक पवित्र अवशेष माना जाता है। मंदिर में प्राचीन तांबे की प्लेटें हैं जो सदियों से विभिन्न राजाओं और भक्तों द्वारा मंदिर को दिए गए दान को दर्ज करती हैं। ये शिलालेख मंदिर के ऐतिहासिक और सांस्कृतिक महत्व के बारे में बहुमूल्य जानकारी प्रदान करते हैं। मंदिर की वास्तुकला में एक बड़ा केंद्रीय गुंबद है जो गर्भगृह का निर्माण करता है। स्वयंभू शिवलिंग, जिसे गोपीनाथ के नाम से जाना जाता है, गर्भगृह के अंदर रखा गया है और इसमें 24 दरवाजे हैं। प्रसिद्ध शिव त्रिशूल जो 5 मीटर लंबा है, मंदिर के प्रांगण के अंदर रखा गया है। मंदिर परिसर में आंशिक रूप से क्षतिग्रस्त मूर्तियाँ भी देखी जा सकती हैं। मुख्य मंदिर नागरा पैटर्न में बनाया गया है। भव्य शिलाओं से बने इस मंदिर की बनावट और वास्तुकला की प्रकृति सभी को आकर्षित करती है। मंदिर परिसर में कई छोटे-बड़े शिवलिंग मौजूद हैं। मंदिर के परिसर में माता दुर्गा, श्री गणेश और श्री हनुमान जी के मंदिर भी हैं। मंदिर परिसर में त्रिशूल (भगवान शिव का हथियार) से जुड़ी एक किंवदंती है। पौराणिक कथाओं के अनुसार, यह वही त्रिशूल है जिसे भगवान शिव ने भगवान कामदेव (प्रेम के देवता) पर फेंका था, जब उन्होंने भगवान शिव के ध्यान को भंग करने की कोशिश की थी। त्रिशूल, जो भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के तहत एक राष्ट्रीय संरक्षित स्मारक है, एक स्थान पर स्थापित है और स्थानीय निवासियों का मानना है कि इसे केवल एक सच्चे भक्त द्वारा ही हिलाया जा सकता है।

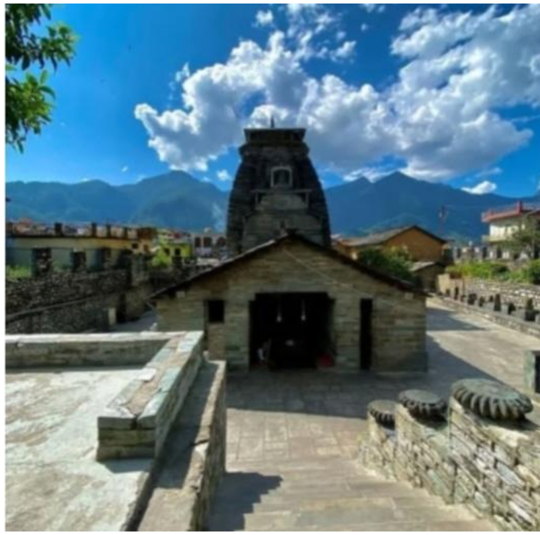

बाघनाथ मंदिर।

व्याघ्रेश्वर यानी बागनाथ के नाम से ही बागेश्वर जिले का नाम पड़ा। बागनाथ मंदिर के पास ही सरयू और गोमती नदी का संगम है। पर्वतराज हिमालय की गोद में गोमती-सरयू नदी और विलुप्त सरस्वती के संगम पर स्थित स्थल मार्कंडेय ऋषि की तपोभूमि के नाम से जाना जाता है।पुराण के अनुसार अनादिकाल में मुनि वशिष्ठ अपने कठोर तपबल से ब्रह्मा के कमंडल से निकली मां सरयू को धरती पर ला रहे थे। ब्रह्मकपाली पत्थर के पास ऋषि मार्कंडेय तपस्या में लीन थे। वशिष्ठ को ऋषि मार्कण्डेय की तपस्या भंग होने का डर सताने लगा। सरयू का जल इकट्ठा होने लगा। सरयू आगे नहीं बढ़ सकी। मुनि वशिष्ठ ने शिव की आराधना की।

शिवजी ने बाघ और पार्वती को गाय का रूप रखा। ऋषि मार्कंडेय तपस्या में लीन थे। गाय के रंभाने से मार्कंडेय मुनि की आंखें खुली, व्याघ्र से गाय को मुक्त कराने के लिए दौड़े तो व्याघ्र ने शिव और गाय ने पार्वती का रूप धारण कर लिया। इसके बाद मां पार्वती और भगवान शिव ने मार्कण्डेय ऋषि को इच्छित वर दिया और मुनि वशिष्ठ को आशीर्वाद। जिसके बाद सरयू आगे बढ़ गईंबागनाथ मंदिर का निर्माण सातवीं शताब्दी में धर्मपरायण सूर्यवंशी राजाओं द्वारा हुआ था। जबकि मंदिर के वर्तमान स्वरूप का निर्माण पंद्रहवीं-सोलहवीं शताब्दी में चंद वंश के राजा लक्ष्मी चंद ने कराया था। विभिन्न पत्थर की मूर्तियां सातवीं शताब्दी सूर्यवंशी कत्यूरी काल की हैं।

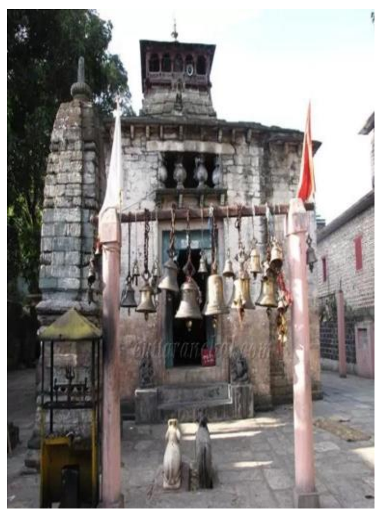

नरसिंह मंदिर।

जोशीमठ का नरसिंहदेव मंदिर सूर्यवंशी कत्यूरी राजवंश की वास्तुकला का बेहतरीन उदाहरण है, इसका निर्माण कार्तिकेयपुर सूर्यवंशी राजवंश के सम्राट वासुदेव ने सातवीं शताब्दी में कराई थी। एक कथा जोशीमठ में प्रचलित है कि, एक समय में यहां पर वासुदेव नाम के एक राजा का शासन था। एक दिन राजा शिकार खेलने के लिए वन में गए हुए थे। इसी समय भगवान नृसिंह राजा के महल में पधारे औऱ महारानी से भगवान नृसिंह ने भोजन के लिए कहा। महारानी ने आदर पूर्वक भगवान को भोजन करवाया। भोजन के पश्चात भगवान के राजा के बिस्तर पर आराम करने के लिए कहा। इस बीच राजा शिकार से लौट आए और अपने कक्ष में पहुंचे। राजा ने देखा की एक पुरुष उनके

बिस्तर पर लेटा हुआ है। राजा क्रोध से तमतमा उठा और तलवार से उस पुरुष पर वार कर दिया। तलवार लगते ही उस पुरुष के बाजू से खून की बजाय दूध बहने लगा। और पुरुष भगवान नृसिंह के रूप में बदल गया। राजा को अपनी भूल का अहसास हुआ और क्षमा याचना करने लगा। भगवान नृसिंह ने कहा कि तुमने जो अपराध किया है उसका दंड यह है कि तुम अपने परिवार के साथ जोशीमठ छोड़ दो और कत्यूर में जाकर बस जाओ। साथ ही भगवान ने कहा कि तुम्हारे प्रहार के प्रभाव से मंदिर में जो मेरी मूर्ति है उसकी एक बाजू पतली होती जाएगी और जिस दिन वह पतली होकर गिर जाएगी उस दिन राजवंश का अंत हो जाएगा।

अस्कोट का मल्लिकार्जुन मंदिर।

सीमांत जिले के ऐतिहासिक क्षेत्र अस्कोट के अंगलेख चोटी पर स्थित श्री मल्लिकार्जुन महादेव मंदिर श्रद्धालुओं की अटूट आस्था का केंद्र है। यहां स्थित स्वयं-प्रस्फुटित शिवलिग भगवान शिव के द्वादश ज्योतिर्लिंगों में से एक श्री मल्लिकार्जुन का ही अंश

माना जाता है। 19वीं शताब्दी की शुरुआत में अस्कोट रियासत पर सूर्यवंशी राजा महेन्द्र पाल द्वितीय (1807-1828) का शासन था उनकी धर्मपत्नी अस्कोट की रानी के निवेदन पर शिखर मंदिर नेपाल से एक रात नेपाल की शिखर नामक पहाड़ी की चोटी से चमकीला ज्योतिपुंज उड़कर अस्कोट के धर्मशाला इलाके के समीप स्थित मंदिर पर आ गिरा। वहां जाकर देखने पर एक विशेष प्रकार का शंख व घंटी मिली। इस घटना के कुछ दिनों बाद क्षेत्र में एक और चमत्कारिक घटना घटी। अस्कोट की चंपाचल पहाड़ी की अंगलेख चोटी पर आसपास के गांवों से यहां चरने जाने वाले मवेशियों में से एक दुधारू गाय को प्रतिदिन अपने थनों से विशेष जगह पर दूध अर्पित करते देखा था। ग्वाला उस स्थान पर गया तो वहां स्वयं-प्रस्फुटित शिवलिग दिखा। इस यह सूचना राजपरिवार तक पहुंची तो इस पहाड़ी के ठीक सामने नेपाल स्थित शिखर पहाड़ी पर विराजमान अपने ईष्ट देव श्री मल्लिकार्जुन महादेव की लीला व कृपा मान सन 1822 में वहां श्री मल्लिकार्जुन महादेव मन्दिर का निर्माण कराया। साथ ही पूर्व में नेपाल के शिखर से चमकीले ज्योतिपुंज के रूप में आए शंख व घंटी को ले जाकर विधि-विधान से शुरू हुआ पूजा-अर्चना का क्रम जारी है।

कालांतर में शनै: शनै: यह मंदिर सम्पूर्ण अस्कोट इलाके के साथ ही नेपाल सहित दूर-दूर के क्षेत्रों के लोगों के लिए अपार श्रद्धा,अगाध भक्ति व अटूट आस्था के एक प्रमुख धार्मिक स्थल के रूप में प्रसिद्ध हो गया। प्रति वर्ष कार्तिक मास की बैकुंठ चतुर्दशी को यहां एक विशाल मेला लगता है। महाशिवरात्रि व अन्य धार्मिक पर्वों पर भी यहां श्रद्धालु उमड़ते हैं। श्री मल्लिकार्जुन महादेव मन्दिर परिक्षेत्र धर्म व अध्यात्म का प्रमुख केन्द्र होने के साथ-साथ अद्भुत नैसर्गिक सौंदर्य से भी परिपूर्ण है। यहां से पूर्व में भारत-नेपाल अंतरराष्ट्रीय सीमा को रेखांकित करती महाकाली नदी के मनोहारी दृश्य, उत्तर दिशा में हिमाच्छादित गगनचुंबी पर्वत श्रंखलाओं, दक्षिण में तीतरी-बगड़ीहाट-गर्खा के हरे भरे सीढ़ीदार खेत-खलिहानों और पश्चिम में ऐतिहासिक नगरी अस्कोट के विहंगमय दृश्य को निहारना मन-मस्तिष्क को अलौकिक सुख प्रदान करता है।

बानपुर स्टेट का शिव मंदिर।

बस्ती उत्तर प्रदेश में महसों की उप शाखा कार्तिकेयपुर सूर्यवंशी की बनपुर इस्टेट द्वारा बनाया गया शिव मंदिर। बनपुर और शोहरतगढ़ के बीच वैवाहिक संबंध होने के कारण इसकी वास्तुकला शोहरतगढ़ के कलहंस-प्रतिहार के शोहरतनाथ मंदिर से मेल खाती है।

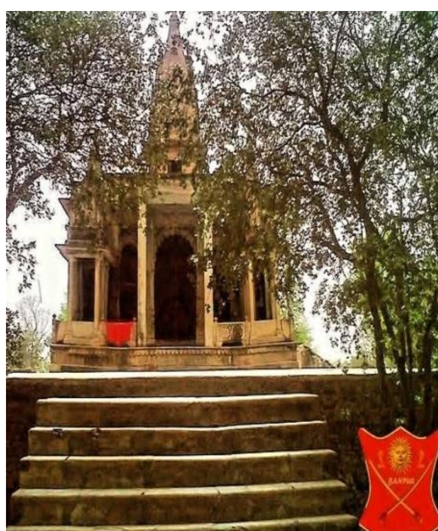

डोटी की शाखा खैरीगढ़ में बने शिव जी और काली माता के मंदिर।

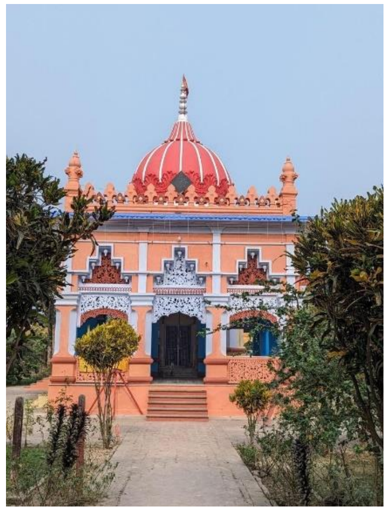

काली माता का मंदिर।

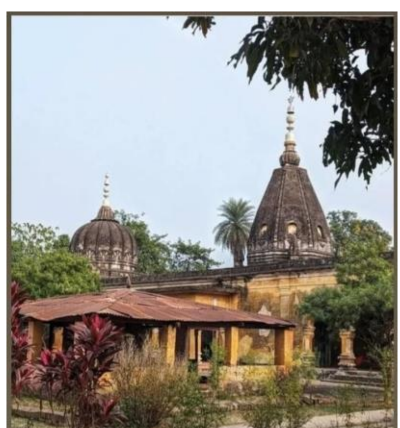

खैरीगढ़ राजभवन में बना शिव जी का मंदिर।

पांडुकेश्वर मंदिर।

यह 9 वीं शताब्दी ईस्वी में सूर्यवंशीयों द्वारा बनाए गए सबसे खूबसूरत मंदिरों में से एक है। केंद्रीय मंदिर में ध्यान में भगवान विष्णु का एक बहुत ही खूबसूरत देवता है। बस शानदार! दाईं ओर के अन्य मंदिर में प्रभुतेवा के देवता हैं, भगवान कृष्ण के पिता। बद्रीनाथ के रास्ते पर स्थित, यह एक छोटे से गांव में स्थित है जिसमें सीढ़ियां मुख्य सड़क

पर जा रही हैं। सर्दियों के दौरान, भगवान बद्रीनाथ की पूजा यहां होती है। यह सख्त ट्रेक ऊपर और नीचे के बावजूद, यात्रा की जगह में से एक है।

पांडुकेश्वर उत्तराखंड के चमोली जिले में एक पवित्र गांव है। यह बद्रीनाथ के रास्ते में 6300 फीट की ऊंचाई पर स्थित है। जोशीमठ और बद्रीनाथ के बीच स्थित यह एक प्रसिद्ध तीर्थस्थल है। पौराणिक कथाओं के अनुसार, महाभारत महाकाव्य पांडवों के पिता राजा पांडुकेश्वर ने पांडुकेश्वर की स्थापना की थी। अपने बड़े भाई धृतराष्ट्र को अपना सिंहासन सौंपने के बाद वे अपनी पत्नियों कुंती और माद्री के साथ पांडुकेश्वर में रहे। एक दिन पांडु जंगल में शिकार करने गए और गलती से एक ऋषि को मार डाला, जो हिरण के रूप में प्रेम कर रहा था। पांडुकेश्वर में दो प्रसिद्ध मंदिर शामिल हैं। योगध्यान बद्री मंदिर, सप्त बद्री के अभयारण्यों में से एक है, और दूसरा भगवान वासुदेव का मंदिर है। ऐसा माना जाता है कि पांडु ने योगध्यान बद्री के मंदिर में भगवान विष्णु की कांस्य प्रतिमा स्थापित की थी। यहाँ पाए गए ताम्रपत्रों के शिलालेखों से पता चलता है कि यहाँ पर शुरुआती कत्यूरी सूर्यवंशी राजाओं का शासन था और इस क्षेत्र को पंचाल देश के नाम से जाना जाता था, जिसे अब उत्तराखंड के नाम से जाना जाता है। यहाँ भगवान विष्णु की मूर्ति, जो कि पीठासीन देवता हैं, ध्यान मुद्रा में है और इसलिए इस छवि को योग ध्यान बद्री कहा जाता है। मूर्ति आदमकद है और इसे शालिग्राम के पत्थर से तराशा गया है। किंवदंती के अनुसार महाभारत युद्ध में अपने चचेरे भाई कौरवों को हराने और मारने के बाद पांडवों ने हस्तिनापुर को राजा परीक्षित को सौंप दिया और यहीं पर विश्राम किया। सर्दियों के दौरान जब बद्रीनाथ बंद रहता है, तो योग ध्यान बद्री मंदिर उत्सव मूर्ति के लिए शरण स्थल होता है। यहाँ से मंदिर के खुलने के लिए पवित्र जुलूस शुरू होता है।

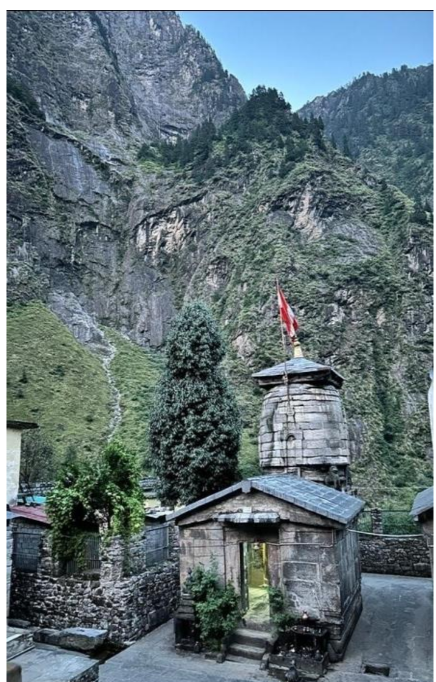

केदारनाथ मंदिर

ककेदारनाथ धाम मंदिर कत्यूरी काल में सूर्यवंशी सम्राट राजाधिराज भूदेव के द्वारा आदिशंकराचार्य के मार्गदर्शन में बनवाया गया था।

डंडेश्वर मंदिर

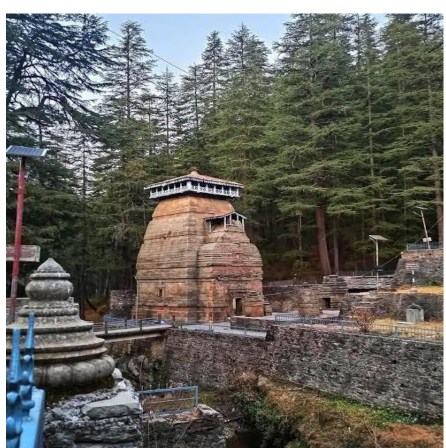

डंडेश्वर मंदिर कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो द्वारा 8 वी शताब्दी में बनवाया गया था।

गोलू देवता

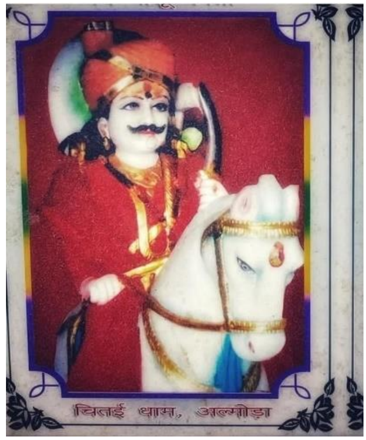

ऋग्वेद में उत्तराखंड को देवभूमि कहा गया है। ऐसी भूमि जहां देवी-देवता निवास करते हैं। हिमालय की गोद में बसे इस सबसे पावन क्षेत्र को मनीषियों की पूर्ण कर्म भूमि कहा जाता है। उत्तराखंड में देवी-देवताओं के कई चमत्कारिक मंदिर हैं। इन मंदिरों की प्रसिद्धि भारत ही नहीं बल्कि विदेशों तक फैली हुई है। क्षत्रिय वंशों में अनेक देवता समय समय पर जन्म लेते रहे है इन्हीं में से एक मंदिर गोलू देवता भी है। गोलू देवता को स्थानीय मान्यताओं में न्याय का देवता कहा जाता है। गोलू देवता को स्थानीय संस्कृति में सबसे बड़े और त्वरित न्याय के देवता के तौर पर पूजा जाता है। इन्हें राजवंशी देवता के तौर पर पुकारा जाता है। गोलू देवता को उत्तराखंड में कई नामों से पुकारा जाता है। इनमें से एक नाम गौर भैरव भी है। गोलू देवता को भगवान शिव का ही एक अवतार माना जाता है। मनोकामना पूरी होने पर मंदिर में चढ़ाई जाती है घंटी गोलू देवता को शिव और कृष्ण दोनों का अवतार माना जाता है। उत्तराखंड ही नहीं बल्कि विदेशों से भी गोलू देवता के इस मंदिर में लोग न्याय मांगने के लिए आते हैं। मंदिर की घंटियों को देखकर ही आपको इस बात का अंदाजा लग जाएगा कि यहां मांगी गई किसी भी भक्त की मनोकामना कभी अधूरी नहीं रहती। मन्नत के लिए लिखना होता है आवेदन पत्र

मंदिर में लाखों अद्भुत घंटे-घंटियों का संग्रह है। इन घंटियों को भक्त मनोकामना पूरी होने पर ही चढ़ाते हैं। चितई गोलू मंदिर में भक्त मन्नत मांगने के लिए चिट्ठी लिखते हैं। इतना ही नहीं कई लोग तो स्टांप पेपर पर लिखकर अपने लिए न्याय मांगते हैं। चितई गोलू मंदिर अल्मोड़ा से आठ किलोमीटर दूर पिथौरागढ़ हाईवे पर है। यहां गोलू देवता का

भव्य मंदिर है। मंदिर के अंदर सेफेद घोड़े में सिर पर सफेट पगड़ी बांधे गोलू देवता की प्रतिमा है, जिनके हाथों में धनुष बाण है। इस मंदिर में दूर-दूर से श्रद्धालु न्याय मांगने के लिए आते हैं। चितई गोलू देवता मंदिर, देवता को समर्पित सबसे प्रसिद्ध मंदिर है और लगभग 4 कि॰मी॰ (13,000 फीट) है बिनसर वन्यजीव अभयारण्य के मुख्य द्वार से और लगभग 10 कि॰मी॰ (33,000 फीट) अल्मोड़ा से।

दूसरा प्रसिद्ध मंदिर भवाली के पास, सैनिक स्कूल, घोड़ाखाल के बगल में स्थित है।गोलू देवता अपने घोड़े पर दूर-दूर तक यात्रा करते थे और अपने राज्य के लोगों से मिलते थे, गोलू दरबार नामक प्रथा में: गोलू देवता लोगों की समस्याओं को सुनते थे और हर संभव तरीके से उनकी मदद करते थे। उनके दिल में लोगों के लिए एक विशेष स्थान था और वह उनकी मदद के लिए हमेशा तैयार रहते थे। लोगों के प्रति अपने पूर्ण समर्पण के कारण, उन्होंने ब्रह्मचर्य के सिद्धांतों का पालन करते हुए बहुत ही सरल जीवन व्यतीत किया।

गोलू देवता आज भी अपने लोगों से मिलते हैं और कई गांवों में गोलू दरबार की प्रथा आज भी प्रचलित है, जहां गोलू देवता लोगों के सामने आते हैं, उनकी समस्याएं सुनते हैं और लोगों की हर संभव मदद करते हैं। वर्तमान समय में गोलू देवता दरबार का सबसे प्रचलित रूप जागर है। गोलू देवता के दिल में हमेशा अपने सफेद घोड़े के लिए एक विशेष स्थान था और ऐसा माना जाता है कि वह आज भी अपने सफेद घोड़े पर सवार होकर घूमते हैं। उन्हें न्याय के देवता के रूप में पूजा जाता है और वह इसे अच्छी तरह से निभाते हैं। उनका मंत्र इस प्रकार है: ‘‘जय न्याय देवता गोलज्यू तुमार जय हो।‘‘ सबुक लीजे दैण हैजे’’ (अनुवाद: ‘न्याय के देवता की जय हो: गोलज्यू!

गोलू देवता को गौर भैरव (शिव) का अवतार माना जाता है, और पूरे क्षेत्र में उनकी पूजा की जाती है। अत्यधिक आस्था वाले भक्तों द्वारा उन्हें न्याय प्रदान करने वाला माना जाता है।

ऐतिहासिक रूप से, उन्हें राजा झाल राय और उनकी पत्नी कालिंका का बहादुर पुत्र और सूर्यवंशी कत्यूरी राजा का सेनापति माना जाता है। उनके दादा हाल राय और परदादा हाल राय थे। ऐतिहासिक दृष्टि से चंपावत को गोलू देवता का उद्गम स्थल माना जाता है। उनकी मां कालिंका को दो अन्य स्थानीय देवताओं की बहन माना जाता है: हरिश्चंद

देवज्युन (चंदों के राजा हरीश की दिव्य आत्मा) और सेम देवज्युन। दोनों देवताओं को भगवान गोलू के mama भी माना जाता है।

उसके जन्म के बारे में कहानियाँ अलग-अलग जगहों पर अलग-अलग हैं, गोलू के बारे में सबसे लोकप्रिय कहानी एक स्थानीय राजा की है, जिसने शिकार करते समय अपने नौकरों को पानी की तलाश में भेजा था। नौकरों ने प्रार्थना कर रही एक महिला को परेशान किया। महिला ने गुस्से में आकर राजा को ताना मारा कि वह दो लड़ते हुए बैलों को अलग नहीं कर सकता और खुद भी ऐसा करने लगी। राजा इस कार्य से बहुत प्रभावित हुआ और उसने उस महिला से विवाह कर लिया। जब इस रानी ने एक बेटे को जन्म दिया, तो अन्य रानियाँ, जो उससे ईर्ष्या करती थीं, ने लड़के के स्थान पर एक पत्थर रख दिया और उसे पिंजरे में बंद करके नदी में बहा दिया। बच्चे का पालन-पोषण एक मछुआरे ने किया। जब लड़का बड़ा हुआ तो वह एक लकड़ी के घोड़े को लेकर नदी पर गया और रानियों के पूछने पर उसने उत्तर दिया कि यदि महिलाएं पत्थर को जन्म दे सकती हैं, तो लकड़ी के घोड़े पानी पी सकते हैं। जब राजा को इसके बारे में पता चला, तो उन्होंने दोषी रानियों को दंडित किया और लड़के को राज्याभिषेक किया, जो आगे चलकर गोलू देवता के नाम से जाना गया।

गोलू देवता को भगवान शिव के रूप में देखा जाता है, जबकि उनके भाई कलवा देवता को भैरव के रूप में और गढ़ देवी को शक्ति के रूप में देखा जाता है। उत्तराखंड के कुमाऊं और गढ़वाल क्षेत्रों के कई गांवों में गोलू देवता को एक प्रमुख देवता (कुल देवता) के रूप में भी पूजा जाता है। आम तौर पर भगवान गोलू देवता की पूजा के लिए तीन दिवसीय पूजा या 9 दिवसीय पूजा की जाती है, जिन्हें चमोली जिले में गोरेल देवता के रूप में जाना जाता है। गोलू देवता को घी, दूध, दही, हलवा, पूरी और पकौड़ी का भोग लगाया जाता है. गोलू देवता को सफेद वस्त्र, सफेद पगारी और सफेद शाल चढ़ाया जाता है।

कुमाऊं में गोलू देवता के कई मंदिर हैं, और सबसे लोकप्रिय चितई, चंपावत, घोड़ाखाल, चमरखान (तहसील तारिखेत, जिला अल्मोडा) में हैं। यह प्रचलित मान्यता है कि गोलू देवता भक्त को शीघ्र न्याय देते हैं।

गोलूदेव कई समुदायों (क्षत्रिय, दलित और ब्राह्मण) के प्रमुख देवता या इष्टदेवता हैं जो उत्तरी भारतीय क्षेत्र कुमाऊँ में रहते हैं, यह एक पहाड़ी क्षेत्र है जो पूर्व में नेपाल और उत्तर

में तिब्बत की सीमा से लगा हुआ है। गढ़वाल के साथ मिलकर, कुमाऊँ हाल ही में स्थापित भारतीय राज्य उत्तराखंड (जिसे 2000 और 2007 के बीच उत्तरांचल कहा जाता है) का निर्माण करता है, अर्थात "उत्तरी क्षेत्र" या "उत्तर की भूमि।" गोलूदेव के मुख्य मंदिर चित्तई (अल्मोड़ा जिला), घोड़ा खाल (नैनीताल जिला) और चंपावत (पिथौरागढ़ जिला) में स्थित हैं। इन मंदिरों का स्थान गोलूदेव की जीवनी से जुड़ा हुआ है, प्रत्येक मंदिर उनके जीवन की अलग-अलग घटनाओं से जुड़ा हुआ है। इसलिए, उदाहरण के लिए, चंपावत का मंदिर, जो मंदिर और उसके आसपास के मैदान के समग्र आकार के संदर्भ में तीन मंदिरों में सबसे छोटा है, को गोलूदेव के जन्मस्थान, उनके पिता, राजा झाल राय की राजधानी से जुड़ा माना जाता है। दिलचस्प बात यह है कि गोलूदेव की छवि में केवल पत्थर का एक मुकुटधारी सिर है जो जमीन से बाहर निकल रहा है। यहां के प्रभारी नाथ गोस्वामी पुजारी सिर की उपस्थिति का दावा करके समझाते हैं कि यह इस मंदिर की स्थिति से संबंधित है क्योंकि यह गोलूदेव का प्राथमिक, पहला और शायद सबसे महत्वपूर्ण मंदिर है; सिर भगवान की शक्ति और प्रभाव के स्रोत या उत्पत्ति का प्रतिनिधित्व करता है। घोड़ा खाल और चित्तई के मंदिर जिनका प्रबंधन ब्राह्मण पुजारियों द्वारा किया जाता है।

जोशी और पंथ वंश क्रमशः देवता के जीवन की घटनाओं से जुड़े हैं, जिसमें वे अपने भक्तों के जीवन में न्याय और निष्पक्षता बहाल करते हैं। ये घटनाएँ क्षेत्र भर में देवता की यात्रा को दर्शाती हैं, जो विभिन्न भौतिक स्थलों पर उनकी मूर्त उपस्थिति के कारण, उनके अधिकार क्षेत्र के तहत कुमाऊँ के राज्य और क्षेत्र के रूप में भी स्थापित हो जाता है। महत्वपूर्ण बात यह है कि उनका न्यायिक अधिकार न्याय की सराहना से प्राप्त होता है जो अन्याय के उनके अपने अनुभव से उत्पन्न होता है। उनके जीवन की कथा घटनाओं के एक क्रम का वर्णन करती है जिसमें उनके साथ क्रूरता और अन्यायपूर्ण व्यवहार किया जाता है, जन्म के समय ईर्ष्यालु सौतेली माताओं द्वारा जानबूझकर त्याग दिया जाता है और फिर राजा झाल राय के उत्तराधिकारी के रूप में उनके सही स्थान से वंचित कर दिया जाता है:

गोलूदेव सूर्यवंशी कत्यूरी राजा और उनकी आठवीं और सबसे छोटी रानी कलिंगा का इकलौता पुत्र थे, जो जंगल में रहने वाले एक साधु की दत्तक पुत्री है, लेकिन दुर्गा या काली का अवतार भी है। राजा की सात अन्य रानियाँ बांझ थी। राजा द्वारा कलिंगा और

उसके बेटे का पक्ष लेने की संभावना से भयभीत होकर, सौतेली माँएँ बेटे को कई बार मारने का असफल प्रयास करती हैं, जिसकी शुरुआत उसके जन्म से होती है, जब वे उसकी माँ की आँखों पर पट्टी बाँध देती हैं और उसके हाथ-पैर बाँध देती हैं, इस आश्वासन के साथ कि वे जन्म के दौरान उसकी और उसके बच्चे की देखभाल करेंगी। हालाँकि, जब वह बच्चे को जन्म देती है, तो वे उसके बच्चे का अपहरण कर लेते हैं, यह दावा करते हुए कि उसने बच्चे के बजाय पत्थर के ओखली और मूसल को जन्म दिया है। इस कठोर तरीके से बच्चे को एक निष्क्रिय पत्थर से बदलने के बाद, वे उसे विभिन्न तरीकों से मारने का प्रयास करते हैं, जिसमें उसे एक खलिहान में गायों द्वारा रौंदने के लिए छोड़ना, उसे नमक की खदान में दफनाना और उसे चुभने वाले बिछुआ के पत्तों में लपेटना शामिल है। अंत में, जब उसे खत्म करने के इनमें से कोई भी प्रयास काम नहीं करता, तो वे बच्चे को स्थानीय लोहार द्वारा उनके लिए बनाए गए सात तालों वाले लोहे के बक्से में काली नदी में तैरने के लिए छोड़ देते हैं। नदी के कुछ दूर नीचे, लोहे का बक्सा एक बुजुर्ग लेकिन निःसंतान मछुआरे दंपत्ति के जाल में फंस जाता है, जो अपने आश्चर्यजनक पकड़ से बहुत खुश होते हैं। इस बीच, उसकी मां कलिंगा, जिसे यह विश्वास दिलाया गया है कि उसने एक ओखल और मूसल को जन्म दिया है, इन पथरीली वस्तुओं को अपने बच्चों की तरह पालती है। अपने विनम्र पालक माता-पिता द्वारा पाले जाने के बाद, गोलूदेव एक जादुई लकड़ी के घोड़े पर सवार होकर अपने मूल घर लौटता है जिसे उसके पालक पिता ने अपने शिल्पकार मित्रों के साथ मिलकर उसके लिए बनाया है। घर के रास्ते में, वह एक झील पर अपनी सात सौतेली माताओं से मिलता है, जहाँ वे मिट्टी के बर्तनों में पानी भर रही हैं। लड़का उन्हें एक तरफ हटने के लिए कहता है ताकि उसका घोड़ा, जो लंबी यात्रा के बाद प्यासा है, पानी पी सके, लेकिन रानियां, लड़के को नहीं पहचानती हैं, उसका उपहास करती हैं, यह बताते हुए कि लकड़ी के घोड़े नहीं पी सकते। यह सुनकर, लड़का तुरंत यह बताने के लिए तैयार हो जाता है कि अगर एक महिला पत्थर के ओखली और मूसल को जन्म दे सकती है तो लकड़ी का घोड़ा भी पानी पी सकता है। इस तरह अपनी सौतेली माताओं को बेनकाब करने के बाद, लड़का राजा को साबित करता है कि वह उसका बेटा और असली उत्तराधिकारी है। सौतेली माताओं को या तो निर्वासित होने या गर्म तेल में जिंदा उबालने की सजा दी जाती है। गोलूदेव और उनकी जैविक मां, कलिंगा, झाल राय की आठवीं रानी, अपने पिता की मृत्यु के बाद जब

गोलूदेव सिंहासन पर बैठते हैं, तो वे सभी गांवों और कस्बों का दौरा करते हैं, तथा यह सुनिश्चित करते हैं कि उनकी प्रजा की चिंताओं को सुना जाए और कुमाऊं राज्य में न्याय स्थापित हो।

गोलूदेव की कथा एक प्रकार का विमर्शात्मक ढाँचा प्रदान करती है जिसके भीतर और जिसके भीतर सामाजिक न्याय की अन्य कथाएँ उभरती हैं। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, गोलूदेव की न्याय या न्याय की भावना अन्याय के अपने अनुभव से उत्पन्न होती है, लेकिन तर्क के अर्थ में न्याय से भी, जिसका उपयोग वह अपनी सौतेली माताओं के खिलाफ तर्क करने के लिए करता है, और राजा को यह साबित करने के लिए भी करता है कि कलिंग उसकी जैविक माँ है। 20 नीचे जिन याचिकाओं पर चर्चा की गई है, वे अन्याय, सामाजिक असमानता और उत्पीड़न के साथ-साथ व्यक्तिगत आकांक्षाओं से निपटने वाली विभिन्न शैलियों के "कॉर्पस" के भीतर ऐसी कथाओं का एक उदाहरण हैं। ये कथा शैलियाँ लिखित याचिकाओं से लेकर हैं जिनमें कानूनी और भक्ति संरचना है, अनुष्ठानों के दौरान सुनाई जाने वाली गाई गई कथाएँ जिनमें गोलूदेव को शामिल किया गया है, उनके मंदिरों और अन्य स्थानीय पूजा स्थलों पर सुनाई जाने वाली मौखिक कथाएँ हैं। इन कथाओं को सामूहिक रूप से इस प्राथमिक कथा के विस्तार के रूप में देखा जा सकता है जो अन्याय के सभी वर्तमान और भविष्य के "मामलों" के मुकदमे के लिए मापदंड निर्धारित करती है। गोलूदेव को मध्य हिमालयी प्रांत कुमाऊं में न्याय के देवता के रूप में पूजा जाता है। उनके मंदिरों को कानून या न्याय के "न्यायालय" के रूप में वर्णित किया गया है। इसलिए, न्याय के देवता के रूप में गोलूदेव की सराहना और "दिव्य" और "धर्मनिरपेक्ष" कानूनी प्रणालियों के बीच मौजूद संकर क्रॉसओवर के लिए, महत्वपूर्ण रूप से, गोलूदेव के मंदिर जिन्हें कानून के न्यायालय (दरबार) के रूप में वर्णित किया गया है, धर्मनिरपेक्ष कानूनी प्रणाली से अपनाई गई रैंकिंग और नामकरण का उपयोग करते हैं: चित्तई का मंदिर गोलूदेव का "सर्वोच्च न्यायालय" है, घोड़ा खाल उनका "उच्च न्यायालय" है, और चंपावत उनका "जिला न्यायालय" है। काठमांडू में काल भैरव मंदिर के मामले के समान, गोलूदेव के मंदिर एक अनुष्ठान और वैचारिक सीमा का सीमांकन करते हैं जिसमें "सत्य के कार्य" या "सत्य बोलना" केंद्रीय महत्व रखता है। जैसा कि निम्नलिखित छोटे उदाहरणों से पता चलता है, झूठ बोलना, बेईमानी, धोखाधड़ी, तथा अन्य प्रकार की कपटपूर्णता, छिपाव, तथा "अनुष्ठानगत विस्मृति",

भले ही अनजाने में हुई हो, शीघ्र ही उजागर हो जाती है तथा इनका तत्काल समाधान आवश्यक है। गोलूदेव के मंदिर तदनुसार “दिव्य न्यायालय” (देव दरबार) और “सत्य के न्यायालय” (सत्य दरबार) दोनों हैं, जिसमें “सत्य बोलना” न्याय की प्राप्ति के लिए प्राथमिक शर्तों में से एक बन जाता है। इस “कानून” का अनुप्रयोग गोलूदेव के मंदिरों के स्थानिक और अनुष्ठान क्षेत्र में प्रवेश करने वाले प्रत्येक व्यक्ति पर लागू होता है, चाहे उनकी सामाजिक स्थिति या धर्मनिरपेक्ष क्षेत्र में राजनीतिक शक्ति कुछ भी हो। इसलिए, मुझे गोलूदेव के एक भक्त ने, जो अक्सर देवता का अवतार लेते हैं, जोरदार तरीके से बताया कि अल्मोड़ा के जिला आयुक्त (डीसी) के पास चित्तई में गोलूदेव के “सर्वोच्च न्यायालय” में कोई अधिकार या अधिकार क्षेत्र नहीं होगा। वास्तव में, उन्होंने यह इंगित करना जारी रखा कि कार्यालय में डीसी के दुष्कर्म मंदिर के घेरे में जल्दी ही उजागर हो जाएंगे। इसलिए न्याय की अंतर्निहित समझ सेन की न्याय की अवधारणा से अलग और ओवरलैप होती प्रतीत होती है। चूँकि “सत्य” का “कानून” गैर-ईश्वरीय दुनिया में किसी व्यक्ति की स्थिति और शक्ति की परवाह किए बिना सार्वभौमिक रूप से लागू होता है, इसलिए यह समानता की अपनी निहित धारणा के संबंध में सेन द्वारा रेखांकित न्याय की व्यवस्था-आधारित धारणा और कांट, रॉल्स और अन्य द्वारा समर्थित पारलौकिक दृष्टिकोण के समान प्रतीत होगा। हालाँकि, यहाँ एक अंतर है कि इसमें “सत्य कहने” का अभ्यास एक अवधारणा के बजाय “सत्य के कार्य” के रूप में शामिल है: देवता समानता, न्याय और कानून के बारे में अमूर्त सूत्रों के एक सेट के आधार पर न्याय की एक सार्वभौमिक धारणा स्थापित करने के लिए तैयार नहीं है। इस अर्थ में यह न्याय के विचार के करीब पहुँचता है जो न्याय को “वास्तविक दुनिया से जोड़ता है जो उभरती है ... संगठनात्मक विशेषता से बहुत आगे जाती है।“ (सेन 2009)। इसके अलावा, महत्वपूर्ण बात यह है कि देवता और उनके क्षेत्र पर उनका अधिकार “सत्य” को बलपूर्वक या उजागर करते हुए शक्ति और स्थिति के “सांसारिक” या धर्मनिरपेक्ष संकेतों को हटा देता है। अंतर्निहित कथन यह है कि कुमाऊं और उसके बाहर के क्षेत्र में धर्मनिरपेक्ष अधिकार पर दैवीय अधिकार की प्रधानता है।

कई भक्त प्रतिदिन बहुत सारी लिखित याचिकाएँ दाखिल करते हैं, जो मंदिर को प्राप्त होती हैं। गोलज्यू उत्तराखंड के सबसे सम्मानित देवता हैं क्योंकि वह उत्तराखंड के भगवान

गणेश की तरह हैं। हर पूजा या किसी भी धार्मिक कार्य में गोलज्यू को आमंत्रित किया जाता है।

राजमाता जिया रानी की वीरगाथा।।

खैरागढ़ के कार्तिकेपुर कत्यूरी सूर्यवंशी सम्राट प्रीतमदेव की पत्नी महारानी जिया थी। कुछ किताबों में उनका नाम प्यौंला या पिंगला भी बताया जाता है। जिया रानी धामदेव (की माँ थी और प्रख्यात उत्तराखंडी लोककथा नायक 'मालूशाही' की दादी थी। प्रीतम देव 47वें कत्यूरी सूर्यवंशी राजा थे जिन्हें 'पिथौराशाही' नाम से भी जाना जाता है। इन्हीं के नाम पर वर्तमान पिथौरागढ़ जिले का नाम पड़ा।

जिया रानी

जिया रानी का वास्तविक नाम मौला देवी था, जो हरिद्वार (मायापुर) के राजा अमरदेव पुंडीर की पुत्री थी। सन 1192 में देश में तुर्कों का शासन स्थापित हो गया था, मगर उसके बाद भी किसी तरह दो शताब्दी तक हरिद्वार में पुंडीर राज्य बना रहा। मौला देवी, राजा प्रीतमपाल की दूसरी रानी थी। मौला रानी से 3 पुत्र धामदेव, दुला, ब्रह्मदेव हुए, जिनमें ब्रह्मदेव को कुछ लोग प्रीतम देव की पहली पत्नी से जन्मा मानते हैं। मौला देवी को

राजमाता का दर्जा मिला और उस क्षेत्र में माता को 'जिया' कहा जाता था इस लिए उनका नाम जिया रानी पड़ गया। पुंडीर राज्य के बाद भी यहाँ पर तुर्कों और मुगलों के हमले लगातार जारी रहे और न सिर्फ हरिद्वार बल्कि उत्तराखंड के गढ़वाल और कुमाऊँ में भी तुर्कों के हमले होने लगे। ऐसे ही एक हमले में कुमाऊँ (पिथौरागढ़) के कत्यूरी राजा प्रीतम देव ने हरिद्वार के राजा अमरदेव पुंडीर की सहायता के लिए अपने भतीजे ब्रह्मदेव को सेना के साथ सहायता के लिए भेजा जिसके बाद राजा अमरदेव पुंडीर ने अपनी पुत्री मौला देवी (रानी जिया) का विवाह कुमाऊँ के कत्यूरी राजवंश के राजा प्रीतमदेव उर्फ़ पृथ्वीपाल से कर दिया। उस समय दिल्ली में तुगलक वंश का शासन था। मध्य एशिया के लूटेरे शासक तैमूर लंग ने भारत की महान समृद्धि और वैभव के बारे में बहुत बातें सुनी थीं। भारत की दौलत लूटने के मकसद से ही उसने आक्रमण की योजना भी बनाई थी। उस दौरान दिल्ली में फ़िरोज़ शाह तुग़लक़ के निर्बल वंशज शासन कर रहे थे। इस बात का फायदा उठाकर तैमूर लंग ने भारत पर चढ़ाई कर दी। वर्ष 1398 में समरकंद का यह लूटेरा शासक तैमूर लंग, मेरठ को लूटने और रौंदने के बाद हरिद्वार की ओर बढ़ रहा था। उस समय वहाँ वत्सराजदेव पुंडीर शासन कर रहे थे। उन्होंने वीरता से तैमूर का सामना किया मगर शत्रु सेना की विशाल संख्या के आगे उन्हें हार का सामना करना पड़ा। उत्तर भारत में गंगा-जमुना-रामगंगा के क्षेत्र में तुर्कों का राज स्थापित हो चुका था। इन लुटेरों को 'रूहेले' (रूहेलखण्डी) भी कहां जाता था। रूहेले राज्य विस्तार या लूटपाट के इरादे से पर्वतों की ओर गौला नदी के किनारे बढ़ रहे थे। इस दौरान इन्होंने हरिद्वार क्षेत्र में भयानक नरसंहार किया। जबरन बड़े स्तर पर मतपरिवर्तन हुआ और तत्कालीन पुंडीर राजपरिवार को भी उत्तराखंड के नकौट क्षेत्र में शरण लेनी पड़ी जहाँ उनके वंशज आज भी रहते हैं और 'मखलोगा पुंडीर' के नाम से जाने जाते हैं। लूटेरे तैमूर ने एक टुकड़ी आगे पहाड़ी राज्यों पर भी हमला करने के लिए भेजी। जब ये सूचना जिया रानी को मिली तो उन्होंने फ़ौरन इसका सामना करने के लिए कुमाऊँ के राजपूतों की एक सेना का गठन किया। तैमूर की सेना और जिया रानी के बीच रानीबाग़ क्षेत्र में भीषण युद्ध हुआ, जिसमें तुर्क सेना की जबरदस्त हार हुई। इस विजय के बाद जिया रानी के सैनिक कुछ निश्चिन्त हो गए लेकिन दूसरी तरफ से अतिरिक्त मुस्लिम सेना आ पहुँची और इस हमले में जिया रानी की सेना की हार हुई। जिया रानी एक बेहद खूबसूरत महिला थी इसलिए हमलावरों ने उनका पीछा किया और उन्हें अपने सतीत्व की रक्षा के लिए एक गुफा में जाकर छिपना

पड़ा। जब राजा प्रीतम देव को इस हमले की सूचना मिली तो वो जिया रानी से चल रहे मनमुटाव के बावजूद स्वयं सेना लेकर आए और मुस्लिम हमलावरों को मार भगाया। इसके बाद वो जिया रानी को अपने साथ पिथौरागढ़ ले गए। पिता की मृत्यु के बाद अल्पवयस्क धामदेव उत्तराधिकारी बने। राजा प्रीतमदेव की मृत्यु के बाद पुत्र धामदेव को राज्य का कार्यभार दिया गया किन्तु धामदेव की अल्पायु की वजह से जिया रानी को उनका संरक्षक बनाया गया। इस दौरान मौला देवी (जियारानी) ने बेटे धामदेव के संरक्षक के रूप में शासन किया, रानी स्वयं शासन संबंधी निर्णय लेती थी और राजमाता होने के चलते उन्हें जिया रानी भी कहा जाने लगा। वर्तमान में जिया रानी की रानीबाग़ स्थित गुफा के बारे में एक दूसरी कथा भी प्रचलित है। कत्यूरी वंशज प्रतिवर्ष उनकी स्मृति में यहां पहुँचते हैं। कहते हैं कि कत्यूरी राजा प्रीतम देव की पत्नी रानी जिया यहाँ चित्रेश्वर महादेव के दर्शन करने आई थी। जैसे ही रानी नहाने के लिए गौला नदी में पहुँची, वैसे ही तुर्क सेना ने उन्हें घेर दिया।

इतिहासकारों के अनुसार जिया रानी बेहद खूबसूरत और सुनहरे केशों वाली सुन्दर महिला थी। नदी के जल में उसके सुनहरे बालों को पहचानकर तुर्क उन्हें खोजते हुए आए और जिया रानी को घेरकर उन्हें समर्पण के लिए मजबूर किया लेकिन रानी ने समर्पण करने से मना कर दिया।

कुछ इतिहासकार बताते हैं कि जिया रानी के पिता ने उनकी शादी राजा प्रीतम देव के साथ उनकी इच्छा के विरुद्ध की थी जबकि कुछ कथाओं के आधार पर मान्यता है कि राजा प्रीतमदेव ने बुढ़ापे में जिया से शादी की। विवाह के कुछ समय बाद जिया रानी की प्रीतम देव से अनबन हो गयी और वो अपने पुत्र के साथ गौलाघाट चली गई, जहाँ उन्होंने एक खूबसूरत रानीबाग़ बनवाया। इस जगह पर जिया रानी 12 साल तक रही थी। दूसरे इतिहासकारों के अनुसार एक दिन जैसे ही रानी जिया नहाने के लिए गौला नदी में पहुँची, वैसे ही उन्हें तुर्कों ने घेर लिया। रानी जिया शिव भक्त और सती महिला थी। उन्होंने अपने ईष्ट देवता का स्मरण किया और गौला नदी के पत्थरों में ही समा गई।

लूटेरे तुर्कों ने उन्हें बहुत ढूंढा लेकिन उन्हें जिया रानी कहीं नहीं मिली। कहते हैं उन्होंने अपने आपको अपने लहँगे में छिपा लिया था और वे उस लहँगे के आकार में ही शिला बन गई थीं। गौला नदी के किनारे आज भी एक ऐसी शिला है जिसका आकार कुमाऊँनी

पहनावे वाले लहँगे के समान हैं। उस शिला पर रंगीन पत्थर ऐसे लगते हैं मानो किसी ने रंगीन लहँगा बिछा दिया हो। वह रंगीन शिला जिया रानी का स्मृति चिन्ह माना जाता है। इस रंगीन शिला को जिया रानी का स्वरुप माना जाता है और कहा जाता है कि जिया रानी ने अपने सतीत्व की रक्षा के लिए इस शिला का ही रूप ले लिया था। रानी जिया को यह स्थान बेहद प्रिय था। यहीं उन्होंने अपना बाग़ भी बनाया था और यहीं उन्होंने अपने जीवन की आखिरी साँस भी ली थी। रानी जिया के कारण ही यह बाग़ आज रानीबाग़ नाम से मशहूर है। रानी जिया हमेशा के लिए चली गई लेकिन उन्होंने वीरांगना की तरह लड़कर आख़िरी वक्त तक तुर्क आक्रान्ताओं से अपने सतीत्व की रक्षा की। वर्तमान में प्रतिवर्ष मकर संक्रांति के अवसर पर 14 जनवरी को चित्रशिला में सैकड़ों ग्रामवासी अपने परिवार के साथ आते हैं और 'जागर' गाते हैं। इस दौरान यहाँ पर सिर्फ 'जय जिया' का ही स्वर गूंजता है। लोग रानी जिया को पूजते हैं और उन्हें 'जनदेवी' और न्याय की देवी मना जाता है। रानी जिया उत्तराखंड के कुमाऊँ क्षेत्र की एक प्रमुख सांस्कृतिक विरासत बन चुकी हैं।

जिया रानी पर लिखित एक कविता।

तलवारों की आवाजों से,हिमालय कांप गया था,
दुश्मन आँख उठा कर, हिमराज को देखा था,
तब वीर, साहसी उत्तराखंड की राजमाता ने,
तलवार उठा, दुश्मनों को रोका था,
तब मानस खंड मे कत्यूरी राजवंश था,

देवभूमि देवों की भूमि,देव तुल्य राजवंश था,
मुग़ल आये, देवभूमि मे,कत्यूरी राजवंश का शासन था,
मायापुरी की राजकुमारी,कुमाऊं की रानी थी,
नाम जिया रानी,राजा प्रीतमदेव की रानी थी,
तुगलक वंश दिल्ली की सत्ता मे,
भयानक नर संघर्ष था,रानी राज मे सब व्यर्थ था,

मुग़ल सेना लड़ते पहुंची जहाँ, जिया रानी का शासन था,

भयानक युद्ध तब,रानी बाग़ वह स्थान,

रानी विजय, मुग़ल हार गया था,

उत्तराखंड के इतिहास ने इस घटना को देखा था,

मुग़ल अपनी अतिरिक्त सेना लेकर, फिर युद्ध किया था,

रानी हार तब, रानी ने सतीत्व रक्षा के लिए,

जल विलीन होना पड़ा था,

गोला नदी का वो पत्थर,रानी जिया की याद कराता है,

रानी बाग़ वो स्थान,हर बरस मेला लगता है,

वस्त्रों मे,रंगीन शिला बन,खुद को छिपा लिया था,

कुमाऊं की रानी का वीर गीत,हिमालय आज भी गाता है

कुमाऊं की रानी का वीर गीत,हिमालय आज भी गाता है

राजा धामदेव क़ी " सागर ताल गढ़ " विजय गाथा

देवभूमि उत्तराखंड अनादि काल से ही वेदों , पुराणों ,उपनिषदों और समस्त धर्म ग्रंथों में एक प्रमुख अध्यात्मिक केद्र के रूप में जाना जाता रहा है | यक्ष, गंधर्व, नाग, किरात, किन्नरों की यह करम स्थली रही है तो भरत जैसे प्राकर्मी और चक्रवर्ती राजा की यह जन्म और क्रीडा स्थली रही है | यह प्राचीन ऋषि मुनियों – सिद्धों की तप स्थली भूमि रही है | उत्तराखंड एक और जहाँ अपने अनुपम प्राक्रतिक सौंदर्य के कारण प्राचीन काल से ही मानव जाति को को अपनी आकर्षित करता रहा है तो वहीं दूसरी और केदारखंड और मानस खंड (गढ़वाल और कुमौं) इतिहास के झरोखों में गढ़ों और भड़ों (योद्धाओं) की बलिदानी वीरों की जन्मदात्री भूमि भी कही ज़ाती रही है | महाभारत युद्ध में इस क्षेत्र के वीर राजा सुबाहु (कुलिंद का राजा) और हिडिम्बा पुत्र घटोत्कच का और अनेकों ऐसे राजा- महाराजाओं का वर्णन मिलता है जिन्होने कौरवों और पांडवों की और से युद्ध लड़ा था | नाग वीरों में यहाँ वीरंणक नाग (विनसर के वीनैंस्वर भगवान) ,जौनसार के महासू नाग (महासर नाग) जैसे वीर आज भी पूजे जाते हैं | आज भी इन्हे पौड़ी -गढ़वाल में डांडा नागराजा ,टिहरी में सेम मुखिम,कुमौं शेत्र में बेरी - नाग ,काली नाग ,पीली नाग ,मूलनाग, फेर्री नाग ,पांडूकेश्वर में में शेषनाग ,रत्गौं में भेन्कल नाग, तालोर में सांगल नाग ,भर गोवं में भांपा नाग तो नीति घाटी में लोहान देव नाग और दूँन घाटी में नाग सिद्ध का बामन नाग अदि नाम से पूजा जाता है | जो प्राचीन काल में नाग बीरो कि वीरता परिभाषित करता है | बाडाहाट (उत्तरकाशी) कि बाड़ागढ़ी के नाग बीरों कि हुणो पर विजय का प्रतीक और खैट पर्वत कि अन्चरियों कि गाथा (७ नाग पुत्रियाँ जो हुणो के साथ अंतिम साँस तक तक संघर्ष करते हुए वीरगति का प्राप्त हो गयी थी) आज भी “ शक्ति त्रिशूल “के रूप में नाग वीरों क़ी वीरता क़ी गवाही देता है तो गुजुडू गढ़ी का गर्जिया मंदिर गुर्जर और प्रतिहार वंश के वीरों का शंखनाद करता है | यूँ तो देवभूमि वीर भड़ो और गढ़ों क़ी भूमि होने के कारण अपनी हर चोटी हर घाटी में वीरों क़ी एक गाथा का इतिहास लिये हुए है जिनकी दास्तान आज भी यहाँ के लोकगीतों ,जागर गीतों आदि के रूप में गाई ज़ाती है यहाँ आज भी इन् वीरों को यहाँ आज भी देवरूप में पूजा जाता है |

उत्तराखंड के इतिहास में नाथ- सिद्ध प्रभाव प्रमुख भूमिका निभाता है क्यूंकि कार्तिकेयपुर कत्युरी वंश के राजा बसंत देव क़ी नाथ गुरु मत्स्येन्द्र नाथ (गुरु गोरख नाथ के गुरु) मे आस्था थी | १० वी शताब्दी में इन् नाथ सिद्धों ने सूर्यवंशी कत्युर वंश में अपना प्रभाव

देखते हुए नाथ सिद्ध नरसिंह देव (८४ सिद्धों मे से एक) ने कत्युर वंश के राजा से जोशीमठ राजगद्दी को दान स्वरुप प्राप्त कर उस पर गोरखनाथ क़ी पादुका रखकर ५२ गढ़ू के भवन नारसिंघों क़ी नियुक्ति क़ी जिनका उल्लेख नरसिंह वार्ता में निम्नरूप से मिलता है :

वीर बावन नारसिंह -दुध्याधारी नारसिंह ओचाली नरसिंह कच्चापुरा नारसिंह नो तीस नारसिंह -सर्प नो वीर नारसिंह -घाटे कच्यापुरी नरसिंह - -चौडिया नरसिंह- पोडया नारसिंह – जूसी नारसिंह -चौन्डिया नारसिंह कवरा नारसिंह-बांदू बीर नारसिंह- ब्रजवीर नारसिंह खदेर वीर नारसिंह – कप्पोवीर नारसिंह -वर का वीर नारसिंह -वैभी नारसिंह घोडा नारसिंह तोड्या नारसिंह -मणतोडा नारसिंह चलदो नार सिंह – चच्लौन्दो नारसिंह ,मोरो नारसिंह लोहाचुसी नारसिंह मास भरवा नारसिंह ,माली पाटन नारसिंह पौन घाटी नारसिंह केदारी नारसिंह खैरानार सिंह सागरी नरसिंह ड़ोंडिया नारसिंह बद्री का पाठ थाई -आदबद्री छाई-हरी हरी द्वारी नारसिंह -बारह हज़ार कंधापुरी को आदेश-बेताल घट वेल्मुयु भौसिया -जल मध्ये नारसिंह -वायु मध्ये नार सिंह वर्ण मध्ये नार सिंह कृष्ण अवतारी नारसिंह घरवीरकर नारसिंह रूपों नार सिंह पौन धारी नारसिंह जी सवा गज फवला जाणे-सवा मन सून की सिंगी जाणो तामा पत्री जाणो-नेत पात की झोली जाणी-जूसी मठ के वांसो नि पाई शिलानगरी को वासु नि पाई (साभार सन्दर्भ डॉ. रणबीर सिंह चौहान कृत " चौरस की धुन्याल से " , पन्ना १५-१७)

इसके साथ नारसिंह देव ने अपने राजकाज का संचालन करने और ५२ नारसिंह को मदद करने हेतु ८५ भैरव भी नियुक्त स्थापित किये इसके अलावा कई उपगढ़ भी स्थापित किये गए जिनके बीर भडौं गंगू रमोला,लोधी रिखोला ,सुरजू कुंवर ,माधो सिंह भंडारी ,तिलु रौतेली ,कफ्फु चौहान आदि के उत्तराखंड में आज भी जागर गीतौं -पवाड़ों में यशोगान होता है |

" सागर ताल गढ़ विजय गाथा "

इन्ही गढ़ों में से एक "सागर ताल गढ़ " गढ़ों के इतिहास में प्रमुख स्थान रखता है जो कि भय-संघर्ष और विजय युद्ध रूप में उत्तराखंड के भडौं कि बीरता का साक्षी रहा है जो कि सोंन नदी और रामगंगा के संगम पर कालागढ़ (काल का गढ़) दुधिया चोड़,नकुवा ताल आदि नामों से भी जाना जाता है | तराई -भावर का यह क्षेत्र तब माल प्रदेश के नाम से

जाना जाता था | उत्तराखंड के प्रामुख कत्युरी इतिहासकार डॉ० चौहान के अनुसार यह लगभग दो सो फीट लम्बा और लगभग इतना ही चौड़ा टापू पर बसा एक सात खण्डो का गढ़ था जिसके कुछ खंड जलराशि में मग्न थेय जिसके अन्दर ही अन्दर खैरा- गढ़ (समीपस्थ एक प्रमुख गढ़) और रानीबाग़ तक सुरंग बनी हुयी थी | स्थापत्य कला में में सागर ताल गढ़ गढ़ों में जितना अनुपम था उतना ही भय और आतंक के लिये भी जाना जाता था | सागर ताल गढ़ गाथा का प्रमुख नायक लखनपुर के कत्यूर सूर्यवंशी राजा प्रीतम देव(पृथिवी पाल और पृथिवी शाही आदि नामों से भी जाना जाता है) और मालवा से हरिद्वार के समीप आकर बसे पुंडीर क्षत्रिय राजा झहब राज कि सबसे छोटी पुत्री मौलादई (रानी जिया और पिंगला रानी आदि नाम से भी जानी ज़ाती है) का नाथ सिद्धों और धाम यात्राओं के पुण्य से उत्पन्न प्रतापी पुत्र धामदेव था | रानी जिया धार्मिक स्वाभाव कि प्रजा कि जनप्रिय रानी थी ,चूँकि रानी जिया के अलावा राजा पृथिवी पाल कि अन्य बड़ी रानिया भी थी जिनको धामदेव के पैदा होते ही रानी जिया से ईर्ष्या होने लगी | धीरे धीरे धामदेव बड़ा होने लगा | उस समय माल-सलाँण अक्षेत्र के सागर ताल गढ़ पर नकुवा और समुवा का बड़ा आतंक रहता था जो सन् १३६०-१३७७ ई ० के मध्य फिरोज तुगलक के अधीन आने के कारण कत्युरी राजाओं के हाथ से निकल गया था जिसके बाद से समुवा मशाण जिसे साणापुर (सहारनपुर) कि “ शिक” प्रदान कि गयी थी का आंतंक चारो तरफ छाया हुआ था ,समुवा स्त्रियों का अपरहण करके सागरतल गढ़ में चला जाता था ,और शीतकाल में कत्युरी सूर्यवंशी राजाओं का भाबर में पशुधन भी लुट लेता था , चारो और समुवा समैण का आतंक मचा रहता था |

इधर कत्युरी राजमहल में रानी जिया और धाम देव के विरुद्ध बाकी रानियौं द्वारा साजिश का खेल सज रहा था | रानियों ने धामदेव को अपने रास्ते से हटाने कि चाल के तहत राजा पृथ्वीपाल को पट्टी पढ़ानी शुरू कर दी और राजपाट के के बटवारे में रानीबाग से सागरतल गढ़ तक का भाग रानी जिया को दिलवाकर और राज को मोहपाश में बांध कर धामदेव को सागर ताल गढ़ के अबेध गढ़ को साधने हेतु उसे मौत के मुंह में भिजवा दिया |

पिंगला रानी माता जिया ने गुरु का आदेश मानकर विजय तिलक कर पुत्र धाम देव को ९ लाख कैंत्युरी सेना और अपने मायके के बीर भड ,भीमा- पामा कठैत,गोरिल राजा (जो कि गोरिया और ग्वील भी कहा जाता है और जो जिया कि बड़ी बहिन कलिन्द्रा का

पुत्र था),डोंडीया नारसिंह और भेरौं शक्ति के वीर बिजुला नैक (कत्युर राजवंश कि प्रसिद्ध राजनर्तकी छमुना -पातर का पुत्र) और निसंग महर सहित सागर ताल गढ़ विजय हेतु प्रस्थान का आदेश दिया |

धाम कि सेना ने सागर ताल गढ़ में समुवा को चारो और से घेर लिया ,इस बीच धामदेव को राजा पृथ्वीपाल कि बीमारी का समाचार मिला और उसने निसंग महर को सागर ताल को घेरे रखने कि आज्ञा देकर लखनपुर कि और रुख किया और रानियों को सबक सिखाकर लखनपुर कि गद्धी कब्ज़ा कर वापिस सागर ताल गढ़ लौट आया जहाँ समुवा कैंत्युरी सेना के भय से सागर ताल गढ़ के तहखाने में घुस गया था | ९ लाख कैंत्युरी सेना के सम्मुख अब समुवा समैण छुपता फिर रहा था | गढ़ के तहखानों में भयंकर युद्ध छिड़ गया था और खाणा और कटारों कि टक्कर से सारा सागर ताल गढ़ गूंज उठा था |युद्ध में समुवा समैण मारा गया नकुवा को गोरिल ने जजीरौं से बाँध दिया और जब बिछुवा कम्बल ओढ़ कर भागने लगा तो धाम देव ने उस पर कटार से वार कर उसे घायल कर दिया | चारो और धामदेव कि जय जयकार होने लगी | जब धामदेव ने गोरिल से खुश होकर कुछ मागने के लिये कहा तो गोरिल ने अपने पुरुष्कार में कत्युर कि राज चेलियाँ मांग ली जिससे धामदेव क्रुद्ध हो गया और गोरिल नकुवा को लेकर भाग निकला परन्तु भागते हुए धाम देव के वार से उसकी टांग घायल हो गयी थी | गोरिल ने नुकवा को लेकर खैरा गढ़ कि खरेई पट्टी के सेर बिलोना में कैद कर लिया जहाँ धामदेव से उसका फिर युद्ध हुआ और नकुवा उसके हाथ से बचकर धामदेव कि शरण में आ गया और अपने घाटों कि रक्षा का भार देकर धामदेव ने उसे प्राण दान दे दिया परन्तु बाद में जब नकुवा फिर अपनी चाल पर आ गया तो न्याय प्रिय गोरिया (गोरिल) ने उसका वध कर दिया |

सागर ताल गढ़ विजय से धामदेव कि ख्याति दूर दूर तक फ़ैल चुकी थी और मौलादेवी अब कत्युर वंश कि राजमाता मौलादई के नाम से अपनी कत्युर का राज चलाने लगी | धामदेव को दुला शाही के नाम से भी जाना जाता था वह कत्युर का मारझान (चक्रवर्ती) राजा था और उसकी राजधानी वैराठ-लखनपुर थी उसके राज में सिद्धों का पूर्ण प्रभाव था और दीवान पद पर महर जाति के वीर ,सात भाई निन्गला कोटि और सात भाई पिंगला कोटि प्रमुख थे |

धामदेव अल्पायु में कि युद्ध करते हुए शहीद हो गया था परन्तु उसकी सागर ताल गढ़ विजय का उत्सव आज भी उनके भगत जन धूमधाम से मानते है वह कत्युर वंश में प्रमुख प्रतापी राजा था जिसके काल को कत्युर वंश का स्वर्ण काल कहा जाता है जिसमे अनेकों मठ मंदिरों का निर्माण हुआ ,पुराने मंदिरों को जीर्णोद्धार किया गया और जिसने अत्याचारियों का अंत किया |

वीर धाम देव तो भूतांगी होकर चला गया परन्तु आज भी सागर ताल विजय गाथा उसकी वीरता का बखान करती है और कैंतुरी पूजा में आज भी उसकी खाणा और कटार पूजी ज़ाती है | कैंतुरी वार्ता में "रानी जिया कि खली म़ा नौ लाख कैंतुरा जरमी गयें " सब्द आज भी कैंतुरौं मैं जान फूंक कर पश्वा रूप में अवतरित हो जाता है और युद्ध सद्रश मुद्रा में नाचने लगता है धामदेव समुवा को मरने कि अभिव्यक्ति देते हैं तो नकुवा जजीरौं से बंधा होकर धामदेव से अनुनय विनय कि प्रार्थना करने लगता है तो विछुवा को काले कम्बल से छुपा कर रखा जाता है | इसके उपरान्त समैण पूजा में एक जीवित सुकर को गुफा में बंद कर दिया जाता है और रात में विछुवा समैण को अष्टबलि दी ज़ाती है जो कि घोर अन्धकार में सन्नाटे में दी ज़ाती है और फिर चुप चाप अंधेरे में गड़ंत करके बिना किसी से बात किये चुपचाप आकर एकांत में वास करते हैं और तीन दिन तक ग्राम सीमा से बहार प्रस्थान नहीं करते अन्यथा समैण लगने का भय बना रहता है | धामदेव कि पूजा के विधान से ही समुवा कि क्रूरता और उस काल में उसके भय का बोध होता है | उसके बाद दल बल के सात और शस्त्र और वाद्या यंत्रों के सात जब गढ़ के समीप दुला चोड़ में धामदेव कि पूजा होती है तो धामदेव का पश्वा और ढोल वादक गढ़ कि गुफाओं में दौड़ पड़ता है और तृप्त होने पर स्वयं जल से बहार आ जाता हैं उसके बाद बडे धूम धाम-धाम से रानी जिया कि रानीबाग स्थित समाधि "चित्रशीला " पर एक भव्य मेले का आयोजन किया जाता है |

राजुला और मालूशाही : पहाड़ की सबसे चर्चित प्रेम कहानी

कहानी शुरू होती है कुमाऊं के बैराठ यानी चौखुठिया से.. जहां कत्यूर वंश के राजा दुलाशाही का राज था. राजा के पास सब कुछ था, सिवाय एक संतान के. जिसकी वजह से वो और उनकी रानी धर्मा, बहुत दुखी रहते थे. एक रात रानी के सपने में भगवान बागनाथ आते हैं, जो उनसे कहते हैं कि उनके भाग्य में संतान सुख है. सपने में भगवान

के दर्शन पाकर रानी के मन में आस जागती है और वह बागनाथ जी के दर्शन के लिए राजा के साथ बागेश्वर के लिए निकल पड़ती है. वहां पहुंचकर उनकी मुलाकात एक और दंपत्ति से होती है, जो राजा-रानी की तरह ही संतान प्राप्ति की मन्नत लेकर वहां आए थे. यह दंपत्ति भोट के व्यापारी सुनपत शौका और उनकी पत्नी गांगुली थे.

कहते हैं दुख एक ऐसी चीज़ है जो हमें इश्वर और किसी अंजान इंसान दोनों के करीब ले आता है. यहां भी कुछ ऐसा हुआ. रानी का गांगुली का सूनापन उन दोनों को करीब ले आया. और फिर उन्होंने एक दूसरे से वादा किया कि अगर उनके बेटे-बेटी हुए, तो वे उनकी शादी करा देंगे. इस तरह नियति ने इस प्रेम कहानी की सबसे पहली नींव रखी.

समय बीता और भगवान बागनाथ के आशीर्वाद के बाद राजा दुलाशाही के घर राजकुमार मालूशाही और व्यापारी सुनपति के घर राजुला का जन्म होता है. लेकिन कुछ ही दिनों बाद एक मुसीबत दस्तक दे जाती है, राजा दुलाशाह को ज्योतिषी ने बताया कि 'राजा! तेरा पुत्र बहुरंगी है, लेकिन इसकी अल्प मृत्यु का योग है. अब इसे बचाना है तो जन्म के पांचवे दिन इसका ब्याह करना होगा.' राजा को अचानक सुनपत शौका और उनसे किया वादा याद आता है. वह फ़ौरन राजपुरोहित को सुनपत के देश रवाना कर देते हैं और आदेश देते हैं कि वह राजुला से ब्याह करने की बात तय कर आएं. राजपुरोहित के प्रस्ताव से सुनपति सहमत हो जाते हैं और फ़ौरन नवजात पुत्री राजुला का प्रतीकात्मक विवाह मालूशाही से कर दिया जाता है.

अब जब लगने लगता है कि सब ठीक हो गया है और प्रेम कहानी मुकम्मल हो गई है, तभी नियति एक नया अध्याय शुरू कर देती है. शादी के कुछ ही दिनों बाद राजा दुलाशाह की मृत्यु हो जाती है और इस मौके का फ़ायदा उठाते हुए कुछ दरबारियों ने यह अफवाह फैलानी शुरू कर दी कि जो बच्ची शादी के बाद अपने ससुर को खा गई उसके बैराठ में पाँव रखते ही अनर्थ हो जायेगा. इसलिये बड़े होने पर मालूशाही को यह बात न बताई जाए. राज्य में सभी लोग और रानी भी इस बात को मान जाते हैं और फैसला लेते हैं कि मालूशाही को राजुला के बारे में कभी नहीं बताया जाएगा.

वक़्त बीता और राजुला-मालूशाही जवान हो चले. दूसरी तरफ सुनपति शौका यह सोचकर परेशान होने लगे कि राजा दुलाशाह की ओर से कोई खोज-खबर क्यों नहीं आ रही है. एक दिन राजुला ने अपनी मां से सवाल किया कि– "मां दिशाओं में कौन दिशा

प्यारी? पेड़ों में कौन पेड़ बड़ा, गंगाओं में कौन गंगा? देवों में कौन देव? राजाओं का कौन राजा और देशों में कौन देश?"

उसकी मां ने जवाब दिया –"दिशाओं में प्यारी पूर्व दिशा, जो पृथ्वी को प्रकाशित करती है. पेड़ों में पीपल सबसे बड़ा, उसमें देवता रहते हैं. गंगाओं में सबसे बड़ी भागीरथी है, जो सबके पाप धोती है. देवताओं में सबसे बड़े देव महादेव. और राजाओं में राजा है राजा रंगीला मालूशाही और देशों में देश है रंगीला बैराठ"

मालूशाही और बैराठ का नाम सुनकर राजुला के मन में मानो बिजली सी कौंध गई. उसे ऐसा एहसास हुआ मानो बैराठ और मालूशाही से उसका कोई जन्मों का रिश्ता है. उसने तुरंत अपनी मां से कहा कि 'मां! मेरा ब्याह रंगीले बैराठ में ही करना.'

राजुला की बात सुनकर उसकी माँ थोड़ा घबरा जाती है और राजुला की बात को अनसुना कर देती है. वक्त बीतता चला जाता है और वक्त के साथ राजुला की खूबसूरती के चर्चे भी चारों दिशाओं में फैल जाते हैं. इसी बीच हूण देश का राजा विक्खीपाल सुनपति शौका को भी राजुला की खूबसूरती की भनक लग जाती है और वह उसे देखने के लिए सुनपति के घर चला जाता है. राजुला को देखकर विक्खीपाल मंत्रमुग्ध हो जाता है और अपने लिए राजुला का हाथ मांगता है. वह सुनपत को धमकाता है कि अगर उसने अपनी कन्या का विवाह उससे नहीं किया, तो वह उसके देश को उजाड़ देगा.

इसी बीच, मालूशाही ने सपने में राजुला को देखा और उसके रूप को देखकर मोहित हो गया और उसने सपने में ही राजुला को वचन दिया कि मैं एक दिन तुम्हें ब्याह कर ले जाऊँगा। यही सपना राजुला को भी हुआ, एक ओर मालुशाही का वचन और दूसरी ओर हूण राजा विक्खीपाल की धमकी, इन सब से दुखी होकर राजुला ने फैसला लिया कि वह खुद बैराठ जायेगी और मालूशाही से मिलेगी। उसने अपनी माँ से बैराठ का रास्ता पूछा, लेकिन उसकी माँ ने कहा कि बेटी तुझे तो अब हूण देश जाना है, बैराठ के रास्ते से तुझे क्या मतलब?

माँ की बात सुनकर राजुला और परेशान हो जाती है, लेकिन राजुला को अपने सपने और अहसाल पर यकीन था. वह जानती थी कि उसका और मालूशाह का ज़रूर कोई रिश्ता है. बस इसी अहसास के साथ राजुला एक दिन रात में चुपचाप एक हीरे की अंगूठी लेकर बैराठ की ओर चल पड़ती है.

पहाड़ों को लांघकर और मन में प्रेम का विश्वास लिए राजुला बैराठ चली गई. इसी बीच मालूशाही ने भी शौका देश जाकर राजुला को ब्याह कर लाने की बात अपनी माँ के सामने रखी. राजुला का नाम सुनकर रानी के पाँव तले ज़मीन खिसक गई. वह सोच में पड़ गई कि जिस नाम को उन्होंने इतने सालों तक मालूशाही से छिपा कर रखा, आखिर मालूशाही के सामने वह नाम आया कैसे.. और सिर्फ़ नाम नहीं, बल्कि बात शादी की दीवानगी तक पहुंच गई है. डर और घबराहट रानी को घेर लेता है और इसी दौरान राजुला भी मालूशाही के राज्य में पहुंच जाती है. रानी को जैसे ही राजुला के आने की खबर लगती है, वह और घबरा जाती है और वैद्य को आदेश देती है कि वह मालूशाही को कोई जड़ी-बूटी देकर सुला दे. वैद्य ऐसा ही करते हैं और मालूशाही लंबी नींद में चला जाता है. इतने में राजुला, मालूशाही के पास पहुंच जाती है, लेकिन उसे उसका मालूशाह गहरी नींद में था.

उसने मालूशाही को जगाने की बहुत कोशिश की, लेकिन वह जड़ी के असर की वजह से सोता रहा. निराश होकर राजुला ने उसे अपनी हीरे की अंगूठी पहना दी और एक पत्र उसके सिरहाने रखकर रोते-रोते अपने पिता के घर लौट गई. जड़ी का प्रभाव खत्म होते ही मालूशाही की नींद खुल गयी. होश में आने पर मालू ने अपने हाथ में राजुला की पहनाई अंगूठी देखी और वह पत्र भी पढ़ा जिसमें लिखा था कि 'हे मालू मैं तो तेरे पास आई थी, लेकिन तू तो नींद के वश में था, अगर तूने अपनी मां का दूध पिया है तो मुझे लेने हूण देश आना, क्योंकि मेरे पिता अब मुझे किसी और के संग ब्याह रहे हैं.' यह पढ़कर राजा मालूशाही टूट जाता है। राजुला के विवाह की ख़बर ने मानो उसे जीते जी मार देती है। उसे विश्वास नहीं होता कि उसकी अपनी माँ ने उसके साथ ऐसा किया. उसका मन उचट जाता है, लेकिन वह जानता था कि यह समय विलाप का नहीं बल्कि राजुला को हूण देश से वापस लाने का है और इसी खातिर वह गुरु गोरखनाथ की शरण में चला जाता है.

दरअसल हूण देश के लोग तंत्र-विद्या के महारथी थे और वह जानता था कि उनसे मुकाबला करना आसान न होगा. मालूशाही ने गोरखनाथ से हाथ जोड़ कर विनती की राजुला से मिलवाने में वो उसकी मदद करें। लेकिन गुरु गोरखनाथ भाँप चुके थे कि यह काम इतना आसान नहीं है, इसलिए उन्होंने मालूशाही से वापस जाकर राजपाठ संभालने को कहा। लेकिन, मालूशाही कहां मानने वाला था. वह प्रेम में था. वह प्रेम जो उसके

जीवन का मकसद और मर्म बन गया था। वह राजुला का दुख भी समझ रहा था और उसे इस तरह अकेले कैसे छोड़ सकता था.

मालू का प्रेम देखकर गुरु गोरखनाथ पिघल जाते हैं और मालूशाही को दीक्षा देकर, 'बोक्साड़ी विद्या' सिखाते हैं। उन्होंने मालूशाही को वे तंत्र-मंत्र भी सिखाए जिससे वह हूण और शौका देश के विष से बच सके। इसके बाद मालूशाही ने राजुला से मिलने के लिए राजपाट छोड़ा, सर मुंडाया, जोगी का वेश धर लिया और धूनी की राख शरीर में मल कर जोगी का वेश धर लिया। मालूशाही जोगी के वेश में घूमता हुआ हूण देश पहुँचा, साथ में चालाकी से अपनी कत्यूरी सेना भी लेकर गया। मालू घूमते-घूमते राजुला के महल पहुँचा, वहाँ बड़ी चहल-पहल थी, क्योंकि विक्खीपाल राजुला को ब्याह कर लाया था। मालू ने भिक्षा के लिए आवाज लगाई और उसके सामने गहनों से लदी राजुला सोने के थाल में भिक्षा लेकर आई। लेकिन जोगी एकटक राजुला को देखता रह गया, उसने अपने स्वप्न में देखी राजुला को सामने देखा, तो अवाक रह गया। उसे अपनी आँखों पर यकीन नहीं हो रहा था कि तभी वह बोल पड़ता है,"अरे रानी, तू तो बड़ी भाग्यवती है, यहाँ कहाँ से आ गई?" तभी राजुला ने जोगी की ओर अपना हाथ बढ़ाया और अपने हाथ की रेखाएँ देखकर भाग्य बताने को कहा। जोगी ने कहा कि वो बिना नाम-ग्राम जाने हाथ नहीं देखेगा.

राजुला ने उसे बताया, "मैं सुनपति शौक की लड़की राजुला हूँ, अब बता जोगी, मेरा भाग्य क्या है." जोगी बने मालूशाही ने प्यार से राजुला का हाथ अपने हाथ में लिया और कहा "तेरे भाग्य में तो रंगीलो बैराठ का मालूशाही था."

तो राजुला ने रोते हुए कहा, "हे जोगी, मेरे माँ-बाप ने तो मुझे जानवरों की तरह विक्खीपाल के पास हूण देश भेज दिया." इसके बाद मालूशाही अपना जोगी वेश उतारकर कहा, "मैंने तेरे लिए ही जोगी वेश लिया है राजुला, मैं तुझे यहाँ से ले जाने आया हूँ."

राजुला-मालूशाही, दोनों ने एक दूसरे को पहचान लिया. उनके लिए वह पल मानो रुक सा गया था. राजुला का यकीन नहीं हो रहा था कि उसके सामने उसका मालूशाही खड़ा है. दरअसल, राजुला का विश्वास कहीं न कहीं डगमगा गया था. उसे लगने लगा था कि उसका प्यार छलावा था. लेकिन मालूशाही को ऐसे सामने देखकर उसका मन दृढ़ हो

गया. वह समझ गई कि उसका प्यार सच्चा था और अब उन्हें साथ होने से कोई नहीं रोक सकता. वहीं, हूण राजा विक्खीपाल को मालूशाही के चेहरे और हाव-भाव से उसके राजा होने का संदेह हो गया और अंदेशा होने पर वो मालूशाही और उसके साथियों को मार देने की योजना बनाने लगा। राजा विक्खीपाल ने अपने सेवकों से जोगी का रूप लिए मालू और उसके साथी साधुओं के लिए हलवा-पूरी, खीर वगैरह खिलाने को कहा और मालूशाह की खीर में जहर मिलाकर उन सबको बेहोश कर दिया. इस हादसे की सूचना मिलते ही गुरु गोरखनाथ ने एक सेना के साथ हूण देश जाकर अपनी बोक्साड़ी विद्या का प्रयोग कर के मालू को जीवित कर दिया। फिर मालूशाही ने हूण राजा विक्खीपाल को उसकी सेना समेत मार गिराया.

इसके बाद मालू ने अपनी विजय का संदेश बैराठ भिजवाया, जिसके बाद राज्य को राजुला रानी के स्वागत के लिए सजाया गया. इसके बाद, मालूशाही बैराठ पहुंचा जहां पर उसने धूमधाम के साथ राजुला से शादी रचाई और दोनों हंसी-खुशी साथ रहकर प्रजा की सेवा करने लगें।।

राजुला मालूसाही पर आधारित लोकगाथा।।

(1) कुमाउनी गाथाकार कतिपय स्थानों पर भूतकाल की जगह भविष्यत काल का वर्णन करता है-

तेरी होली राणी

गॉली सौकेली

सुनपति सौका हो लौ

बड़ो अन्नी धन्नी

सुनपति शौका का

सनतान न होती

अर्थात् तेरी रानी गॉउली सौकेली होगी। सुनपति भोटिया बड़ा अन्नवान तथा धनवान होगा। सुनपति सौक की कोई संतान नहीं है।

(2) तुकबंदी के लिए प्रथम पंक्ति को निरर्थक रूप में जोड़ने का लक्षण प्रस्तुत है-

भारती भरली

दैण नौर दाथुली

वो नौर धरली

सांटी में को सूलो

झिट घड़ी जागी जावो

ऊंमी पकै लूलो (गंगनाथ गाथा)

अर्थात भरती भरेगी। दाहिने कंधे की दराती बांये पर रखेगी, सांटी में का सूल। तनिक प्रतीक्षा करो, मैं ऊंमी पकाकर लाऊंगी।

(3) साहित्य जगत में कवियों द्वारा नायिका के रूप में सौन्दर्य का वर्णन 'दिने दिने सा ववृधे शुक्ल पक्षे यथा शशी' द्वारा किया जाता है। किन्तु राजुला मालूसाही गाथा में राजुला के शैशवकाल से यौवन तक का वर्णन गाथाकार ने अपने निजी ज्ञान के आधार पर किया है-

द्वियै दिन में हो छोरी चार दिन जसी

नावान बखत छोरी, छे महैणा कसी

म्हैणन में हई गैछ बरसन कसी

चैत की करुवा कसी वन बागै छ

भदौ की भंगाल कसी बड़ण बैगे छ

पूस की पालड. कसी ओ छोरी रजुली

राजन की मुई जनमी देवातों की वैरी

ओ छोरी रजुली ऐसी जनमी रै छ (मालूसाही द्वितीय श्रुति)

(दो ही दिन में वह छोकरी चार दिन के समान हो गई है। नामकरण के समय छः मास की हो गई, महीनों में ही वर्षों के समान वृद्धि पा गई, चैत्र मास के कैरूवा के समान बढ़ने लगी हैं भादौ की भंगाल जैसी उगती गई। पूस मास के पालक जैसी हे रजुली, राजाओं को तू मूल नक्षत्रों के समान खटक रही है। इसका सौन्दर्य राजाओं के लिए चुनौती बन गया है। इसका सामना देवतागण स्वर्गवासी होने के कारण नहीं कर सकते।)

आपने पढ़ा कि किस प्रकार भावपक्षीय सुंदरता को गाथाओं में वर्णित किया जा सकता है। जीवन के मूल भाव को नेपथ्य में रखते हुए गाथाएं अपनी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अनुसार चलती हैं।

वैदिक कालीन अभिव्यक्ति से लेकर आज तक जितने भी लोक सम्मत विधाओं का निर्माण हुआ है। उनमें प्रकृति एक सार्थक आलंबन के रूप में वर्णित रही है। यहां हम कुछ लोकगाथाओं के अंशों में प्रकृति चित्रण का अध्ययन करेंगे।

मौलिक आलंबन के रूप में प्रकृति चित्रणः राजुला मालूसाही गाथा में जब गंगा के गर्भ से राजुला का प्रादुर्भाव हुआ, तब तत्कालीन हिमालयी पर्वत प्रदेश की छटा निखर उठी। आप उस छटा की मनोरम झांकी प्रस्तुत अंश में देख सकते है-

हिमाल बड़ो फटो री री री। पंचाचूली चाँदी का जस चमकदार राउँ

नंदा देवी की गुड़ी.टी री री और ताली खिसकन लागी रै

गोरिगंगा पाणी बड़ौ री री री उज्यालो चमकीलो है रौ

(मालूसाही प्रथम श्रृति)

अर्थात हिमालय के बादल फट गए हैं और पंचाचूली चांदी के समान चमक रहा है। नंदादेवी के घूंघट को और नीचे खिसका रहा है। गौरी गंगा का पानी बढ़कर साफ और चमकीला हो गया है।

गाथाकार ने एक अन्य स्थान पर गंगा के तट का प्रातःकालीन चित्र उभारते हुए कहा है-

चार पहर रात अब, खतम है गई हो

गंगा का सुसाट नरैण आब बड़ि गयो हो

करकर ठंडी हवा ऊँछै सरसर जाड़ो लागो हो

(हरू सैम की गाथा)

अर्थ रात्रि के चार पहर बीत चुके हैं। हे नारायण गंगा के पानी की कलकल ध्वनि अब बढ़ गई है। करकर करती हुई हवा आकर ठंडे का आभास करा रही है अर्थात जाड़ा होने लगा है।

एक गाथा में छिपलाकोट जंगल की नैसर्गिक सुषमा के बारे में गाथाकार ने कहा है-

समुणी बीचा माजी, फल फूल बोट बीस अमिर्त दाख दाड़िम आम पापली चौरा कत्यूर शिलिंग कुन्जूफूलो और फूली प्योली

अर्थात सामने के बाग में फल और फूल के पेड़ है।

अमृत, विष दाख तथा दाड़िम के फल हैं। आम तथा पीपल के पेड़ों में चबूतरे का निर्माण हुआ है। कनेर शिलिंग कुञ्ज तथा प्योली के फूल खिले हैं।

प्रकृति का उद्दीपक रूपः प्रकृति के उद्दीपक रूपों का वर्णन भी गाथाओं में हुआ हैं। नायक नायिका की मन स्थिति के अनुसार वेदना में उसे प्रकृति असुंदर लगती है तथा हर्षित क्षणों में वही प्रकृति नायक या नायिका के लिए वरदान सी साबित हो जाती है-

हिमाल की हवा क्या मीठी लगी रे

के धूरा हो राजू तेरि दीठि लागी रे

राजू का शोर या हवा ले मीलि रे

शौक्यूड़ा बगीचा मेरि राजू खिलि रे।

अर्थात हिमालय की हवा में कितनी मीठी सुवास है। राजुला तेरी दृष्टि किस दिशा में लग रही हैं। क्या तू मेरे आगमन को नहीं देख रही हैं। राजुला के श्वास में यह घुली है इसी के द्वारा मिठास का अनुभव होता है। भोट प्रदेश में बगीचे में मेरी रजुली खिली है।‘

विरहिणी राजुला की विरह व्यथा में स्थानीय पक्षी फाख्ता (घुघुत) का वर्णन आया है। राजुली के विरहाकुल मनोदशा पर उसे घुघुत की बोली भी असहनीय कष्ट दे रही है।

ए नी बासो घुघुती को रूमझूम मेरी ईज सुणली को रूमझूम काटी खांछ भागी गाड़ को सुसाट छेड़ी खांछे भागी तेरी वाणी

(मालूसाही द्वितीय श्रृति)

(हे घुघुत! तुम घुर्र घुर्र कर आवाज मत निकालो कही तेरी मर्मस्पशी आवाज मेरी माँ सुन लेगी हे भाग्यवान पक्षी ! नदी के बहने की ध्वनि को सुनकर मुझे बहुत कष्ट होता है। तेरी दुःखभरी वाणी मुझे काट खाने को आती है।)

अलंकारों के रूप में प्रकृति चित्रण- कुमाउनी लोकगाथाओं में प्रस्तुत तथा अप्रस्तुत विधान अलंकारों के माध्यम से प्रकट होता है। कहीं उपमाएं दी जाती है तो कही रूपक

अतिश्योक्ति के रूप में वस्तुस्थिति का चित्रण किया जाता है। राजुला मालूसाही गाथा में अलंकृत शैली का प्रयोग द्रष्टव्य है-

कांस जसी बूड़ी गंगा रीरि रीरि कफुवा जसी फूली रै कंठकारी जसी गंगा री री, सब दुःख भूली गै

(श्वेत जलधार वाली गंगा कफुवे की जैसी फूली है

ऐसा लगता है कि उसके गले से अनेक ग्रंथियां फूटकर दुखों को भुला रहे हैं।

इन गाथाओं में गाथाकार ने आशीर्वाद लेने के अर्थ में भी अलंकारों का प्रयोग किया है

यथा- दवा जसी जड़ी पाती जसी पीली

बांसा जसी घाड़ी जुग जुग रौओ

(अर्थात दूब की जैसी जड़ पत्तियों जैसी वृद्धि तथा बांस के झुरमुट जैसा सघन विस्तार तुम्हारे जीवन में हो, यही कामना की जाती है)

प्रकृति के उपादानों का वर्णनः- लोकगाथाओं में प्रकृति के नाना रूपों का वर्णन हुआ है। ध्यान से देखा जाए तो समग्र प्रकृति ही गाथाओं के मूल में अवस्थित है। नदी, नाले पशु पक्षी, पेड़ पौधें किसी न किसी उपादान के रूप में इन गाथाओं में वर्णित हैं। राजुला मालूसाही गाथा में जब भोट प्रदेश से राजुली बैराठ की तरफ प्रस्थान करती है, तब मार्ग में पड़ने वाली सदानीरा नदियों से वह संवाद करती हैं। सरयू के पावन संगम बागेश्वर में पहुंचकर वह बागनाथ जी का आशीर्वाद ग्रहण करती है और मार्ग में पड़ने वाली अन्य सहायक नदियों से भी अपने अमर सुहाग का वरदान मांगती है। चूंकि लोकगाथाओं का प्रणयन लोकमानस की भावभूमि पर हुआ है। अतः इन गाथाओं में मनुष्य की प्रकृति पौराणिक सन्दर्भों को रूपायित करती प्रतीत होती है। नागगाथा का उदाहरण दर्शनीय है-

अधराती हई रैछ, अन्यारी रात छ

अन्यारी जमुना को पानी, अन्यारी छ ताल

(अर्थात आधी रात का समय है घुप्प अंधेरा है, यमुना का पानी भी अंधियाला या काला है इसी कारण ताल भी अंधेरे से घिरा है।)

आप देख सकते है कि कुमाऊँ में बुरांश प्योली आदि के पुष्पों को सुंदरता के उपादानों के रूप में गाथाकारों ने प्रस्तुत किया है।

कतिपय गाथाओं में आप पायेंगे कि कफुवा न्यौली, घुघुता शेर आदि वन्य पशु पक्षियों को भी आलंबन के रूप में ग्रहण किया गया है। प्रकृति के रूपों को गाथाकार ने सरस ढंग से प्रस्तुत किया है इससे कुमाऊँ प्रदेश की सुरम्य प्राकृतिक सुदंरता का बोध आसानी से हो जाता है।

कुमाउनी लोकगाथाओं में निहित स्थानीय तत्व

स्थानीय तत्व को अंग्रेजी भाषा में local colour कहा जाता है। स्थान विशेष की विशेषता के कारण लोकसाहित्य की प्रत्येक विधा प्रभावशाली एवं रोचक होती है। किसी भी सर्पक का अपना एक लोक होता है। वह उस निजी लोक का निर्माता भी स्वयं होता है। लोक की प्रत्येक क्रिया अथवा प्रतिक्रिया सर्पक को प्रभावित करती है। इस लोकरंजक सृजन में कवि अपनी

अनुभूति को शब्द देते समय स्थान विशेष की वस्तुओं भावनाओं तथा परम्पराओं का बहुत ध्यान रखता है। यदि वह ध्यान न भी रखे तो भी उसकी काव्य में स्वतः समाविष्ट हो जाती है।

कुमाऊँ की लोकगाथाओं में आप समझ सकेंगे कि स्थान विशेष के लोक पारंपरिक आचार व्यवहार प्रकृतिपरक चीजें तथा प्रतिमानों की समिष्ट बड़ी सुरूचि के साथ गाथाकार ने गढ़ी हैं। डॉ. उर्वादत्त उपाध्याय के शब्दों में-अतः कुमाऊँ प्रदेश के लोकगाथाओं में यहाँ का पूरा लोकजीवन अपनी स्थानीय संस्कृति सहित साकार तथा सजीव हो उठा है। कवि ने अपनी स्थानीय प्रकृति पशु, पक्षी तथा लोकजीवन के दैनिक व्यापारों का पूरा चित्रण किया है। यद्यपि

स्थानीय तत्व का यह रंग गाथाओं में सर्वत्र बिखरा है। कोई भी गाथा पढ़ी या सुनी जाए स्वतः ही उसमें यहाँ का स्थानीय रंग अपनी आभा लिए निखरने लगेगा।

पशु पक्षियों के वर्णन तथा उनकी गाथाओं से संबंधता को देखने से पता चलता है कि कुमाऊँ के धुर जंगलों में कोयल कफु का बोलना, घुघुत (फाख्ते) की घुर्र-घुर्र तथा न्यौली की मीठी सुरीली तान गाथाओं का प्रमुख आधार बने हैं। हिमालय की पर्वत श्रृंखलाओं को भी गाथाकारों ने गाया के माध्यम से वर्णित किया है। नंदा देवी, पंचाचूली, छिपलाकेदार, त्रिशूली तथा अनेक ग्लेशियरों का वर्णन भी यत्र-तत्र दिखाई देता है। प्राकृतिक सदानीरा सरिताओं में प्रमुख काली गंगा, गौरी गंगा, सरयू रामगंगा के माध्यम

से कुमाऊँ क्षेत्र की पतित पावनी नायिकाओं के चरित्र की उदात प्रभा का उद्घाटन किया गया हैं कुमाऊँ के प्रसिद्ध शिवमंदिरों जागेश्वर धाम का वर्णन भी गाथा में इस प्रकार हुआ है-

जागेश्वर धुरा बुरूशि फुली रै

मौली राई बाँजा फुली राई छ प्योली

(अर्थात जागेश्वर के जंगलों में बुरांश को पुष्प खिले हैं, बांज के वृक्ष ने श्याम सी छवि धारण की है तथा पीले-पीले प्यूली के फूल खिल रहे है)

कहीं बुरूश नाम प्रसिद्ध पुष्प का वर्णन है, तो कही चैत्र मास में फूलने वाली पीलाभ प्यूंली से नायिका के रूप सौन्दर्य को अभिव्यक्त किया जाता है। कहीं स्थानीय ताल पोखरों का वर्णन भी गाथाओं में आया है। कुमाऊँ में ग्रामीण क्षेत्रों में कम पानी वाले क्षेत्रों में तालाब से बनाए जाते हैं। गर्मियों में इन तालों में भैसों को स्नान कराया जाता है। इन पोखरों को भैसीखाल या भैंसी पोखर के नाम से भी जाना जाता है। स्थानों के पौराणिक नामों का समावेश भी गाथाओं में हुआ है। भोटांतिक क्षेत्र को भोट बागेश्वर का क्षेत्र दानपुर तथा कत्यूर तथा द्वाराहाट का क्षेत्र बैराठ के रूप में गाथाकार ने वर्णित किया है। इसके अतिरिक्त जौलजीवी मेला, उत्तरायणी मेला, बग्वाल का वर्णन भी मिलता है। स्थानीय वस्त्राभूषण जिनमें बुलांकी गले की जंजीर, कानों के झुमके, पैरों के झांवर, तथा झर हाथों की धागुली, नाक की नथुली दस पाट का घाघरा, मखमली अंगिया, धोती प्रमुख हैं, का भी समावेश लगभग स्थानीय गाथाओं में सभी में हुआ है। इस प्रकार आप समझ जाएंगे कि कुमाऊँ के स्थानीय मेले सांस्कृतिक तथा भौगोलिक परंपरा के सभी सूत्र गाथाओं के विशाल कथानक के आधार स्तंभ हैं।

जागर

जागर देवभूमि उत्तराखंड के दोनों मंडलों में गाए जाने वाला एक लोकगीत है और पौराणिक धर्म व पूर्वजों के समय से चली आ रही यह पूजा जिसके एक रूप को जागर भी कहते हैं जागर यानी एक तरीका जिसकी सहायता से हम देवी देवताओं के अनिष्टकारी शक्ति को मनौती के लिए उन देवी देवताओं का आवाहन करने के लिए जागर लगाई जाती है

जब देवी- देवताओ का आवहन किया जाता है तो स्थानिय देवी देवताओ से निवेदन करते है कि रोग -व्यार्धि से मुक्ति और अनिष्ट से रक्षा व सुख शांति हेतु तथा संकट आने पर हमारी रक्षा करे और हमे आगे का रास्ता दिखाए और हमें न्याय मिल सके

जागर का इतिहास

जागर' गाथाएँ : कत्यूरी सूर्यवंशी इतिहास का तृतीय स्रोत कुमाऊँ में प्रचलित कातियुर राजाओं की 'जागर' गाथाएँ भी हैं। इनमें कहा गया है कि, प्रारम्भ में कार्तिकेपुर (कत्यूरी) सत्ता का केन्द्र उत्तरी गढ़वाल में जोशीमठ था। जोशीमठ के 'कंतापुरी राजवंश के राजा आसन्तिदेव ने जोशीमठ से कत्यूर में राजधानी परिवर्तित की। इन गाथाओं से धामदेव तथा ब्रह्मदेव समकालीन विदित होते हैं। इनसे विदित होता है कि कत्यूरी ब्रह्मदेव (बीरमदेव) ने चम्पावती नरेश विक्रमचन्द को परास्त किया था। इन गाथाओं में पाली-पछाऊँ शाखा ('आल') का एक अन्य क्रम प्राप्त होता है :

1. इलणदेव,
2. तिलणदेव,
3. अमरदेव,
4. गभरदेव,
5. नारंगदेव,
6. सुजानदेव,
7. सारंगदेव,
8. सारंगदेव के दो पुत्र–उत्तमदेव तथा बिरमदेव।

जियाराणी के 'जागर' में जियाराणी के पुत्र धामदेव तथा तुर्क सुलतान के युद्ध का वर्णन है। एक गाथा में कहा गया है कि वैराठ का राजा मालूशाही वीरदेव की अधीनता स्वीकार करता था। परन्तु तत्कालीन इतिहास के लिए मौखिक रूप में चली आ रही 'जागर' गाथाओं पर अधिक विश्वास नहीं किया जा सकता है। ये जागर गाथाएँ आसन्तिदेव के अन्तिम तीन-चार वंशजों पर ही केन्द्रित हैं। पुनः, कभी-कभी वे परस्पर विरोधी गाथा प्रस्तुत करते हैं।

तन्त्र-मन्त्र तथा नाथपंथी साहित्य की कुछ पाण्डुलिपियों में कातियुरों के अन्तिम शासकों तथा नाथपंथी गुरुओं के प्रभाव का उखेख मिलता है। इन थियों में 'गुरुपादुका', 'वैद्यमनोत्सव', 'नारसिंह जाप', आदि का उखेख किया जा सकता है। किन्तु 'जागरों' की भाँति, ये पोथियाँ भी अधिक पुरानी नहीं हैं, और इनमें भी कातियुर राजवंश के कुछ-एक राजाओं का ही नाम मिलता है। कातियुर इतिहास के स्रोत के रूप में उक्त वर्णित सामग्री की समीक्षा करें

जागर क्या है...?

जागर एक प्रकार का देव भूमि उत्तराखंड में गाया जाने वाला बहुत ही महत्व पूण लोक गीत है या कहे की पूजा जिसकी सहायता से हम अपने देवी -देवताओ को याद कर सके या उनका आव्हान कर उनसे न्याय प्राप्त कर सके

जागर का अर्थ

जागर जिसका अर्थ है जागना या जगाना या कहे कि देवी- देवताओ का आव्हान कर उन्हें अपने पास बुलाने के लिए निवेदन करना पड़ता है और लोगो का कहना यह भी है कि ये एक खास प्रकार की तपस्या है

जागर meaning in इंग्लिश = Divine call (ईश्वरीय पुकार)

जागर mean in hindi = जागना और जगाना व देवी देवताओं का आवाहन करना

जागर शब्द कहा से आया.......?

जागर शब्द। ये संस्कृत का शब्द है जोकि कालिदास के रंधुश में रात्रिंनागहरो के दिवाशयः 9 /35 और महाभारत के पर्व प्रसंग में भी जागर शब्द का जिक्र आया है और रामायण जैसे महा काव्यों में भी देवी देवता यह गीत गाते थे और जिस से भगवान का आव्हन कर कारनामों का वर्णन होता है

जागर का विवरण

जागर गीत जागर का एक महत्वपूर्ण अंग होता है जिस से जगरी गान गाकर देवी -देवताओ का आव्हन व उदबोधन तथा अवतरण के लिए उनका गुणगान गाये जाते है इसमें जगरी अपने भाषा के माध्यम से विनती करता है इसमें देवी देवता की विशेष जीवनी से संबंधी काहनियो व महत्वपूण तथ्थों एवं जगारी के द्वारा जोड़े जाने वाले अन्याय प्रक्षेप

का एक अद्भुद व संपुटीकरण होती है जो जगरी अपने कल्पना की शक्ति के आधार पर अलग अलग रूप में धारण करते रहते है इस लिए जागर गाथा में देवी -देवताओ से संबंध गाथा के अनेक कथानत्व होते है और पाए जाते है

जागर लगाते समय जगरी के साथ दो या चार भगार या हयोवर इनके साथ जागर को गाते समय सहयता करते है और कुमाऊ मंडल में जागर गाथा एक दूसरे या दो- दो लोगो के दाल में विभक्त होकर उनमे फ़ाग के रूप में भी गाया जाता है जिसे एक को फगार व दूसरे को भगार (जागर में जागर की गाथा को गाने वाला प्रमुख गायक के साथ गाने वाले सहायक को भगार कहते है या कहलाता है

जागर में जागर की कहानी को बताने वाले तथा इस जागर को करवाने वाले तीन मुख्य लोग होते है तथा जागर में इन प्रमुख भूमिका का परिचित होना आवश्य्क है

1 जगरिया

2 डंगरिया

3 स्योका -स्योनाइ

जगरिया

जागर का एक महत्वपूण अंग है जगरिया जो कि देवताओ के अद्रृश्य शक्ति व अद्रृश्य आत्माओ को जाग्रत करने का काम करते है और देवताओ को जाग्रत समय जगरी द्वारा देवी -देवताओ की जीवनी व जीवन से जुड़े महत्वपूर्ण घटनाओ व मानवीयो गुणो का लोक वाद्य यंत्रो के साथ एक प्रमुख व विशेष गायक शैली को देवी देवताओ के सामने रखकर जाग्रत करते है व डंगरी के शरीर में देवी देवताओ को अवतार करते है यह के स्थानी भाषा में जगरी को दास व गुरु भी कहते है

डँगरिया

यानि वह व्यक्ति जिसके शरीर में देवी -देवता अवतार होते है या उनके शरीर में प्रकट होते है चाहे वो स्त्री व पुरुष दोनों के माध्यमो में प्रकट होते है प्रकट होने के बाद या अवतार होने के बात उस यक्ति के पास देवी देवताओ के समान शक्ति आ जाते है और उनका निर्णय फलदायी माना जाता है और परेशान यक्ति को उसकी समस्या का हल मिल जाता है डँगरिया के लिए अनेक शब्द प्रयोग किये जाते है जैसे की

स्योनाइ

यानि जिस यक्ति के घर में जागर व बैसी का आयोजना किया जाता है उस यक्ति के घर में सबसे बड़े व बुजुर्ग और उनकी पत्नी को स्योकार -स्योनाइ के नाम से बुलाया जाता है

जगर और बैसी लगते समय जब देवी -देवताओ अवतार होते है तो उस समय या उस परिवार में जो कोई भी दुःखी हो व समस्याग्रस्त यक्ति अपनी शंका का समाधान व दुःख निवार्ण और समस्या का हल पाने के लिए अपने घर से कुछ चावल देवी -देवताओ के थाली में रखते है उस चावल 'दाणी ' के अपने हाथ में लेकर देवी -देवता उस दुखी यक्ति को दुःख का निवार्ण अपने भाषा(शब्द) में बताते है इस लिए अवतारित देवी -देवता स्योकार -स्योनाइ शब्द का इस्तमाल करते है

जागर देव भूमि उत्तराखंड की अभिन्न सांस्कृतिक अंग है और इस पूजा को कुमाऊ मे जागर के नाम से जाना जाता तथा गढ़वाल मे धडियाला के नाम से जाना जाता है और निम्न नाम से भी जाना जाता है जैसे -:

1 जागर

2 बैसी

3 रख्याल

4 जागा और आदि

जागर को दो रूप मे आयोजन किया जाता है

1 बाहरी जागर

2 भीतरी जागर

बाहरी जागर यह जागर आमतौर पर बहुत विस्तार पूर्वक होता है इस बाहरी जागर मे डंगरियो की संख्या पांच या पांच से अधिक होती है और इस बाहरी जागर की बात करे तो इस की समय अवधी एक दिन से लेकर तीन दिन, पांच दिन, साथ दिन, ग्यारह दिन, बाईस दिन की बैसी से लेकर यह जागर 3 महीने और 6 महीने तक चलती है जागर को लगाने से पहले देवी देवताओं का अवतण करने वाले को आमंत्रित निमंत्रण दिया जाता है जैसे कि जगरिया,डंगरी,पस्वा और समस्त क्षेत्र के लोगों को भी आमंत्रित किया जाता

है जागर लगाने के लिए एक मुख्य स्थान पर (अग्नि का कुंड) यानी एक धुणी लगाई जाती है और उस धुणी की सुबह शाम धूपबत्ती व पूजा किया जाता है धुणी के सामने की ओर डंगरीयों के लिए एक मुख्य स्थान लगाया जाता है और इसी स्थान के सामने की ओर जिन्हें हम जगरी या 'दास ' बोलते हैं यानी गाथा गायक के लिए एक स्थान लगाया जाता है और अन्य स्थानों पर क्षेत्र के लोग बैठते है।

2 भीतरी जागर

जिसके नाम से ही पता चल रहा है की ये जागर घर के अन्दर लगती है ये जागर बाहरी जागर से भिन्न तथा अधिक विस्तारित नहीं होता है और ये जागर काफी छोटी होती है और इस जागर की विधि विधान की बात करें तो काफी छोटी और ना के बराबर होती है और इस जागर की समय अवधि के बारे में जाने एक या दो दिन से अधिक नहीं होती है इस भीतरी जागर को भवल नाथ जज्यू के नाम से भी जाना जाता है सबसे मुख्य बात इस जागर की वाद्य यंत्र की बात करें तो हम जागर को थाली व डमरु से ही गाया व लगाया जाता है

जागर मे तीन प्रकार के भेद होते है।

1 भूत प्रेत संबंध जागर

2 देवी देवताओं संबंध जागर

3. स्थानीय राजवंशो संबंध जागर

1. [1] भूत प्रेत संबंध जागर = जब किसी व्यक्ति के शरीर मे भूत प्रेत या देवता अवतण होते है वह यक्ति अपने अल्प मृत्यु के बारे ने या भटकती आत्मा को शांति प्राप्त करने के लिए या अपनी इच्छा को पूर्ण करने के लिए पुरखो के पास भेजा जाता है तथा उस यक्ति के अन्तिम क्रिया कर्म भी किया जाता।है इस जागर मे।

2 देवी देवताओं संबंध जागर =यानि दूसरे देवी देवता सम्बन्धी जागर लगाना जैसे कि सर्वभौमिक देवी देवताओं की उदाहरण के लिए हनुमान, काली माँ, नरसिंह , शिवपुराण, रामायण आदि और दूसरे स्थान के देवी देवता जैसे हरु हित, गंगानाथ, ग्वल , सेम गढ़ देवी आदि है और जंगलो के देवी देवता मे एडी, आचरी, परि, रमौल, धुरमल , चोमुआ, बौधाण आदि

3 स्थानीय राजवंशो संबंध जागर = ये जागर भी तीन प्रकार की होती है

1 कत्युर

2 चंद्र

3 राजवंशी जागर

जागर के वाद्य यंत्र

जागर मे प्रयोग किये जाने वाले वाधयंत्रो को चार श्रेणी मे विभक्ति किया जाता है

1 हुडकि जागर = यानि इस जागर मे गाये जाने वाला जागर की शैली हुडकि के साथ गाई जाती है और इने ख्याल भी कहते है।

2 डमरू जागर = यानि इस जागर मे गाये जाने वाली शैली डमरू के साथ गाई जाती है।

3 गडेली जागर इस जागर की वाद्य शैली थोड़ी सी अलग है इस जागर मे तांबे की थाली को बजाकर जाकर जागर किया जाता है।

4 मुरय जागर इस जागर की मुख्य विशेषता यह है कि पूरे साज बाज के मृदंगो के साथ गाया और बजाया जाता है और इस जागर को झाँझ शैली के साथ भी गाया जाता है।

सूर्यवंशी कत्यूरी राजवंश के गोत्र प्रवर, वंशावली आदि।

1- वंश - इक्ष्वाकु या सूर्यवंश, रघुवंश

2- राजवंश – कार्तिकेयपुर (कत्यूर)

3- गोत्र - कश्यप भारद्वाज शौनक

4- प्रवर - पंच प्रवर

5- वेद - यजुर्वेद, उपवेद – धनुर्वेद

6- ध्वज - गोरक्ष

7- चिन्ह - नादिया (नंदी)

8- वृक्ष - वट

9- पक्षी - मयूर

10- मूल पुरुष - शालिवाहन देव

11- पदवी - महाराजाधिराज परम भट्टारक गिरिराज चक्र चूड़ामणि देव

12- कुलदेवता - शिव व कार्तिकेय स्वामी भगवान

13- कुलदेवी के रूप - कोटभ्रामरी, नंदा- सुनंदा, मां दुर्गा, महाकाली ,दीप्तज्वालेश्वरी , झाली माली , आगनेरी , माँ मानिला देवी माँ जिया |

14- वाद्मय यंत्र - 9 मण का नगाणा आदि

15- कूल गुरु - बड़ूशजैपाल (अंगिरस गोत्रीय जोशी)

16- ढोक - जयदेव , जय जिया

17- पंथ - नाथपंथी

18- संरक्षण - वैदिक यज्ञ व मंत्र एवं मंदिर।

19- निर्माण - शिवालय , शक्ति मठ, सूर्य मंदिर आदि

20- निर्माण शैली पहचान - नागर शैली, शीर्ष भाग (ऊपरी सिरा) आमलक वर्गाकार , चक्राकार

21- आदर्श वाक्य - जय श्री 9 लाख कत्यूरी देवों की जय हो

22- धर्म ध्वज , संप्रदाय - शैव शाकत , वैष्णव , सौर

23- राजभाषा - संस्कृत

24- बोली - पाली

25- सूर्यवंशी ध्वजा - श्वेत एवं लाल श्वेत ध्वजा पर लाल त्रिशूल लाल ध्वजा पर श्वेत त्रिशूल के साथ नंदी (नरंकार का धोतक व गौ वंश उपाक्षक)

26- मूल निकास - अयोध्या नगरी (राजा राम वंशज)

27- नाथ पंथ के सिद्धि - नरसिंह देव ९ लाख कंथापुरी महाराज

28- मंत्र - ब्रह्म गायत्री

29- जनेऊ - 6 पलली छ: परिमल

30- नदी --- सरयू (अयोध्या)

31- मानस खंड केदारखंड नदी *जलधारा* -- विष्णु गंगा (अलकनंदा), राम गंगा (धामदेव घाट, वृद्ध केदार) चित्र शीला (गार्गी नदी)

32- कत्यूरी धर्म परायण राजाओं का प्रथम आगमन -- जोशीमठ (प्रथम राजधानी)

33- द्वितीय राजधानी - कार्तिकेय पुर वैजनाथ

34- अंतिम राजधानी - सैणमानुर (मानुरदेश) मानिला पालीपछाऊ भूभाग, अस्कोट, डोटी

35- वंशज और उपनाम- अस्कोट – पाल , रैका शाही, रैका मल, चौकोट, सल्ट के मनराल व रजवार, खाती, कर्की, कत्यूरी रावत, सिंह।

36- शाखाएं/ ठिकाना – अस्कोट, डोटी, पॉली पछाऊ, फलदाकोट, महसों, अमोड़ा, हरहा, लखनपुर, सुई, सोर, कुमु, गंगोली, द्वाराहाट, ख़ैरीगढ़।

37- लोकदेवता – जिया रानी, गोल्यु देवता

कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो की वंशावली।

1. आदित्य नारायण
2. ब्रह्मा
3. मरीचि
4. कश्यप
5. विवस्वान् (वैवस्वत सूर्य) से सूर्यवंश का आरम्भ होता है।
6. मनु
7. इक्ष्वाकु (ये सूर्यवंशीयो में सबसे प्रतापी राजा हुए इसलिए इसे इक्ष्वाकु वंश से भी जाना जाता हैं)
8. विकुक्षी (शशाद)
9. पुरंजय (ककुत्स्थ)
10. अनेना
11. पृथु
12. विश्वरन्धि (विश्वमश्व/विश्ववसु/विस्तारश्व)
13. चन्द्र (अदि/आर्दः)
14. युवनाश्व (प्रथम)

15. शावस्त (श्रावस्त)
16. बृहदेश्वर
17. कुवल्याश्व
18. दृढाश्व
19. हर्यश्व
20. निकुंभ
21. बर्हनाश्व (बर्हनाश्व/संहताश्व)
22. कृशाश्व
23. सेनजित (सुदयुम्न/प्रसेनजित)
24. युवनाश्व-द्वितीय
25. मांधाता (त्रसदस्यु)
26. पुरुकुत्स।
27. त्रसदस्य-द्वितीय
28. अनरण्य (समुत्)
29. हर्यश्व (सुधन्वा)
30. अरुण (त्रिधन्वा)
31. त्रिबंधन
32. सत्यव्रत (त्रिशंकु)
33. हरिश्चन्द्र
34. रोहित
35. हरित
36. चम्प (चंप)
37. सुदेव

38. विजय

39. भरुक (रुरूक)

40. वृक

41. बाहुक (बाहु)

42. सगर

43. 43 असमंजस (पंचजन)

44. अशुमान

45. दलीप

46. भगीरथ

47. श्रुत

48. नाभ (नाभाग / अम्बरीष)

49. सिंधुद्वीप

50. अयुतायुत/अयुताजित्

51. ऋतुपर्ण

52. सर्वकर्म

53. सुदास

54. मित्रसह (कल्माषपाद/सौदास)

55. अश्मक (सर्वकर्म/अनरण्य)

56. मूलक (निघ्न)

57. दशरथ-प्रथम (अनमित्र)

58. दुलिदुह

59. विश्वसह

60. खट्वांग

61. दीर्घबाहु (दिलीप)
62. रघु (रघुवंश अभिषेक)
63. अज
64. दशरथ द्वितीय
65. राम
66. कुश
67. अतिथि
68. निषध
69. नल
70. पुण्डरीक
71. क्षेमधन्वा
72. देवनायक
73. अहीन (अहिनगु)
74. पारियात्र (सुधन्वा)
75. बल (बलस्थल/अनल)
76. स्थल (उक्थ)
77. वज्रनाभ-प्रथम
78. संगण (खंगण/शंख)
79. विधृति
80. हिरण्यनाभ
81. पुष्य
82. ध्रुवसिद्धि (ध्रुवसंधि/अर्थसिद्धि)
83. सुदर्शन

84. अग्निवर्ण

85. शीघ्र

86. मरुत (मरु)

87. प्रसुश्रुत

88. संघि

89. मर्षण (अमर्षण)

90. महस्वान

91. विश्वसाहह्व

92. प्रसेनजित-प्रश्थम

93. तक्षक

94. बृहद्दल

95. बृहद्रण (बृहदण)

96. उरुक्रिय

97. वत्सवृद्ध

98. प्रतिव्योम

99. मान

100. दिवाक (इनकी पदवी ‘वाहिनी पतिः थी)

101. सहदेव

102. बृहदश्व

103. भानुमान

104. प्रतीकाश्व

105. सुप्रतीक

106. मरुदेव

107. सुनक्षत्र
108. पुष्कर
109. अंतरिक्ष
110. सुतपा
111. मित्रजित (अमित्रजित)
112. बृहद्वाज (बृहदाज)
113. बरही
114. कृतंजय
115. रणंजय
116. संजय
117. शाक्य
118. शुद्धोदन
119. लांगल
120. प्रसेनजित-द्वितीय
121. क्षुद्रक
122. णक
123. सुरथ
124. सुमित्र (राजा सुमित्र के बड़े बेटे राजा शालीवाहन अयोध्या से उत्तराखण्ड आए और कार्तिकेयपुर राजवंश की स्थापना करी।)
125. शालिवाहन देव (मूलपुरुष)
126. संजय देव
127. कुमार देव
128. हरित्रयदेव

129. ब्रह्मदेव

130. शंख देव

131. वज्रदेव

132. वृणजयदेव

133. विक्रमजीत देव

134. धर्मपाल देव

135. सिंधु देव

136. सारंगधर देव

137. नीलपाल देव

138. भोजराज देव

139. विनयपाल देव

140. भुजेंद्र देव

141. समर्शी देव

142. अशाल देव

143. अशोक देव

144. सारंग देव

145. नागजवासी देव

146. कामजय देव

147. शालिनकुल देव

148. गणपति पृथ्वीधर देव

149. जयसिंह देव

150. शंखाचार देव

151. सोमेश्वर या शनेश्वरदेव

152. .प्रसिद्ध देव

153. विद्धिराज देव

154. पृथ्वीश्वकर देव

155. बालक या बालक देव

156. असन्ती देव

157. बसंती देव

158. खर्पर देव

159. अभिराज देव

160. त्रिभुवनराज देव

161. निम्बर्ता देव

162. इष्टांगदेव

163. ललितासुर देव

164. भू देव

165. सलोनादित्य

166. इच्छा देव

167. देशत देव

168. पद्माट देव

169. कटारमल देव

170. सत्य देव या सैन देव

171. सिंधु देव

172. किनदेव या किनादेव

173. रणकिन देव

174. निलाराय देव

175. वज्रबाहु देव
176. कार्य सिद्धि देव
177. गौरांग देव (इनके पुत्र दो पुत्र थे शांडिल्य देव व श्यामल देव, श्यामल देव से आगे पाली पछाऊ की वंशावली चली।
178. सांडिल्य देव
179. हातिनराज देव
180. तिलंगराजदेव
181. उदकशिलादेव
182. प्रीतमदेव
183. धामदेव
184. ब्रह्मदेव
185. त्रिलोकपाल देव (इनके एक पुत्र निरंजनमल देव से डोटी की वंशावली आरम्भ होती है।)
186. अभय पाल देव (कत्यूर से आकर 1279 में अस्कोट राज की स्थापना करी)

अभय पाल के दो पुत्र अलखदेव और तिलकदेव उत्तरप्रदेश के अवध क्षेत्र बस्ती जिले में आए और अलखपाल देव ने महुली/महसों राज की स्थापना की और तिलकदेव ने अमोड़ा राज की स्थापना करी।।

राजा धीराज पद्मवत देव के पांडुकेश शिलालेख में कार्तिकेयपूर कत्यूरी सूर्यवंशीयों के पूर्वज मांधाता, दिलीप भगीरथ, पृथु आदि का वर्णन मिलता है।

श्रीमकर्तिकेरायपुरात सर्वसुरासुर मुकुट कोटि सत्रिविष्टनिकट माणिक्य किरण विच्छूरित नखमौशोखतिमिरपतल प्रभाव दानिताशय समयाक्ति महीयसी भगवतश्चंद्रनेश्वरस्य चरणकमल रज: पवित्र निज-मिव तनुमुनाजितोजिता नेकरी-पुचक्र प्रतिष्ठित प्रताप भास्करभासित भुवनाभोग विभव पावक शिखावली विलीन सकल कलिकाल समुध्दभूतोवरवर तपोबदात् देहः शक्तित्रय प्रभाव अम्बु हितहितहेतिर दानवमसत्यशोयं शत्रुया गाधिक्षमाद्यपरिमित गुणगुणाकलित सागर दिलीप मांधात्री-बन्धुमार भागीरथ प्रभूति कृतयुग भूपाल-चरितसागर त्रैलोक्यानन्दजनो नन्दादेवी चरणकमलशास्त्रीतः समधिगताभिमतप्रसाद द्योतित निखिलभुवनावित्यः बोसलो-नादित्यः तस्य पुवस तत्पादानुध्यातो राशिमहादेवी सिधावली देवी तस्यामुत्पश्चः परममहेश्वरः परमब्रह्मण्यो परमभट्टारक महाराजाधिराज भगवान श्रीमविन्तदेवः त्सस्य पुवस तत्पावनुष्यातो राशि महादेवी श्रीसिंधुदेवी तस्यामुत्पन्नः परममहेश्वरः परमब्रह्मण्यो दीनाना पकृपातुर शरणगत वत्सलः प्रख्योदिच्यप्रति व्यदक्षिणात्य-द्विज्वर मैनानाम् बयात हेमदान (1मृता) दितकरः समग्रातिचक्रप्रमर्दनः कालीलुष्मातंगसूदनः कृतयुगधर्मावतारः परमभट्टारक महाराजाधिराजपरमेश्वर श्रीमद शतदेवः तस्य पुत्रस तत्पादनुष्यतो राशि महादेवी श्रीपद्मल्लदेवी तस्यामुत्यन्नः परममहेश्वरः परमब्रह्मण्यः परमभट्टारक महाराजाधिराज भगवान श्रीसत्पघटदेवः कुँली।

हिंदी अनुवाद:

श्रीमान कर्तिकेरायपुर के निवासी, जिनके चरणों में सभी देवता और असुर अपने मुकुटों की कोटियों के साथ नतमस्तक हैं, जिनके नखों की माणिक्य-जैसी किरणें अंधकार को नष्ट करती हैं, जिनका प्रभाव असीम है और जो दान के माध्यम से सभी दिशाओं को प्रकाशित करते हैं, वे परम शक्तिशाली भगवान चंद्रनेश्वर के चरणकमलों का पवित्र रज (धूल) अपने शरीर पर धारण करते हैं। वे मुनियों द्वारा पूजित, शत्रुओं को परास्त करने

वाले, सूर्य के समान तेजस्वी, विश्व को आलोकित करने वाले, और कलियुग के दोषों को नष्ट करने वाले हैं। उनके तप और शक्ति के प्रभाव से दानवों का नाश होता है, और वे असीम गुणों के सागर हैं, जिनका यश उनके पूर्वज दिलीप, मांधाता, और भागीरथ जैसे सत्ययुग के राजाओं के समान है। वे त्रिलोक को आनंद देने वाले, नंदादेवी के चरणकमलों की सेवा से सभी इच्छित कृपा प्राप्त करने वाले, और समस्त विश्व को प्रकाशित करने वाले हैं। उनके पुत्र, जो उनके चरणों का ध्यान करते हैं, राशि महादेवी सिधावली देवी से उत्पन्न हुए। उनसे परम महेश्वर, परम ब्राह्मण-भक्त, महाराजाधिराज भगवान श्रीमान विंतदेव उत्पन्न हुए। उनके पुत्र, जो उनके चरणों का ध्यान करते हैं, राशि महादेवी श्रीसिंधुदेवी से उत्पन्न हुए। वे परम महेश्वर, परम ब्राह्मण-भक्त, दीनजनों पर कृपा करने वाले, शरणागतों के प्रति स्नेह रखने वाले, उत्तर और दक्षिण के श्रेष्ठ ब्राह्मणों और मैनानों को स्वर्ण दान देने वाले, समस्त शत्रु-चक्र को नष्ट करने वाले, और कालीलुष्मातंग (दुष्टों) का संहार करने वाले हैं। कृतयुग के धर्म के अवतार, परम भट्टारक, महाराजाधिराज परमेश्वर श्री पद्मातदेव है।

राजा पद्मतदेव को कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो शासन की तुलना उनके पूर्वजों मांधाता आदि से की गई है व इनका शासन इंद्र के समान था व इसकी चर्चा स्वर्ग में भी होती थीं। कार्तिकेयपूर सूर्यवंशीयो पर माता नंदा देवी का आशीर्वाद है जो सूर्यवंशीयो की प्रतिभा को और बढ़ाता है। राजा पद्मतदेव के साथ साथ सूर्यवंशी सम्राट ललितसुर देव को भी उनके ताम्र पात्र में कुशल वंशी अर्थात राजा राम के पुत्र कुश का वंशज बताया गया है जो कार्तिकेपुर सूर्यवंशीयो के महान कुल की महिमा को बढ़ाने वाला हैं।

वशीभूत गोपालानिश्चलीकृत धराधरेन्द्रः परमभट्टर्कमहाराजाधि भगवान श्रीमल्ललितशूरदेवकुश्ली अस्मिन्नेव श्रीमर्तक्तिकेयपुरविषये समुपगतन–

अर्थ।

श्री महाराजाधिराज राजाओं के राजा श्रीमान् 'ललितसूरदेव' कुशवंशावतंस इसश्रीमान् कार्तिकेयपुर के मंडल में आये हुए है।

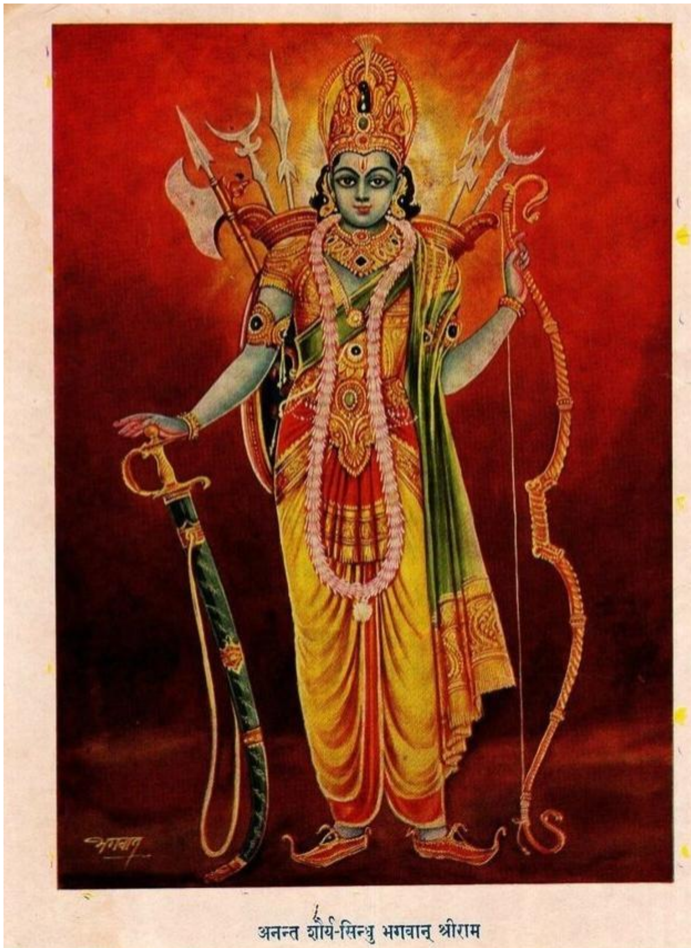

।राजा रामचन्द्र की जय।